

तमसो मा ज्योतिर्गमय

SANTINIKETAN  
VISWA BHARATI  
LIBRARY

TO

D4

V.4















# କାବ୍ୟଗ୍ରନ୍ଥ

ଚତୁର୍ଥ ଖଣ୍ଡ

প্রাপ্তিস্থান—

ইণ্ডিয়ান প্রেস—এলাহাবাদ

ইণ্ডিয়ান পাবলিশিং হাউস্

২২নং কর্ণওয়ালিস্ স্ট্রীট কলিকাতা ।

# কাব্যগ্রন্থ

শ্রীরবীন্দ্রনাথ ঠাকুর

চতুর্থ খণ্ড

প্রকাশক

ইণ্ডিয়ান প্রেস—এলাহাবাদ

১৯১৫



# সূচী

## চৈতালি

|               |     |     |    |
|---------------|-----|-----|----|
| উৎসর্গ        | ... | ... | ৩  |
| গীতহান        | ... | ... | ৫  |
| স্বপ্ন        | ..  | ... | ৭  |
| অশার সীমা     | ... | ... | ৯  |
| দেবতার বিদায় | ... | ... | ১০ |
| পুণ্যের তিসাব | .   | ... | ১১ |
| বৈরাগ্য       | .   | ... | ১২ |
| মধ্যাহ্ন      | ..  | ..  | ১৩ |
| পল্লীগ্রামে   | ... | ... | ১৫ |
| সামান্য লোক   | ... | ... | ১৬ |
| প্রভাত        | .   | ... | ১৭ |
| চন্দ্র জন্ম   | ..  | ... | ১৮ |
| খেয়া         | ... | ... | ১৯ |
| কর্ম          | ..  | ... | ২০ |
| বনে ও রাজ্যে  | ... | ..  | ২১ |
| সভ্যতার প্রতি | ... | ... | ২২ |
| বন            | ... | ..  | ২৩ |
| তপোবন         | ... | ... | ২৪ |
| প্রাচীন ভারত  | ... | ... | ২৫ |



|             |     |     |    |
|-------------|-----|-----|----|
| ঋতুসংহার    | ..  | ..  | ২৬ |
| মেঘদূত      | ... | ... | ২৭ |
| দিদি        | ... | ... | ২৮ |
| পরিচয়      | ..  | ..  | ২৯ |
| অনন্ত পথে   | ... | ..  | ৩০ |
| ক্ষণ-মিলন   | ..  | ..  | ৩১ |
| প্রেম       | ... | ..  | ৩২ |
| পুঁচু       | ... | ... | ৩৩ |
| হৃদয়-ধ্বংস | ..  | .   | ৩৪ |
| মিলনদৃশ্য   | ... | ..  | ৩৫ |
| ছইবন্ধু     | ... | ..  | ৩৬ |
| সঙ্গী       | ... | ... | ৩৭ |
| সতী         | ..  | ..  | ৩৮ |
| স্নেহদৃশ্য  | ..  | ..  | ৩৯ |
| কল্পনা      | ... | ... | ৪০ |
| পদ্মা       | ... | ..  | ৪১ |
| স্নেহগ্রাস  | ... | ..  | ৪৩ |
| বঙ্গমাতা    | ... | ... | ৪৪ |
| ছই উপমা     | ..  | ... | ৪৫ |
| পর-বেশ      | ... | ..  | ৪৫ |
| সমাপ্তি     | ... | ... | ৪৭ |
| ধরাতল       | ... | ..  | ৪৮ |
| তব ও মৌল্য  | ... | ... | ৪৯ |
| তবজ্ঞানহীন  | ... | ... | ৫০ |

|              |     |     |    |
|--------------|-----|-----|----|
| মানসী        | ... | ... | ৫০ |
| নারী         | ... | ... | ৫২ |
| প্রিয়া      | ... | ... | ৫৩ |
| ধ্যান        | ..  | ... | ৫৪ |
| মৌন          | ... | ... | ৫৫ |
| অসময়        | ... | ... | ৫৬ |
| গান          | ... | ... | ৫৭ |
| শেষকথা       | ..  | ... | ৫৯ |
| বর্ষশেষ      | ... | ... | ৬০ |
| দভয়         | ..  | ... | ৬১ |
| অনারাট্ট     | ... | ... | ৬২ |
| অজ্ঞাত বিশ্ব | ... | ... | ৬৩ |
| ভয়ের চরাশা  | ... | ... | ৬৪ |
| ভক্তের প্রতি | ..  | ... | ৬৫ |
| নদীযাত্রা    | ... | ... | ৬৬ |
| মৃত্যুনাধুরী | ... | ... | ৬৭ |
| স্মৃতি       | ... | ... | ৬৮ |
| বিলয়        | ... | ..  | ৬৯ |
| প্রথম চুম্বন | ... | ... | ৭০ |
| শেষ চুম্বন   | ... | ... | ৭১ |
| যাত্রী       | ... | .   | ৭২ |
| ভৃগু         | ... | ... | ৭৩ |
| ঐশ্বর্য্য    | ... | ... | ৭৪ |
| স্বার্থ      | ... | ... | ৭৫ |

|                 |     |     |    |
|-----------------|-----|-----|----|
| প্রেমসী         | ... | ... | ৭৬ |
| শাস্তিমত্ৰ      | ... | ... | ৭৭ |
| কালিদাসের প্রতি | ... | ... | ৭৮ |
| কুমারসম্ভবগান   | ... | ... | ৭৯ |
| মানসলোক         | ... | ... | ৮০ |
| কাব্য           | ... | ... | ৮১ |
| প্রার্থনা       | ... | ... | ৮২ |
| ইছামতী নদী      | ... | ... | ৮৪ |
| শুভ্রা          | ... | ... | ৮৫ |
| আশিষ-গ্রন্থ     | ... | ... | ৮৬ |
| বিদায়          | ... | ... | ৮৭ |

## কল্পনা

|                  |     |     |     |
|------------------|-----|-----|-----|
| ভ্রমর            | ... | ... | ৯১  |
| বর্ষানন্দ        | ... | ... | ৯৪  |
| চৌর-পঞ্চাশিকা    | ... | ... | ৯৮  |
| স্বপ্ন           | ... | ... | ১০১ |
| মদনভস্মের পূর্বে | ... | ... | ১০৪ |
| মদনভস্মের পর     | ... | ... | ১০৭ |
| মার্জনা          | ... | ... | ১০৯ |
| চৈত্ররজনী        | ... | ... | ১১১ |
| স্পর্ধা          | ... | ... | ১১৩ |
| পিয়াসী          | ... | ... | ১১৫ |
| পসারিণী          | ... | ... | ১১৮ |

|                 |     |     |     |
|-----------------|-----|-----|-----|
| ভ্রষ্ট লগ্ন     | ..  | ..  | ১১১ |
| প্রণয়-প্রশ্ন   | ... | ..  | ১২৩ |
| আশা             | ... | ... | ১২৬ |
| বঙ্গলক্ষ্মী     | ... | ... | ১২৭ |
| শরৎ             | ... | ... | ১২৯ |
| মাতার আহ্বান    | ... | ... | ১৩৩ |
| হতভাগ্যের গান   | ..  | ..  | ১৩৬ |
| জুতা আবিষ্কার   | ... | ..  | ১৪১ |
| সে আমার জননী রে | ... | ... | ১৪৭ |
| জগদীশচন্দ্র বসু | ... | ..  | ১৪৯ |
| ভিখারী          | ... | ... | ১৫১ |
| গাচনা           | ... | ... | ১৫৩ |
| বিদায়          | ... | ... | ১৫৫ |
| গীনা            | ... | ..  | ১৫৮ |
| নব বিরহ         | ... | ..  | ১৬০ |
| লজ্জিতা         | ... | ..  | ১৬১ |
| কাগ্নিক         | ..  | ... | ১৬৩ |
| মানস প্রতিমা    | ... | ... | ১৬৪ |
| সঙ্কোচ          | ... | ... | ১৬৬ |
| প্রার্থী        | ... | ... | ১৬৮ |
| সকরুণা          | ... | ..  | ১৬৯ |
| বিবাহ-মঙ্গল     | ... | ... | ১৭০ |
| ভারতলক্ষ্মী     | ... | ... | ১৭১ |
| প্রকাশ          | ... | ... | ১৭২ |

|                |     |     |     |
|----------------|-----|-----|-----|
| উন্নতি-লক্ষণ   | ... | ... | ১৭৬ |
| অশেষ           | ... | ... | ১৮৫ |
| বিদায়         | ... | ... | ১৯০ |
| বর্ষ শেষ       | ... | ... | ১৯৩ |
| ঝড়ের দিনে     | ... | ... | ২০০ |
| অসময়          | ... | ... | ২০৪ |
| বসন্ত          | ... | ... | ২০৭ |
| ভগ্ন মন্দির    | ... | ... | ২১১ |
| বৈশাখ          | ... | ... | ২১৩ |
| রাত্রি         | ... | ... | ২১৬ |
| অনবচ্ছিন্ন আমি | ... | ... | ২১৮ |
| জন্মদিনের গান  | ... | ... | ২১৯ |
| পূর্ণকাম       | ... | ... | ২২০ |
| পরিণাম         | ... | ... | ২২১ |

### ক্ষণিক।

|          |     |     |     |
|----------|-----|-----|-----|
| উদ্বোধন  | ... | ... | ২২৫ |
| যথাসময়  | ... | ... | ২২৮ |
| মাতাল    | ... | ... | ২৩০ |
| বৃগল     | ... | ... | ২৩৩ |
| শাস্ত্র  | ... | ... | ২৩৫ |
| অনবসর    | ... | ... | ২৩৮ |
| অতিবাদ   | ... | ... | ২৪১ |
| যথাস্থান | ... | ... | ২৪৬ |

|                      |     |     |     |
|----------------------|-----|-----|-----|
| বোঝাপড়া             | ... | ... | ২৫১ |
| অচেনা                | ... | ... | ২৫৬ |
| তথাপি                | ... | ..  | ২৫৯ |
| কবির বয়স            | ..  | ... | ২৬১ |
| বিদায়               | ... | ... | ২৬৪ |
| অপটু                 | ... | ... | ২৬৬ |
| উৎসৃষ্ট              | ... | ... | ২৬৮ |
| ভীকৃত                | ... | ... | ২৭১ |
| পরামর্শ              | ... | ... | ২৭৫ |
| ক্ষতি-পূরণ           | .   | ... | ২৭৮ |
| সেকাল                | ... | ... | ২৮২ |
| প্রতিজ্ঞা            | ... | ... | ২৯৪ |
| পথে                  | ... | ... | ২৯৬ |
| জন্মান্তর            | ... | ... | ২৯৯ |
| কর্মফল               | ... | ... | ৩০৩ |
| কবি                  | ... | ... | ৩০৬ |
| বাগিজে বসতে লক্ষ্মীঃ | ... | ... | ৩১০ |
| বিদায় রীতি          | ... | ... | ৩১৪ |
| নষ্ট স্বপ্ন          | ... | ... | ৩১৬ |
| একটি মাত্র           | ... | ... | ৩১৭ |
| সোজানুজি             | ... | ... | ৩১৯ |
| অসাবধান              | ... | ... | ৩২২ |
| স্বল্পশেষ            | ... | ... | ৩২৫ |
| কূলে                 | ..  | ... | ৩২৮ |

|              |     |     |     |
|--------------|-----|-----|-----|
| যাত্রী       | ..  | ... | ৩৩০ |
| একগায়ে      | ..  | ..  | ৩৩১ |
| ছই তীরে      | ..  | ... | ৩৩৪ |
| অতিথি        | ..  | ... | ৩৩৭ |
| সম্বরণ       | ..  | ..  | ৩৪০ |
| বিরহ         | ..  | ... | ৩৪২ |
| ক্ষণেক দেখা  | ..  | ... | ৩৪৫ |
| অকালে        | ... | ... | ৩৪৭ |
| আষাঢ়        | .   | ... | ৩৪৯ |
| ছই বোন       | ... | ... | ৩৫২ |
| নববর্ষা      | ..  | ... | ৩৫৪ |
| জুদ্দিন      | ... | ... | ৩৫৮ |
| অবিনয়       | ..  | ..  | ৩৬১ |
| কৃষ্ণকলি     | ..  | ... | ৩৬৪ |
| ভৎসনা        | ..  | ..  | ৩৬৭ |
| সুখদুঃখ      | ... | ..  | ৩৭১ |
| খেলা         | ... | ... | ৩৭৩ |
| কৃতার্থ      | ... | ... | ৩৭৬ |
| হায়ী-অহায়ী | ..  | ... | ৩৮০ |
| উদাসীন       | ..  | ... | ৩৮২ |
| যৌবন-বিদায়  | ... | ..  | ৩৮৭ |
| শেষ হিসাব    | ... | ... | ৩৯০ |
| শেষ          | ... | ... | ৩৯৩ |
| বিলম্বিত     | ... | ..  | ৩৯৮ |

|            |     |     |     |
|------------|-----|-----|-----|
| মেঘমুক্ত   | ... | ..  | ৪০১ |
| চিরায়মানা | .   | ..  | ৪০৪ |
| আদিভাব     | ..  | ... | ৪০৭ |
| কল্যাণী    | ..  | ... | ৪১১ |
| অন্তরতম    | ..  | ... | ৪১৫ |
| সমাপ্তি    | .   | ... | ৪১৮ |

### কণিক।

|                             |     |     |     |
|-----------------------------|-----|-----|-----|
| বথার্থ আপন                  | .   | ..  | ৪১৩ |
| শক্তির সীমা                 |     | ... | ৪২৪ |
| নৃতন চাল                    | .   | .   | ৪২৪ |
| অকস্মার বিভ্রাট             | ... | ..  | ৪২৫ |
| হার-জিৎ                     |     | ..  | ৪২৬ |
| ভার                         | ... | ... | ৪২৬ |
| কীটের বিচার                 | ... | ... | ৪২৭ |
| যথাকর্তব্য                  | ... | ... | ৪২৮ |
| অসম্পূর্ণ সংবাদ             | ... | ..  | ৪২৮ |
| ঈর্ষার সন্দেহ               | ... | ... | ৪২৯ |
| গুণের অধিকার ও দেহের অধিকার |     | ..  | ৪২৯ |
| নিন্দকের ছুরাশা             | ..  | ... | ৪৩০ |
| রাষ্ট্রনীতি                 | ... | ... | ৪৩১ |
| গুণজ্ঞ                      | ... | ... | ৪৩১ |
| চুরি নিবারণ                 | ..  | ... | ৪৩২ |
| আত্মশুদ্ধতা                 | ... | ... | ৪৩২ |



|                                 |     |     |     |
|---------------------------------|-----|-----|-----|
| দানরিক্ত                        | ... | ... | ৪৩৩ |
| স্পষ্টভাষী                      | ... | ... | ৪৩৪ |
| প্রতাপের তাপ                    | ... | ... | ৪৩৪ |
| নম্রতা                          | ... | ... | ৪৩৫ |
| ভিক্ষা ও উপাঙ্জন                | ..  | ... | ৪৩৫ |
| উচ্চের প্রয়োজন                 | ... | ..  | ৪৩৬ |
| অচেতন মাহাত্ম্য                 | ... | ... | ৪৩৬ |
| শক্তির ক্ষমা                    | ... | ... | ৪৩৭ |
| প্রকারভেদ                       | .   | ..  | ৪৩৭ |
| গেলেনা                          | ..  | ..  | ৪৩৮ |
| এক-তব্য হিসাব                   | ... | ... | ৪৩৮ |
| অল্প জানা ও বেশি জানা           | .   | ..  | ৪৩৯ |
| মূল                             | .   | ..  | ৪৩৯ |
| হাতে কলমে                       | ... | ... | ৪৩৯ |
| পর-বিচারে গৃহভেদ                | ... | ..  | ৪৪০ |
| গরজের আত্মীয়তা                 | ... | ... | ৪৪০ |
| সাম্যনীতি                       | ... | ..  | ৪৪০ |
| কুটুস্থিত-বিচার                 | ... | ... | ৪৪১ |
| উদার-চরিতানাম্                  | ... | ... | ৪৪১ |
| জ্ঞানের দৃষ্টি ও প্রেমের সম্ভোগ |     | ... | ৭৮১ |
| সমালোচক                         | ... | ... | ৪৪২ |
| স্বদেশদেবী                      | ... | ... | ৪৪২ |
| ভক্তি ও অতিভক্তি                | ... | ... | ৪৪২ |
| প্রবীণ ও নবীন                   | ... | ... | ৪৪৩ |

|                         |     |     |     |
|-------------------------|-----|-----|-----|
| আকাজ্জা                 | ... | ..  | ৪৪৩ |
| কুতীর প্রমাদ            | ... | ... | ৪৪৩ |
| অসম্ভব ভালো             | ... | ..  | ৪৪৪ |
| নদীর প্রতি খালের অবজ্ঞা |     |     | ৪৪৪ |
| স্পর্ধা                 | ... | ... | ৪৪৪ |
| অযোগ্যের উপহাস          | ... | ... | ৪৪৫ |
| প্রত্যক্ষ প্রমাণ        | ... | ... | ৪৪৫ |
| পরের বিচার              | ... | ... | ৪৪৫ |
| গত ও পত্ন               | ... | ..  | ৪৪৬ |
| ভক্তিভাজন               | ... | ... | ৪৪৬ |
| ক্ষুদ্রের দৃষ্টি        | ... | ... | ৪৪৬ |
| সন্দেহের কারণ           | ... | ... | ৪৪৭ |
| নিরাপদ নীচতা            | ... | ..  | ৪৪৭ |
| পরিচয়                  | ... | ..  | ৪৪৭ |
| অরুতন্ত                 | ... | ..  | ৪৪৭ |
| অসাধ্য চেষ্টা           | ... | ... | ৪৪৮ |
| ভালো মন্দ               | ... | ... | ৪৪৮ |
| একই পথ                  | ... | ... | ৪৪৮ |
| কাকঃ কাকঃ পিকঃ পিকঃ     |     | ... | ৪৪৮ |
| গালির ভঙ্গী             | ..  | ..  | ৪৪৯ |
| কলঙ্ক ব্যবসায়ী         | ... | ... | ৪৪৯ |
| প্রভেদ                  | ... | ..  | ৪৪৯ |
| নিজের ও সাধারণের        | ... | ... | ৪৪৯ |
| মাঝারির সতর্কতা         | ... | ... | ৪৫০ |

|                        |     |     |     |
|------------------------|-----|-----|-----|
| শত্রুতাগৌরব            | ... | ... | ৪৫০ |
| উপলক্ষা                | ... |     | ৪৫০ |
| নূতন ও সনাতন           | ... | ... | ৪৫০ |
| দীনের দান              | ..  | ... | ৪৫১ |
| কুয়াশার আক্ষেপ        | ..  | ..  | ৪৫১ |
| গ্রহণে ও দানে          | ..  | ..  | ৪৫১ |
| অনাবশ্যকের আবশ্যকতা    |     | ... | ৪৫২ |
| তন্নষ্ট যন্ন দায়িতে   | ..  | ... | ৪৫২ |
| নতি স্বীকার            | ..  | ... | ৪৫২ |
| পরস্পর ভক্তি           | ..  | ..  | ৪৫৩ |
| বলের আপেক্ষা বলী       | ..  | ... | ৪৫৩ |
| কর্তব্য গ্রহণ          | ... | ..  | ৪৫৩ |
| ক্রবাণি তস্ত নশ্রুস্তি | ..  | ..  | ৪৫৪ |
| মোহ                    | ... | ... | ৪৫৫ |
| ফল ও ফল                | ... | ... | ৪৫৪ |
| অক্ষুট ও পরিস্কুট      | .   |     | ৪৫৫ |
| প্রশ্নের অতীত          | ... | ..  | ৪৫৫ |
| স্বাধীনতা              | ... | ... | ৪৫৫ |
| বিফল নিন্দা            | ... | ... | ৪৫৬ |
| মোহের আশঙ্কা           | ..  | ... | ৪৫৬ |
| স্তুতি নিন্দা          | ... | ... | ৪৫৬ |
| পর ও আত্মীয়           | ... | ... | ৪৫৭ |
| আদি রহস্য              | ... | ... | ৪৫৭ |
| অদৃশ্য কারণ            | ... | ..  | ৪৫৭ |

|                      |     |     |     |
|----------------------|-----|-----|-----|
| মতোর সংঘম            | ... | ... | ৪৫৮ |
| মৌল্যের সংঘম         | ... | ... | ৪৫৮ |
| মহাতের দুঃখ          | ... | ... | ৪৫৮ |
| অনুরাগ ও বৈরাগ্য     | ... | ... | ৪৫৯ |
| বিরাম                | ..  | ... | ৪৫৯ |
| জীবন                 | ... | .   | ৪৫৯ |
| অপরিবর্তনীয়         | ... | .   | ৪৫৯ |
| অপরিহার্য            | ..  | ..  | ৪৬০ |
| সুখদুঃখের একই স্বরূপ |     | ... | ৪৬০ |
| চালক                 | ... | ... | ৪৬০ |
| মতোর আবিদার          | ... | ..  | ৪৬১ |
| সুসন্ম               | ..  | ... | ৪৬১ |
| ছলনা                 | ..  | ... | ৪৬১ |
| সজ্ঞান আত্মবিসংকল্প  | ... | ..  | ৪৬২ |
| স্পষ্টসত্য           | ... | ..  | ৪৬২ |
| আরম্ভ ও শেষ          | ... | ..  | ৪৬২ |
| বস্তু-হরণ            | ..  | ... | ৪৬৩ |
| চির-নবীনতা           | ... | ..  | ৪৬৩ |
| গুণ্য                | ..  | ... | ৪৬৩ |
| শক্তির শক্তি         | ... | ..  | ৪৬৪ |
| প্রব সত্য            | .   | ... | ৪৬৪ |
| এক পরিণাম            | ... | ... | ৪৬৪ |



ଢେଉଡାଲି



# চৈতানি



## উৎসর্গ

আজি মোর দ্রাক্ষাকুঞ্জবনে  
গুচ্ছ গুচ্ছ ধরিয়াছে ফল ।  
পরিপূর্ণ বেদনার ভরে  
মুহূর্ত্তেই বুঝি ফেটে পড়ে,  
বসন্তের ছরন্ত বাতাসে  
নুয়ে বুঝি নমিবে ভূতল,  
রসভরে অসহ উচ্ছ্বাসে  
থরে থরে ফলিয়াছে ফল ।

তুমি এস নিকুঞ্জ-নিবাসে,  
এস মোর সার্থক-সাধন ।  
লুটে লও ভরিয়া অঞ্চল  
জীবনের সকল সম্বল,  
নীরবে নিতান্ত অবনত  
বসন্তের সর্ব-সমর্পণ ;  
হাসিমুখে নিয়ে যাও যত  
বনের বেদন-নিবেদন ।



## চৈতালি

শুভ্রিরক্ত নথরে বিক্ষত  
ছিন্ন করি' ফেল বৃন্তগুলি,  
সুখাবেশে বসি' লতামূলে  
সারাবেলা অলস অঙ্গুলে  
বুথা কাজে যেন অন্তমনে  
খেলাচ্ছিলে লহ তুলি' তুলি';  
তব ওষ্ঠে দশন-দংশনে  
টুটে যাক পূর্ণ ফলগুলি ।

আজি মোর দ্রাক্ষা কুঞ্জবনে  
গুঞ্জরিছে ভ্রমর চঞ্চল ।  
সারাদিন অশান্ত বাতাস  
ফেলিতেছে মর্ম্মর নিশ্বাস,  
বনের বুকুর আন্দোলনে  
কাঁপিতেছে পল্লব-অঞ্চল ।  
আজি মোর দ্রাক্ষাকুঞ্জবনে  
পুঞ্জ পুঞ্জ ধরিয়াছে ফল ।

১৩ই চৈত্র, ১৩০২ ।

## গীতহীন

চলে' গেছে মোর বীণাপাণি ।  
কতদিন হ'ল সে না জানি ।  
কি জানি কি অনাদরে      বিশ্বৃত ধূলির পরে  
ফেলে রেখে গেছে বীণাখানি ।

ফুটেছে কুসুমরাজি,—      নিখিল জগতে আজি  
আসিয়াছে গাহিবার দিন,  
মুখরিত দশদিক্      অশ্রান্ত পাগল পিক,  
উচ্ছ্বসিত বসন্ত-বিপিন ।  
বাজিয়া উঠেছে ব্যথা,      প্রাণভরা ব্যাকুলতা,  
মনে ভরি' উঠে কত বাণী,  
বসে' আছি সারাদিন      গীতিহীন স্ততিহীন,—  
চলে' গেছে মোর বীণাপাণি ।

আর সে নবীন সুরে      বীণা উঠিবে না পূরে,  
বাজিবে না পুরানো রাগিণী ;  
যৌবনে যোগিনী মত,      ল'য়ে নিত্য মৌনব্রত  
তুই বীণা র'বি উদাসিনী ।  
কে বসিবে এ আসনে      মানসকমলবনে,  
কার কোলে দিব তোরে আনি',—

## চৈতালি

থাক্ পড়ে' ওইখানে    চাহিয়া আকাশপানে—  
চলে' গেছে মোর বাঁণাপাণি ।

কখনো মনের ভুলে    যদি এরে লই তুলে  
বাজে বুকে বাজাইতে বাঁণা ;  
যদিও নিখিল ধরা    বসন্তে সজ্জাতে ভরা,  
তবু আজি গাহিতে পারি না ।  
কথা আজি কথা সার,    স্তর তাহে নাহি আর,  
গাঁথা ছন্দ বৃথা বলে' মানি,—  
অশ্রুজলে ভরা প্রাণ,    নাহি তাহে কলতান,—  
চলে' গেছে মোর বাঁণাপাণি ।

ভাবিতাম স্তরে বাঁধা    এ বাঁণা আমারি সাধা,  
এ আমার দেবতার বর ;  
এ আমারি প্রাণ হ'তে    মত্তভরা স্তম্ভাস্রোতে  
পেয়েছে অক্ষয় গীতস্বর ।  
একদিন সন্ধ্যালোকে    অশ্রুজল ভরি' চোখে  
বক্ষে এরে লইলাম টানি'—  
আর না বাজিতে চায়,—    তখনি বুঝিছু হায়  
চলে' গেছে মোর বাঁণাপাণি ।

১৩ই চৈত্র, ১৩০২ ।

## স্বপ্ন

কাল রাতে দেখিনু স্বপন ;—

দেবতা-আশিষ সম            শিয়রে সে বসি' মম  
মুখে রাখি' করুণ নয়ন  
কোমল অঙ্গুলি শিরে        বুলাইছে ধীরে ধীরে  
স্ত্রধামাখা প্রিয় পরশন—  
কাল রাতে হেরিনু স্বপন ।

হেরি সেই মুখপানে            বেদনা ভরিল প্রাণে  
দুই চক্ষু জলে ছলছলি'—

বুকভরা অভিমান            আলোড়িয়া মর্ম্মস্থান  
কণ্ঠে যেন উঠিল উচ্চলি ।

সে শুধু আকুল চোখে        নীরবে গভীর শোকে  
শুধাইল—“কি হয়েছে তোর ?”

কি বলিতে গিয়ে প্রাণ        ফেটে হ'ল শতখান  
তখনি ভাঙিল ঘুমঘোর ।

## চৈতালি

অন্ধকার নিশীথিনী      ঘুমাইছে একাকিনী,  
অরণ্যে উঠিছে ঝিলিস্বর,  
বাতায়নে ঝবতারা      চেয়ে আছে নিদ্রাহারা,  
নতনেত্রে গণিছে প্রহর ।  
দীপ-নির্বাপিত ঘরে      শুয়ে শূন্য শয্যাপরে  
ভাবিতে লাগিলু কতক্ষণ—  
সিথানে মাথাটি থুয়ে      সেও একা শুয়ে শুয়ে  
কি জানি কি হেরিছে স্বপন,  
দ্বিপ্রহরা যামিনী যখন ।

১৪ই চৈত্র, ১৩০২ ।

---

## আশার সীমা

সকল আকাশ                      সকল বাতাস  
 সকল শ্যামল ধরা  
 সকল কান্তি,                      সকল শান্তি  
 সন্ধ্যাগগন-ভরা,  
 যত কিছু সুখ,                      যত সুধামুখ,  
 যত মধুমাখা হাসি,  
 যত নব নব                      বিলাস-বিভব,  
 প্রমোদ মদিররাশি,  
 সকল পৃথ্বী                      সকল কীর্ত্তি  
 সকল অর্ঘ্যভার,  
 বিশ্ব-মখন                      সকল যতন,  
 সকল রতনহার,—  
 সব পাই যদি                      তবু নিরবধি  
 আরো পেতে চায় মন,—  
 যদি তা'রে পাই                      তবে শুধু চাই  
 একখানি গৃহকোণ ।

১৪ই চৈত্র, ১৩০২ ।

## দেবতার বিদায়

দেবতামন্দিরমাঝে ভকত প্রবীণ  
জপিতেছে জপমালা বসি' নিশিদিন ।  
হেনকালে সন্ধ্যাবেলা ধূলিমাখা দেহে  
বস্ত্রহীন জীর্ণ দীন পশিল সে গেহে ।  
কহিল কাতরকণ্ঠে—“গৃহ মোর নাই,  
এক পাশে দয়া করে' দেহ মোরে ঠাই ।”  
সসঙ্কোচে ভক্তবর কহিলেন তা'রে  
“আরে আরে অপবিত্র, দূর হ'য়ে যা রে !”  
সে কহিল “চলিলাম”—চক্ষুর নিমেষে  
ভিখারী ধরিল মূর্ত্তি দেবতার বেশে ।  
ভক্ত কহে, “প্রভু মোরে কি চল চলিলে ।”  
দেবতা কহিল, “মোরে দূর করি' দিলে ।  
জগতে দরিদ্ররূপে ফিরি দয়াতরে,  
গৃহহীনে গৃহ দিলে আমি থাকি ঘরে ।”

১৪ই চৈত্র, ১৩০২

## পুণ্যের হিসাব

সাধু যবে স্বর্গে গেল, চিত্রগুপ্তে ডাকি’  
কহিলেন আন মোর পুণ্যের হিসাব ।  
চিত্রগুপ্ত খাতাখানি সম্মুখেতে রাখি’  
দেখিতে লাগিল তা’র মুখের কি ভাব ।  
সাধু কহে চমকিয়া, মহা ভুল এ কি,  
প্রথমের পাতাগুলো ভরিয়াছ আঁকে,  
শেষের পাতায় এ যে সব শূন্য দেখি ।  
যতদিন ডুবে ছিনু সংসারের পাঁকে  
ততদিন এত পুণ্য কোথা হ’তে আসে ।—  
শুনি’ কথা চিত্রগুপ্ত মনে মনে হাসে ।  
সাধু মহা রেগে বলে— যৌবনের পাতে  
এত পুণ্য কেন লেখ দেবপূজাখাতে ?  
চিত্রগুপ্ত হেসে বলে—বড় শক্ত বুঝা ;  
যারে বলে ভালবাসা, তা’রে বলে পূজা ।

১৪ই চৈত্র, ১৩০২ ।



## বৈরাগ্য

কহিল গভীর রাত্রে সংসারে বিরাগী—  
গৃহ তেয়াগিব আজি ইষ্টদেব লাগি' ।  
কে আমারে ভুলাইয়া রেখেছে এখানে ?  
দেবতা কহিলা “আমি ।”—শুনিল না কানে ।  
স্বপ্তিমগ্ন শিশুটিরে আঁকড়িয়া বুকে  
প্রেয়সী শয্যার প্রান্তে ঘুমাইছে স্বেদে ।  
কহিল—কে তোরা ওরে মায়ার ছলনা ?  
দেবতা কহিলা “আমি ।”—কেহ শুনিল না ।  
ডাকিল শয়ন ছাড়ি’—তুমি কোথা প্রভু !—  
দেবতা কহিলা—“হেথা ।”—শুনিল না তবু ।  
স্বপনে কাঁদিল শিশু জননীরে টানি’,—  
দেবতা কহিলা “ফির !”—শুনিল না বাণী ।  
দেবতা নিশ্বাস ছাড়ি’ কহিলেন—হায়,  
আমারে ছাড়িয়া ভক্ত চলিল কোথায় ।

১৪ই চৈত্র, ১৩০২ ।

## মধ্যাহ্ন

বেলা দ্বিপ্রহর

ক্ষুদ্র শীর্ণ নদীখানি শৈবালে জর্জর  
স্থির স্রোতোহীন । অর্দ্ধমগ্ন তরীপরে  
মাছরাঙা বসি' তীরে ; দুটি গরু চরে  
শান্তহীন মাঠে । শান্তনেত্রে মুখ তুলে  
মহিষ রয়েছে জলে ডুবি' । নদীকূলে  
জনহীন নৌকা বাঁধা । শূন্য ঘাটতলে  
রৌদ্রতপ্ত দাঁড়কাক স্নান করে জলে  
পাখা ঝটপটি । শ্যাম শম্পতটে তীরে  
খঞ্জন দুলায়ে পুচ্ছ নৃত্য করি' ফিরে ।  
চিত্রবর্ণ পতঙ্গম স্বচ্ছ পক্ষভরে  
আকাশে ভাসিয়া উড়ে, শৈবালের পরে  
ক্ষণে ক্ষণে লভিয়া বিশ্রাম । রাজহাঁস  
অদূরে গ্রামের ঘাটে তুলি' কলভাষ  
শুভ্র পক্ষ ধৌত করে সিন্ত চঞ্চুপুটে ।  
শুদ্ধ তৃণগন্ধ বহি' ধেয়ে আসে ছুটে  
তপ্ত সমীরণ,—চলে' যায় বহু দূর ।  
থেকে থেকে ডেকে ওঠে গ্রামের কুকুর  
কলহে মাতিয়া । কভু শান্ত হাস্যাস্বর,

## চৈতালি

কভু শালিকের ডাক, কখনো মন্সুর  
জীর্ণ অশথের, কভু দূর শূণ্যপরে  
চীলের স্তম্ভীত্রধ্বনি, কভু বায়ুভরে  
আর্তশব্দ বাঁধা তরণীর,—মধ্যাহ্নের  
অব্যক্ত করুণ একতান, অরণ্যের  
স্নিগ্ধচ্ছায়া, গ্রামের স্তম্ভপু শান্তিরশি,  
মাঝখানে বসে' আছি আমি পরবাসী ।  
প্রবাস-বিরহ দুঃখ মনে নাহি বাজে ;—  
আমি মিলে গেছি যেন সকলের মাঝে ;  
ফিরিয়া এসেছি যেন আদি জন্মস্থলে  
বহুকাল পরে,—ধরণীর বক্ষতলে  
পশু পাখী পতঙ্গম সকলের সাথে  
ফিরে গেছি যেন কোন্ নবীন প্রভাতে  
পূর্ববজন্মে,—জীবনের প্রথম উল্লাসে  
আঁকড়িয়া ছিনু যবে আকাশে বাতাসে  
জলে স্থলে—মাতৃস্তনে শিশুর মতন—  
আদিম আনন্দরস করিয়া শোষণ ।

১৫ই চৈত্র, ১৩০২ ।

## পল্লীগ্রামে

হেথায় তাহারে পাই কাছে,  
যত কাছে ধরাতল                      যত কাছে ফুলফল  
যত কাছে বায় জল আছে ।  
যেমন পাখীর গান                      যেমন জলের তান,  
যেমন এ প্রভাতের আলো,  
যেমন এ কোমলতা,                      অরণ্যের শ্যামলতা,  
তেমনি তাহারে বাসি ভালো ।  
যেমন সুন্দর সন্ধ্যা,                      যেমন রজনীগন্ধা,  
শুকতারা আকাশের ধারে,  
যেমন সে অকলুষা                      শিশির-নিশ্বলা উষা  
তেমনি সুন্দর হেরি তা'রে ।  
যেমন বৃষ্টির জল                      যেমন আকাশতল,  
সুখস্বপ্তি যেমন নিশার,  
যেমন তটিনীনীর,                      বটচ্ছায়া অটবীর  
তেমনি সে মোর আপনার ।  
যেমন নয়ন ভরি                      অশ্রুজল পড়ে বরি'  
তেমনি সহজ মোর গীতি ;  
যেমন রয়েছে প্রাণ                      ব্যাপ্ত করি' মর্ম্মস্থান  
তেমনি রয়েছে তা'র প্রীতি ।

১৬ই চৈত্র, ১৩০২ ।

## সামান্য লোক

সন্ধ্যাবেলা লাঠি কাঁখে বোঝা বহি' শিরে  
নদীতীরে পল্লীবাসী ঘরে যায় ফিরে ।  
শত শতাব্দীর পরে যদি কোনোমতে  
মল্লবলে, অতীতের মৃত্যুরাজ্য হ'তে  
এই চাষী দেখা দেয় হ'য়ে মূর্তিমান  
এই লাঠি কাঁখে ল'য়ে, বিস্মিত নয়ান,—  
চারিদিকে ঘিরি' তা'রে অসীম জনতা  
কাড়াকাড়ি করি' লবে তা'র প্রতি কথা  
তা'র সুখ দুঃখ যত তা'র প্রেম স্নেহ,  
তা'র পাড়া প্রতিবেশী, তা'র নিজ গেহ,  
তা'র ক্ষেত, তা'র গরু, তা'র চাষবাস,  
শুনে শুনে কিছূতেই মিটিবে না আশ !  
আজি যার জীবনের কথা তুচ্ছতম  
সেদিন শুনাবে তাহা কবিত্বের সম ।

১৭ই চৈত্র, ১৩০২ ।

## প্রভাত

নির্মল তরুণ উষা, শীতল সমীর,  
শিহরি শিহরি উঠে শান্ত নদীনার !  
এখনো নামেনি জলে রাজহাঁসগুলি,  
এখনো ছাড়েনি নৌকা শাদা পাল তুলি' ।  
এখনো গ্রামের বধু আসে নাই ঘাটে  
চাষী নাহি চলে পথে, গরু নাই মাঠে ।  
আমি শুধু একা বসি' মুক্ত বাতায়নে  
তপ্ত ভাল পাতিয়াছি উদার গগনে ।  
বাতাস সোহাগস্পর্শ বুলাইছে কেশে,  
প্রসন্ন কিরণখানি মুখে পড়ে এসে ।  
পাখীর আনন্দগান দশদিক্ হ'তে  
দুলাইছে নীলাকাশ অমৃতের স্রোতে ।  
ধন্য আমি হেরিতেছি আকাশের আলো,  
ধন্য আমি জগতেরে বাসিয়াছি ভালো ।

১১ই চৈত্র, ১৩০২ ।

## দুর্লভ জন্ম

একদিন এই দেখা হ'য়ে যাবে শেষ,  
পড়িবে নয়নপরে অস্তিম নিমেষ ।  
পরদিনে এই মত পোহাইবে রাত,  
জাগ্রত জগত পরে জাগিবে প্রভাত ।  
কলরবে চলিবেক সংসারের খেলা,  
সুখে দুঃখে ঘরে ঘরে বহি' যাবে বেলা ।  
সে কথা স্মরণ করি' নিখিলের পানে  
আমি আজি চেয়ে আছি উৎসুক নয়ানে ।  
যাহা কিছু হেরি চোখে কিছু তুচ্ছ নয়,  
সকলি দুর্লভ বলে' আজি মনে হয় ।  
দুর্লভ এ ধরণীর লেশতম স্থান,  
দুর্লভ এ জগতের ব্যর্থতম প্রাণ ।  
যা পাইনি তাও থাক্, যা পেয়েছি তাও,  
তুচ্ছ বলে' যা চাইনি তাই মোরে দাও ।

১৮ই চৈত্র, ১৩০২ ।

## খেয়া

খেয়া নৌকা পারাপার করে নদীস্রোতে,  
কেহ যায় ঘরে, কেহ আসে ঘর হ'তে ।  
দুই তীরে দুই গ্রাম আছে জানাশোনা,  
সকাল হইতে সন্ধ্যা করে আনাগোনা ।  
পৃথিবীতে কত দ্বন্দ্ব কত সর্বনাশ,  
নূতন নূতন কত গড়ে ইতিহাস ;  
রক্তপ্রবাহের মাঝে ফেনাইয়া উঠে'  
সোনার মুকুট কত ফুটে আর টুটে ।  
সভ্যতার নব নব কত তৃষ্ণা ক্ষুধা ।  
উঠে কত কোলাহল, উঠে কত স্রুধা ।  
শুধু হেথা দুই তীরে—কেবা জানে নাম—  
দৌহাপানে চেয়ে আছে দুইখানি গ্রাম ।  
এই খেয়া চিরদিন চলে নদীস্রোতে,  
কেহ যায় ঘরে, কেহ আসে ঘর হ'তে ।

১৮ই চৈত্র, ১৩০২ ।



## কৰ্ম

ভূত্যের না পাই দেখা প্রাতে ।  
ছুয়ার রয়েছে খোলা,                      স্নানজল নাই তোলা  
মূৰ্খাধম আসে নাই রাতে ।  
মোর ধৌত বস্ত্রখানি                      কোথা আছে নাহি জানি,  
কোথা আহারের আয়োজন,  
বাজিয়া যেতেছে ঘড়ি,                      বসে' আছি রাগ করি'  
দেখা পেলো করিব শাসন ।  
বেলা হ'লে অবশেষে                      প্রণাম করিল এসে  
দাঁড়াইল করি' করযোড়,  
আমি তা'রে রোষভরে                      কহিলাম “দূর হ' রে  
দেখিতে চাহিনে মুখ তোর !”  
শুনিয়া মূঢ়ের মত                      ক্ষণকাল বাক্যহত  
মুখে মোর রহিল সে চেয়ে,  
কহিল গদগদস্বরে—                      “কালি রাত্রি দ্বিপ্রহরে  
মারা গেছে মোর ছোট মেয়ে ।”  
এত কহি' ত্বরা করি'                      গামোছাটি কাঁধে ধরি'  
নিত্য কাজে গেল সে একাকী ।  
প্রতিদিবসের মত                      ঘষামাজামোছা কত,  
কোন কৰ্ম্ম রহিল না বাকী ।

১৮ই চৈত্র, ১৩০২ ।

## বনে ও রাজ্যে

সারাদিন কাটাইয়া সিংহাসনপরে  
সন্ধ্যায় পশিলা রাম শয়নের ঘরে ।  
শয্যার আধেক অংশ শূন্য বহুকাল,  
তারি পরে রাখিলেন পরিশ্রান্ত ভাল ;  
দেবশূন্য দেবালয়ে ভক্তের মতন  
বসিলেন ভূমিপরে সজল নয়ন,  
কহিলেন নতজানু কাতর নিশ্বাসে—  
যতদিন দীনহীন ছিনু বনবাসে  
নাহি ছিল স্বর্ণমণিমাণিক্য মুকতা,  
তুমি সদা ছিলে লক্ষ্মী প্রত্যক্ষ দেবতা ।  
আজি আমি রাজ্যেশ্বর, তুমি নাই আর,  
আছে স্বর্ণমাণিক্যের প্রতিমা তোমার ।  
নিত্যস্থ দীনবেশে বনে গেল ফিরে  
স্বর্ণময়ী চিরব্যথা রাজার মন্দিরে ।

১৯শে চৈত্র, ১৩০২ ।

## সভ্যতার প্রতি

দাও ফিরে সে অরণ্য, লও এ নগর,  
লহ যত লৌহ লোষ্ট্র কাষ্ঠ ও প্রস্তর  
হে নব-সভ্যতা ! হে নির্ধুর সর্বগ্রাসী  
দাও সেই তপোবন পুণ্যচ্ছায়া রাশি,  
গ্লানিহীন দিনগুলি,—সেই সন্ধ্যাস্নান,  
সেই গোচারণ, সেই শান্ত সামগান,  
নীবারধান্যের মুষ্টি, বঙ্কল বসন,  
মগ্ন হ'য়ে আত্মমাঝে নিত্য আলোচন  
মহাতত্ত্বগুলি । পাষণপিঞ্জরে তব  
নাহি চাহি নিরাপদে রাজভোগ নব ;—  
চাই স্বাধীনতা, চাই পক্ষের বিস্তার,  
বক্ষে ফিরে পেতে চাই শক্তি আপনার,—  
পরানে স্পর্শিতে চাই—ছিঁড়িয়া বন্ধন—  
অনন্ত এ জগতের হৃদয়-স্পন্দন ।

১৯শে চৈত্র, ১৩০২ ।

## বন

শ্যামল সুন্দর সৌম্য, হে অরণ্যভূমি,  
মানবের পুরাতন বাসগৃহ তুমি ।  
নিশ্চল নিজজীব নহ সৌধের মতন,—  
তোমার মুখশ্রীখানি নিত্যই নূতন  
প্রাণে প্রেমে ভাবে অর্থে সজীব সচল ।  
তুমি দাও ছায়াখানি, দাও ফুল ফল,  
দাও বস্ত্র, দাও শয্যা, দাও স্বাধীনতা ;  
নিশিদিন মর্ম্মরিয়া কহ কত কথা  
অজানা ভাষার মন্ত্র ; বিচিত্রসঙ্গীতে  
গাও জাগরণ-গাথা ; গভীর নিশীথে  
পাতি' দাও নিস্তরুতা অঞ্চলের মত  
জননীবন্ধের ; বিচিত্র হিল্লোলে কত  
খেলা কর শিশুসনে ; বৃদ্ধের সহিত  
কহ সনাতন বাণী বচনঅতীত ।

১৯শে চৈত্র, ১৩০২ ।

## তপোবন

মনশ্চক্ষে হেরি যবে ভারত প্রাচীন—  
পূরব পশ্চিম হ'তে উত্তর দক্ষিণ  
মহারণ্য দেখা দেয় মহাচ্ছায়া ল'য়ে ।  
রাজা রাজ্য-অভিমান রাখি' লোকালয়ে  
অশ্বরথ দূরে বাঁধি' যায় নতশিরে  
গুরুর মন্ত্রণা লাগি,—প্রোতস্বিনীতীরে  
মহর্ষি বসিয়া যোগাসনে, শিষ্যগণ  
বিরলে তরুর তলে করে অধ্যয়ন  
প্রশান্ত প্রভাতবায়ে, ঋষিকৃত্যাদলে  
পেলব যৌবন বাঁধি' পরুষ বন্ধলে  
আলবালে করিতেছে সলিল সেচন ।  
প্রবেশিছে বনদ্বারে ত্যজি' সিংহাসন  
মুকুটবিহীন রাজা পরু কেশজালে  
ত্যাগের মহিমাজ্যোতি ল'য়ে শাস্ত ভালে

১৯শে চৈত্র, ১৩০২ ।

## প্রাচীন ভারত

দিকে দিকে দেখা যায় বিদর্ভ, বিরাট,  
অযোধ্যা, পঞ্চাল, কাশি উদ্ধত ললাট ;  
স্পর্কিছে অম্বরতল অপাগ্নইঙ্গিতে,  
অশ্বের হ্রেষায় আর হস্তীর বৃংহিতে  
অসির ঝঞ্ঝনা আর ধনুর টঙ্কারে,  
বীণার সঙ্গীত আর নৃপুর ঝঙ্কারে,  
বন্দীর বন্দনারবে, উৎসব-উচ্ছ্বাসে,  
উল্লাদ শব্দের গর্জে, বিজয়উল্লাসে,  
রথের ঘর্ঘরমন্দ্রে, পথের কল্লোলে  
নিয়ত ধ্বনিত ধাত কন্মকলরোলে ।  
ব্রাহ্মণের তপোবন অদূরে তাহার,  
নির্বাক্ গম্ভীর শান্ত সংযত উদার ।  
হেথা মত্ত স্ফীতস্ফূর্ত ক্ষত্রিয়গরিমা,  
হোথা স্তব্ধ মহামৌন ব্রাহ্মণমহিমা ।

১লা শ্রাবণ, ১৩০৩ ।

## ঋতুসংহার

হে কবীন্দ্র কালিদাস, কল্পকুঞ্জবনে  
নিভূতে বসিয়া আছ প্রেয়সীর সনে  
যৌবনের যৌবরাজ্য সিংহাসনপরে ।  
মরকত পাদপীঠ বহনের তরে  
রয়েছে সমস্ত ধরা, সমস্ত গগন  
স্বর্ণ রাজছত্র উর্দ্ধে করেছে ধারণ  
শুধু তোমাদের পরে ;—ছয় সেবাদাসী  
ছয় ঋতু ফিরে ফিরে নৃত্য করে আসি' ;  
নব নব পাত্র ভরি ঢালি' দেয় তা'রা  
নব নব বর্ণময়ী মদিরার ধারা  
তোমাদের তৃষিত যৌবনে ; ত্রিভুবন  
একখানি অন্তঃপুর, বাসরভবন ।  
নাই দুঃখ নাই দৈন্য নাই জনপ্রাণী,  
তুমি শুধু আছ রাজা, আছে তব রাণী ।

২০শে চৈত্র, ১৩০২ ।

## মেঘদূত

নিমেষে টুটিয়া গেল সে মহাপ্রতাপ ।  
উদ্ধ হ'তে একদিন দেবতার শাপ  
পশিল সে সুখরাজ্যে, বিচ্ছেদের শিখা  
করিয়া বহন ; মিলনের মরীচিকা,  
যৌবনের বিশ্বগ্রাসী মত্ত অহমিকা  
মুহূর্তে মিলায়ে গেল মায়া-কুহেলিকা  
খররৌদ্রকরে । ছয় ঋতু সহচরী  
ফেলিয়া চামরছত্র, সভাভঙ্গ করি'  
সহসা তুলিয়া দিল রঙ্গ-যবনিকা—  
সহসা খুলিয়া গেল, যেন চিত্রে লিখা—  
আষাঢ়ের অশ্রুপ্লুত সুন্দর ভুবন !  
দেখা দিল চারিদিকে পর্বত কানন  
নগর নগরী গ্রাম ; বিশ্বসভামাঝে  
তোমার বিরহবীণা সক্রুণ বাজে ।

২১শে চৈত্র, ১৩০২ ।



## দিদি

নদীতীরে মাটি কাটে সাজাইতে পাঁজা  
পশ্চিমী মজুর । তাহাদেরি ছোট মেয়ে  
ঘাটে করে আনাগোনা ; কত ঘষামাজা  
ঘটি বাটি থালা ল'য়ে,—আসে ধেয়ে ধেয়ে  
দিবসে শতেকবার ; পিতুল কঙ্কণ  
পিতলের থালি পরে বাজে ঠন্ ঠন্ ;—  
বড় ব্যস্ত সারাদিন, তারি ছোট ভাই,  
নেড়ামাথা, কাদামাথা, গায়ে বস্ত্র নাই,  
পোষা প্রাণীটির মত পিছে পিছে এসে  
বসি' থাকে উচ্চপাড়ে দিদির আদেশে  
স্থিরধৈর্য্যভরে । ভরাঘট ল'য়ে মাথে  
বামকক্ষে থালি, যায় বালা ডানহাতে  
ধরি' শিশুকর ; জননীর প্রতিনিধি,  
কর্শ্বভারে অবনত অতি ছোট দিদি ।

২১শে চৈত্র, ১৩০২ ।

## পরিচয়

একদিন দেখিলাম উলঙ্গ সে ছেলে  
ধূলিপরে বসে' আছে পা দু'খানি মেলে ।  
ঘাটে বসি' মাটিঢেলা লইয়া কুড়ায়ে  
দিদি মাজিতেছে ঘটি ঘুরায়ে ঘুরায়ে ।  
অদূরে কোমল-লোম ছাগবৎস ধীরে  
চলিয়া ফিরিতেছিল সেই নদীতীরে ।  
সহসা সে কাছে আসি' থাকিয়া থাকিয়া  
বালকের মুখ চেয়ে উঠিল ডাকিয়া ।  
বালক চমকি কাঁপি' কেঁদে ওঠে ত্রাসে,  
দিদি ঘাটে ঘটি ফেলি' ছুটে চলে' আসে  
এক কক্ষে ভাই ল'য়ে অন্য কক্ষে ছাগ  
দুজনেরে বাঁটি' দিল সমান সোহাগ ।  
পশুশিশু, নরশিশু,—দিদি মাঝে পড়ে'  
দৌহারে বাঁধিয়া দিল পরিচয়-ডোরে ।

২১শে চৈত্র, ১৩০২ ।

## অনন্ত পথে

বাতায়নে বসি' ওরে হেরি প্রতিদিন  
ছোট মেয়ে খেলাহীন, চপলতাহীন,  
গম্ভীর কর্তব্যরত,—তৎপর-চরণে  
আসে যায় নিত্যকাজে ; অশ্রুভরা মনে  
ওর মুখপানে চেয়ে হাসি স্নেহভরে ।  
আজি আমি তরী খুলি' যাব দেশান্তরে ;  
বালিকাও যাবে কবে কস্ম্যবসানে  
আপন স্বদেশে ; ও আমারে নাহি জানে,  
আমিও জানিনে ওরে ; দেখিবারে চাহি  
কোথা ওর হবে শেষ জীবসূত্র বাহি' ।  
কোন্ অজানিত গ্রামে, কোন্ দূর দেশে  
কার ঘরে বধূ হবে, মাতা হবে শেষে ;  
তা'র পরে সব শেষ,—তা'রো পরে হায়,  
এই মেয়েটির পথ চলেছে কোথায় ।

২১শে চৈত্র, ১৩০২ ।

## ক্ষণ-মিলন

পরম আত্মীয় বলে' যারে মনে মানি  
তা'রে আমি কত দিন কতটুকু জানি  
অসীম কালের মাঝে তিলেক মিলনে  
পরশে জীবন তা'র আমার জীবনে ।  
যতটুকু লেশমাত্র চিনি দুজনায়,  
তাহার অনন্তগুণ চিনি নাক হয় ।  
দুজনের একজন একদিন যবে  
বারেক ফিরাবে মুখ, এ নিখিল ভবে  
আর কভু ফিরিবে না মুখামুখী পথে,  
কে কার পাইবে সাড়া অনন্ত জগতে ।  
এ ক্ষণ-মিলনে তবে, ওগো মনোহর,  
তোমাতে হেরিনু কেন এমন সুন্দর !  
মুহূর্ত্ত আলোকে কেন, হে অন্তরতম,  
তোমাতে চিনি শু চিরপরিচিত মম ?

২২শে চৈত্র, ১৩০২ ।

## প্রেম

নিবিড় তিমির নিশা অসীম কাস্তার,  
লক্ষ দিকে লক্ষ জন হইতেছে পার ।  
অন্ধকারে অভিসার, কোন্ পথপানে  
কার তরে, পান্থ তাহা আপনি না জানে ।  
শুধু মনে হয় চিরজীবনের সুখ  
এখনি দিবেক দেখা ল'য়ে হাসিমুখ ।  
কত স্পর্শ কত গন্ধ কত শব্দ গান,  
কাছ দিয়ে চলে' যায় শিহরিয়া প্রাণ ।  
দৈবযোগে বলি' উঠে বিদ্যুতের আলো,  
যারেই দেখিতে পাই তা'রে বাসি ভালো ;  
তাহারে ডাকিয়া বলি—ধন্য এ জীবন,  
তোমা'রি লাগিয়া মোর এতেক ভ্রমণ ।  
অন্ধকারে আর সবে আসে যায় কাছে,  
জানিতে পারিনে তা'রা আছে কি না আছে

২২শে চৈত্র, ১৩০২ ।

## পুঁটু

চৈত্রের মধ্যাহ্নবেলা কাটিতে না চাহে ।  
তুষাতুরা বস্ত্রধরা দিবসের দাহে ।  
হেনকালে শুনিলাম বাহিরে কোথায়  
কে ডাকিল দূর হ’তে—“পুঁটুরাণী আয়  
জনশূন্য নদীতটে তপ্ত দ্বিপ্রহরে  
কৌতূহল জাগি’ উঠে স্নেহকণ্ঠস্বরে ।  
গ্রন্থখানি বন্ধ করি’ উঠিলাম ধীরে,  
দুয়ার করিয়া ফাঁক দেখিনু বাহিরে ।  
মহিষ বৃহৎকায় কাদামাখা গায়ে  
স্নিগ্ধনেত্রে নদীতীরে রয়েছে দাঁড়ায়ে ।  
যুবক নামিয়া জলে ডাকিছে তাহায়  
স্নান করাবার তরে “পুঁটুরাণী আয় ।”  
হেরি সে যুবারে, হেরি পুঁটুরাণী তারি  
মিশিল কৌতুকে মোর স্নিগ্ধ স্তম্ভাবারি ।

২৩শে চৈত্র, ১৩০২ ।

## হৃদয়-ধন্থ

হৃদয় পাষণভেদী নির্ঝরের প্রায়,  
জড়জন্তু সবাপানে নামিবারে চায় ।  
মাঝে মাঝে ভেদচিহ্ন আছে যত যার  
সে চাহে করিতে মগ্ন লুপ্ত একাকার ।  
মধ্যদিনে দন্ধদেহে বাঁপ দিয়ে নীরে  
মা বলে' সে ডেকে ওঠে স্নিগ্ধ তটিনীরে ।  
যে চাঁদ ঘরের মাঝে হেসে দেয় উঁকি,  
সে যেন ঘরেরি মেয়ে শিশু স্খামুখী ।  
যে সকল তরুলতা রচি' উপবন  
গৃহপার্শ্বে বাড়িয়াছে, তা'রা ভাইবোন ।  
যে পশুরে জন্ম হ'তে আপনার জানি,  
হৃদয় আপনি তা'রে ডাকে পুঁটুরাণী ।  
বুদ্ধি শুনে হেসে উঠে, বলে, কি মৃঢ়তা !  
হৃদয় লজ্জায় ঢাকে হৃদয়েরি কথা ।

১লা শ্রাবণ, ১৩০২ ।

## মিলনদৃশ্য

হেসো না হেসো না তুমি, বুদ্ধিঅভিমানী,  
একবার মনে আন, ওগো ভেদজ্ঞানী,  
সে মহাদিনের কথা, যবে শকুন্তলা  
বিদায় লইতেছিল স্বজন-বৎসলা  
জন্মতপোবন হ'তে,—সখা সহকার,  
লতাভগ্নী মাধবিকা, পশু-পরিবার,  
মাতৃহারা মৃগশিশু, মৃগী গর্ভবতী,  
দাঁড়াইল চারিদিকে,—স্নেহের মিনতি  
গুঞ্জরি উঠিল কাঁদি' পল্লবমন্মথরে,  
ছলছল মালিনীর জলকলস্বরে ;—  
ধ্বনিল তাহারি মাঝে বৃদ্ধ তপস্বীর  
মঙ্গল বিদায়মন্ত্র গদগদ-গস্তীর !  
তরুলতা পশুপক্ষী নদনদীবন  
নরনারী সবে মিলি' করুণ মিলন ।

২রা আশ্বিন, ১৩০৩



## দুইবন্ধু

মূঢ় পশু ভাষাহীন নির্বাক হৃদয়,  
তা'র সাথে মানবের কোথা পরিচয় !  
কোন্ আদি স্বর্গলোকে সৃষ্টির প্রভাতে  
হৃদয়ে হৃদয়ে যেন নিত্য যাতায়াতে  
পথচিহ্ন পড়ে' গেছে, আজো চিরদিনে  
লুপ্ত হয় নাই তাহা, তাই দৌহে চিনে ।  
সে দিনের আত্মীয়তা গেছে বহুদূরে ;—  
তবুও সহসা কোন্ কথাহীন সুরে  
পরাণে জাগিয়া উঠে ক্ষীণ পূর্ববস্মৃতি,  
অন্তরে উচ্ছলি উঠে সুধাময়ী প্রীতি,  
মুগ্ধ মূঢ় স্নিগ্ধ চোখে পশু চাহে মুখে,—  
মানুষ তাহারে হেরে স্নেহের কৌতুকে ।  
যেন দুই ছদ্মবেশে দু' বন্ধুর মেলা,—  
তা'র পরে দুই জীব অপরূপ খেলা ।

২রা শ্রাবণ, ১৩০৩ ।

## সঙ্গী

আরেক দিনের কথা পড়ে' গেল মনে ।  
একদা মাঠের ধারে শ্যাম তৃণাসনে  
একটি বেদের মেয়ে অপরাহ্নবেলা  
কবরী বাঁধিতেছিল বসিয়া একেলা ।  
পালিত কুকুরশিশু আসিয়া পিছনে  
কেশের চাঞ্চল্য হেরি খেলা ভাবি' মনে  
লাফায়ে লাফায়ে উচ্ছে করিয়া চীৎকার  
দংশিতে লাগিল তা'র বেণী বারম্বার ।  
বালিকা ভৎসিল তা'রে গ্রীবাটি নাড়িয়া,  
খেলার উৎসাহ তা'র উঠিল বাড়িয়া ।  
বালিকা মারিল তা'রে তুলিয়া তর্জ্জনী,—  
দ্বিগুণ উঠিল মেতে খেলা মনে গণি' ।  
তখন হাসিয়া উঠি' ল'য়ে বক্ষপরে  
বালিকা ব্যথিল তা'রে আদরে আদরে ।

২৩শে চৈত্র, ১৩০৩ ।

## সতী

সতীলোকে বসি' আছে কত পতিব্রতা  
পুরাণে উজ্জ্বল আছে ঘাঁহাদের কথা ।  
আরো আছে শত লক্ষ অজ্ঞাত-নামিনী  
খ্যাতিহীনা কীর্তিহীনা কত না কামিনী ;—  
কেহ ছিল রাজসৌধে কেহ পর্ণঘরে,  
কেহ ছিল সোহাগিনী কেহ অনাদরে ;  
শুধু প্রীতি ঢালি' দিয়া মুছি' ল'য়ে নাম  
চলিয়া এসেছে তা'রা ছাড়ি' মর্দ্যধাম ।  
তারি মাঝে বসি' আছে পতিতা রমণী  
মর্ত্যে কলঙ্কিনী, স্বর্গে সতীশিরোমণি ।  
হেরি তা'রে সতীগর্বের গরবিণী যত  
সাক্ষীগণ লাজে শির করে অবনত ।  
তুমি কি জানিবে বার্তা, অন্তর্যামী যিনি  
তিনিই জানেন তা'র সতীত্ব-কাহিনী ।

২৪শে চৈত্র, ১৩০৩ ।

## স্নেহদৃশ্য

বয়স বিংশতি হবে, শীর্ণ তনু তা'র  
বহু বরষের রোগে অস্থিচৰ্ম্মসার ।  
হেরি তা'র উদাসীন হাসিহীন মুখ  
মনে হয় সংসারের লেশমাত্র স্তম্ভ  
পারে না সে কোনোমতে করিতে শোষণ  
দিয়ে তা'র সৰ্বদেহ সৰ্বদ প্রাণমন ।  
স্বল্পপ্রাণ শীর্ণ দীর্ঘ জীর্ণ দেহভার  
শিশুসম কক্ষে বহি' জননী তাহার  
আশাহীন দৃঢ়ধৈর্যা মৌনগ্লানমুখে  
প্রতিদিন ল'য়ে আসে পথের সম্মুখে ।  
আসে যায় রেলগাড়ি, ধায় লোকজন,—  
সে চাঞ্চল্যে মুমূর্ষুর অনাসক্ত মন  
যদি কিছু ফিরে চায় জগতের পানে,  
এইটুকু আশা ধরি মা তাহারে আনে ।

২৪শে চৈত্র, ১৩০৩ ।

## করুণা

অপরাহ্নে ধূলিচ্ছন্ন নগরীর পথে  
বিষম লোকের ভিড় ; কস্মীশালা হ'তে  
ফিরে চলিয়াছে ঘরে পরিশ্রান্ত জন ;  
বাঁধমুক্ত তটিনীর স্রোতের মতন  
উর্দ্ধশ্বাসে রথ-অশ্ব চলিয়াছে ধেয়ে  
ক্ষুধা আর সারথির কষাঘাত খেয়ে ।  
হেনকালে দোকানীর খেলামুগ্ধ ছেলে  
কাটা ঘুড়ি ধরিবারে ছুটে বাহু মেলে ।  
অকস্মাৎ শকটের তলে গেল পড়ি'  
পাষাণ-কঠিন পথ উঠিল শিহরি' ।  
সহসা উঠিল শূন্যে বিলাপ কাহার,  
স্বর্গে যেন দয়াদেবী করে হাহাকার ।  
উর্দ্ধপানে চেয়ে দেখি স্থলিতবসনা  
লুটায় লুটায় ভূমে কাঁদে বারান্দনা ।

২৪শে চৈত্র, ১৩০৩ ।

## পদ্মা

হে পদ্মা আমার !

তোমায় আমায় দেখা শত শতবার ।  
একদিন জনহীন তোমার পুলিনে,  
গোধূলির শুভলগ্নে হেমন্তের দিনে,  
সাক্ষী করি' পশ্চিমের সূর্য্য অস্তমান  
তোমারে সঁপিয়াছিছু আমার পরাণ ।  
অবসান সন্ধ্যালোকে আছিলে সেদিন  
নতমুখী বধূসম শান্ত বাক্যহীন ;—  
সন্ধ্যাতারা একাকিনী সন্নেহ কোঁতুকে  
চেয়ে ছিল তোমাপানে হাসিভরা মুখে ।  
সেদিনের পর হ'তে, হে পদ্মা আমার,  
তোমায় আমায় দেখা শত শতবার ।

নানাকর্ণে মোর কাছে আসে নানাজন,  
নাহি জানে আমাদের পরাণ-বন্ধন,  
নাহি জানে কেন আসি সন্ধ্যা-অভিসারে  
বালুকা-শয়ন পাতা নির্জ্জন এ পারে ।  
যখন মুখর তব চক্রবাক্ দল  
সুপ্ত থাকে জলাশয়ে ছাড়ি' কোলাহল ;

## চৈতালি

যখন নিস্তব্ধ গ্রামে তব পূর্ববতীরে  
রুদ্ধ হ'য়ে যায় দ্বার কুটীরে কুটীরে,  
তুমি কোন্ গান কর আমি কোন্ গান  
ছুই তীরে কেহ তা'র পায়নি সন্ধান ।  
নিভুতে শরতে গ্রীষ্মে শীতে বরষায়  
শতবার দেখা শোনা তোমায় আমায় ।

কতদিন ভাবিয়াছি বসি' তব তীরে  
পরজন্মে এ ধরায় যদি আসি ফিরে,  
যদি কোনো দূরতর জন্মভূমি হ'তে  
তরী বেয়ে ভেসে আসি তব খর স্রোতে,—  
কত গ্রাম কত মাঠ কত ঝাউঝাড়  
কত বালুচর কত ভেঙে-পড়া পাড়  
পার হ'য়ে এক ঠাঁই আসিব যখন  
জেগে উঠিবে না কোনো গভীর চेतন ?  
জন্মান্তরে শতবার যে নির্জজন তীরে  
গোপনে হৃদয় মোর আসিত বাহিরে,—  
আর বার সেই তীরে সে সন্ধ্যাবেলায়  
হবে না কি দেখা শুনা তোমায় আমায় ।

২৫শে চৈত্র, ১৩০৩

## স্নেহগ্রাস

অন্ধ মোহবন্ধ তব দাও মুক্ত করি' ।  
রেখো না বসায়ে দ্বারে জাগ্রত প্রহরী  
হে জননী, আপনার স্নেহ-কারাগারে,  
সন্তানেরে চিরজন্ম বন্দী রাখিবারে ।  
বেষ্টন করিয়া তা'রে আগ্রহ-পরশে,  
জীর্ণ করি' দিয়া তা'রে লালনের রসে,  
মনুষ্ট্ব-স্বাধীনতা করিয়া শোষণ  
আপন ক্ষুধিত চিত্ত করিবে পোষণ ?  
দীর্ঘ গর্ভবাস হ'তে জন্ম দিলে যার  
স্নেহগর্ভে গ্রাসিয়া কি রাখিবে আবার ?  
চলিবে সে এ সংসারে তব পিছু পিছু ?  
সে কি শুধু অংশ তব, আর নহে কিছু ?  
নিজের সে, বিশ্বের সে, বিশ্বদেবতার,  
সন্তান নহে গো মাতঃ সম্পত্তি তোমার ।

২৫শে চৈত্র ১৩০২ ।



## বঙ্গমাতা

পুণ্যপাপে দুঃখে স্নেহে পতনে উত্থানে  
মানুষ হইতে দাও তোমার সন্তানে  
হে স্নেহাৰ্ভ বঙ্গভূমি ! তব গৃহক্রোড়ে  
চিরশিশু করে' আর রাখিয়ো না ধরে' ।  
দেশদেশান্তর মাঝে যার যেথা স্থান  
খুঁজিয়া লইতে দাও করিয়া সন্ধান ।  
পদে পদে ছোট ছোট নিষেধের ডোরে  
বেঁধে বেঁধে রাখিয়ো না ভালো ছেলে করে' ।  
প্রাণ দিয়ে, দুঃখ স'য়ে, আপনার হাতে  
সংগ্রাম করিতে দাও ভালোমন্দ সাথে ।  
শীর্ণ শাস্ত্র সাধু তব পুত্রদের ধরে'  
দাও সবে গৃহছাড়া লক্ষ্মীছাড়া করে' ।  
সাত কোটি সন্তানেরে, হে মুগ্ধ জননী  
রেখেছ বাঙালী করে', মানুষ কর নি ।

২৬শে চৈত্র, ১৩০২ ।

## দুই উপমা

যে নদী হারায়ে স্রোত চলিতে না পারে,  
সহস্র শৈবালদাম বাঁধে আসি' তা'রে ।  
যে জাতি জীবনহারা অচল অসাড়  
পদে পদে বাঁধে তা'রে জীর্ণ লোকাচার ।  
সর্বজন সর্ববক্ষণ চলে যেই পথে,  
তৃণগুল্ম সেথা নাহি জন্মে কোনোমতে ;—  
যে জাতি চলে না কভু, তারি পথ পরে  
তন্ত্র মন্ত্র সংহিতায় চরণ না সরে ।

২৬শে চৈত্র, ১৩০২ ।

---

## পর-বেশ

কে তুমি ফিরিছ পরি' প্রভুদের সাজ ?  
ছদ্মবেশে বাড়ে না কি চতুর্গুণ লাজ ?  
পর-বস্ত্র অঙ্গে তব হ'য়ে অধিষ্ঠান  
তোমারেই করিছে না নিত্য অপমান ?

## চৈতালি

বলিছে না, “ওরে দীন, যত্নে মোরে ধর’,  
তোমার চক্ষের চেয়ে আমি শ্রেষ্ঠতর ?”  
চিত্তে যদি নাহি থাকে আপন সম্মান,  
পৃষ্ঠে তবে কালো বস্ত্র কলঙ্ক-নিশান ।  
ওই তুচ্ছ টুপিখানা চড়ি’ তব শিরে  
ধিক্কার দিতেছে না কি তব স্বজাতিরে ?  
বলিতেছে, যে মস্তক আছে মোর পায়  
হীনতা ঘুচেছে তা’র আমারি ক্রপায় ।  
সর্ববাস্ত্বে লাঞ্ছনা বহি’ এ কি অহঙ্কার ?  
ওর কাছে জীর্ণ চীর জেনো অলঙ্কার ।

২৬শে চৈত্র, ১৩০২ !

## সমাপ্তি

যদিও বসন্ত গেছে তবু বারে বারে  
সাধ যায় বসন্তের গান গাহিবারে ।  
সহসা পঞ্চম রাগ আপনি সে বাজে,  
তখনি থামাতে চাই শিহরিয়া লাজে ।  
যত না মধুর হোক্ মধু রসাবেশ  
যেখানে তাহার সীমা সেথা কর শেষ,  
যেখানে আপনি থামে যাক্ থেমে গীতি,  
তা'র পরে থাক্ তা'র পরিপূর্ণ স্মৃতি ।  
পূর্ণতারে পূর্ণতর করিবারে, হায়,  
টানিয়া কোরো না ছিন্ন বৃথা দুর্দ্রাশায় ।  
নিঃশব্দে দিনের অন্তে আসে অন্তকার,  
তেমনি হউক্ শেষ শেষ যা হবার ।  
আত্মক্ বিষাদভরা শান্ত সান্ত্বনায়  
মধুর মিলন অন্তে স্তন্দর বিদায় ।

২৭শে চৈত্র, ১৩০২

## ধরাতল

ছোট কথা ছোট গীত আজি মনে আসে ।  
চোখে পড়ে যাহা কিছু হেরি চারি পাশে ।  
আমি যেন চলিয়াছি বাহিয়া তরণী,  
কূলে কূলে দেখা যায় শ্যামল ধরণী ।  
সবি বলে, যাই যাই, নিমেষে নিমেষে,—  
ক্ষণকাল দেখি বলে' দেখি ভালবেসে' ।  
তীর হ'তে দুঃখ সুখ দুই ভাই বোনে  
মোর মুখপানে চায় করুণ নয়নে ।  
ছায়াময় গ্রামগুলি দেখা যায় তীরে,  
মনে ভাবি, কত প্রেম আছে তা'রে ঘিরে'  
যবে চেয়ে চেয়ে দেখি উৎসুক নয়ানে  
আমার পরাণ হ'তে ধরার পরাণে,—  
ভালোমন্দ দুঃখ সুখ অন্ধকার আলো  
মনে হয় সব নিয়ে এ ধরণী ভালো ।

২৭শে চৈত্র ১৩০২ ।

## তত্ত্ব ও সৌন্দর্য্য

শুনিয়াছি নিম্নে তব, হে বিশ্বপাথার,  
নাহি অন্ত মহামূল্য মণি-মুকুতার ।  
নিশিদিন দেশে দেশে পণ্ডিত ডুবরি  
রত রহিয়াছে কত অশেষণে তারি ।  
তাহে মোর নাহি লোভ, মহাপারাবার !  
যে আলোক জ্বলিতেছে উপরে তোমার,  
যে রহস্য ঢুলিতেছে তব বক্ষতলে,  
যে মহিমা প্রসারিত তব নীলজলে,  
যে সঙ্গীত উঠে তব নিয়ত আঘাতে,  
যে বিচিত্র লীলা তব মহানৃত্যে মাতে,  
এ জগতে কভু তা'র অন্ত যদি জানি,  
চিরদিনে কভু তাহে শ্রান্তি যদি মানি  
তোমার অতলমাঝে ডুবিব তখন,  
যেথায় রতন আছে অথবা মরণ ।

২৭শে চৈত্র, ১৩০২ ।

## তত্ত্বজ্ঞানহীন

যার খুঁসি রুদ্ধচক্ষে কর বসি' ধ্যান,  
বিশ্ব সত্য কিম্বা ফাঁকি লভ' সেই জ্ঞান ।  
আমি ততক্ষণ বসি' তৃপ্তহীন চোখে  
বিশ্বেরে দেখিয়া লই দিনের আলোকে ।

২৭শে চৈত্র, ১৩০২ ।

---

## মানসী

শুধু বিধাতার সৃষ্টি নহ তুমি নারী ।  
পুরুষ গড়েছে তোরে সৌন্দর্য্য সঞ্চারি'  
আপন অন্তর হ'তে । বসি' কবিগণ  
সোনার উপমাসূত্রে বুনিছে বসন ।  
সঁপিয়া তোমার পরে নূতন মহিমা  
অমর করিছে শিল্পী তোমার প্রতিমা ।

কত বর্ণ কত গন্ধ ভূষণ কত না,  
সিন্ধু হ'তে মুক্তা আসে খনি হ'তে সোনা,  
বসন্তের বন হ'তে আসে পুষ্পভার,  
চরণ রাঙাতে কীট দেয় প্রাণ তা'র ।  
লজ্জা দিয়ে, সজ্জা দিয়ে, দিয়ে আবরণ,  
তোমাতে দুর্লভ করি' করেছে গোপন ।  
পড়েছে তোমার পরে প্রদীপ্ত বাসনা,  
অর্দ্রেক মানবী তুমি অর্দ্রেক কল্লনা ।

২৮শে চৈত্র ১৩০২ ।



# নারী

তুমি এ মনের সৃষ্টি তাই মনোমাঝে  
এমন সহজে তব প্রতিমা বিরাজে ।  
যখন তোমারে হেরি জগতের তীরে  
মনে হয় মন হ'তে এসেছ বাহিরে ।  
যখন তোমারে দেখি মনোমাঝখানে  
মনে হয় জন্মজন্ম আছ এ পরাগে ।  
মানসীরূপিণী তুমি তাই দিশে দিশে  
সকল সৌন্দর্য্যসাথে যাও মিলে মিশে ।  
চন্দ্রে তব মুখ-শোভা, মুখে চন্দ্রোদয়,  
নিখিলের সাথে তব নিত্য বিনিময় ।  
মনের অনন্ত তৃষ্ণা মরে বিশ্ব ঘুরি'  
মিশায় তোমার সাথে নিখিল মাধুরী ।  
তা'র পরে মনগড়া দেবতারে, মন  
ইহকাল পরকাল করে সমর্পণ ।

২৮শে চৈত্র, ১৩০২ ।

## প্রিয়া

শতবার ধিক্ আজি আমারে, সুন্দরী,  
তোমারে হেরিতে চাহি এত ক্ষুদ্র করি' ।  
তোমার মহিমাজ্যোতি তব মূর্ত্তি হ'তে  
আমার অন্তরে পড়ি' ছড়ায় জগতে ।  
যখন তোমার পরে পড়েনি নয়ন  
জগৎ-লক্ষ্মীর দেখা পাইনি তখন ।  
স্বর্গের অঞ্জন তুমি মাখাইলে চোখে,  
তুমি মোরে রেখে গেছ অনন্ত এ লোকে ।  
এ নীল আকাশ এত লাগিত কি ভালো,  
যদি না পড়িত মনে তব মুখ আলো ?  
অপরূপ মায়াবলে তব হাসি গান  
বিশ্বমাক্বে লভিয়াছে শত শত প্রাণ ।  
তুমি এলে আগে আগে দীপ ল'য়ে করে,  
তব পাছে পাছে বিশ্ব পশিল অন্তরে ।

২৮শে চৈত্র, ১৩০২

## ধ্যান

যত ভালবাসি, যত হেরি বড় করে’  
তত, প্রিয়তমে, আমি সত্য হেরি তোরে ।  
যত অল্প করি তোরে, তত অল্প জানি,  
কখনো হারায়ে ফেলি, কভু মনে আনি ।  
আজি এ বসন্ত দিনে বিকশিত মন  
হেরিতেছি আমি এক অপূর্ব স্বপন ;—  
যেন এ জগৎ নাহি, কিছু নাহি আর,  
যেন শুধু আছে এক মহা পারাবার ।  
নাহি দিন নাহি রাত্রি নাহি দণ্ড পল,  
প্রলয়ের জলরাশি স্তব্ধ অচঞ্চল ।  
যেন তারি মাঝখানে পূর্ণ বিকাশিয়া  
একমাত্র পদ্ব তুমি রয়েছ ভাসিয়া ।  
নিত্যকাল মহাপ্রেমে বসি’ বিশ্বভূপ  
তোমামাঝে হেরিছেন আত্মপ্রতিরূপ ।

২৮শে চৈত্র, ১৩০২ ।

# মৌন

যাহা কিছু বলি আজি সব বৃথা হয়,  
মন বলে মাথা নাড়ি'—এ নয়, এ নয় ।  
যে কথায় প্রাণ মোর পরিপূর্ণতম  
সে কথা বাজে না কেন এ বীণায় মম ।  
সে শুধু ভরিয়া উঠি' অশ্রুর আবেগে  
হৃদয়-আকাশ ঘিরে ঘনঘোর মেঘে ;  
মাঝে মাঝে বিদ্রুতের বিদীর্ণ রেখায়  
অন্তর করিয়া ছিন্ন কি দেখাতে চায় ।  
মৌন নূক নুতসম ঘনায়ে আঁধারে  
সহসা নিশীথ রাত্রে কাঁদে শতধারে ।  
বাক্যভারে রুদ্ধকণ্ঠ, রে স্তম্ভিত প্রাণ,  
কোথায় হারায়ে এলি তোর যত গান ?  
বাঁশি যেন নাই, বৃথা নিশ্বাস কেবল ।  
রাগিণীর পরিবর্তে শুধু অশ্রুজল ।

২৯শে চৈত্র, ১৩০২ ।

## অসময়

বৃথা চেফটা রাখি' দাও ! স্তব্ধ নীরবতা  
আপনি গড়াবে তুলি' আপনার কথা ।  
আজি সে রয়েছে ধ্যানে,—এ হৃদয় মম  
তপোভঙ্গ-ভয়ভীত তপোবনসম ।  
এমন সময়ে হেথা বৃথা তুমি প্রিয়া  
বসন্তকুসুমমালা এসেছ পরিয়া ;  
এনেছ অঞ্চল ভরি' যৌবনের স্মৃতি,—  
নিভৃত নিকুঞ্জে আজি নাই কোনো গীতি ।  
শুধু এ মর্ম্মরহীন বনপথপরি  
তোমারি মঞ্জীর দুটি উঠিছে গুঞ্জরি ।  
প্রিয়তমে, এ কাননে এলে অসময়ে,  
কালিকার গান আজি আছে মৌন হ'য়ে ।  
তোমাতে হেরিয়া তা'রা হতেছে ব্যাকুল,  
অকালে ফুটিতে চাহে সকল মুকুল ।

২৯শে চৈত্র, ১৩০২

## গান

তুমি পড়িতেছ হেসে            তরঙ্গের মত এসে  
হৃদয়ে আমার ।

যৌবনসমুদ্রমাঝে            কোন্ পূর্ণিমায় আজি  
এসেছে জোয়ার ।

উচ্ছল পাগল নীরে    তালে তালে ফিরে ফিরে  
এ মোর নির্জ্জন তীরে কি খেলা তোমার !

মোর সর্ব্ব বক্ষ জুড়ে    কত নৃত্যে কত সুরে  
এস কাছে যাও দূরে শত লক্ষবার ।

তুমি পড়িতেছ হেসে            তরঙ্গের মত এসে  
হৃদয়ে আমার ।

জাগরণসম তুমি            আমার ললাট চুমি  
উদিচ্ছ নয়নে ।

স্বপ্নপ্তির প্রান্তনীরে    দেখা দেও ধীরে ধীরে  
নবীন কিরণে ।

দেখিতে দেখিতে শেষে    সকল হৃদয়ে এসে  
দাঁড়াও আকুল কেশে রাতুল চরণে,—

## চৈতালি

সকল আকাশ টুটে' তোমাতে ভরিয়া উঠে ;  
সকল কানন ফুটে জীবনে যৌবনে ।  
জাগরণসম তুমি আমার ললাট চুমি'  
উদিছ নয়নে ।

কুসুমের মত স্বসি' পড়িতেছ খসি' খসি'  
মোর বক্ষ পরে ।  
গোপন শিশিরছলে বিন্দু বিন্দু অশ্রুজলে  
প্রাণ সিক্ত করে ।  
নিঃশব্দ সৌরভরাশি পরাণে পশিছে আসি',  
সুখস্বপ্ন পরকাশি' নিভৃত অন্তরে ।  
পরশ-পুলকে ভোর চোখে আসে ঘুমঘোর,  
তোমাব চুম্বন মোর সর্ববাস্তবে ।  
কুসুমের মত স্বসি' পড়িতেছ খসি' খসি'  
মোর বক্ষ পরে ।

২৯শে চৈত্র, ১৩০২ ।

## শেষকথা

মাঝে মাঝে মনে হয়, শত কথাভারে  
হৃদয় পড়েছে যেন নুয়ে একেবারে ।  
যেন কোন্ ভাব-যজ্ঞ বহু আয়োজনে  
চলিতেছে অন্তরের স্তম্ভর সদনে ।  
অধীর সিন্ধুর মত কলধ্বনি তা'র  
অতি দূর হ'তে কানে আসে বারম্বার ।  
মনে হয় কত ছন্দ, কত না রাগিণী  
কত না আশ্চর্য্য গাথা, অপূর্ব কাহিনী,  
যত কিছু রচিয়াছে যত কবিগণে  
সব মিলিতেছে আসি' অপূর্ব মিলনে ;  
এখনি বেদনাভরে ফাটি' গিয়া প্রাণ  
উচ্ছ্বসি উঠিবে যেন সেই মহাগান ।  
অবশেষে বুক ফেটে শুধু বলি আসি—  
হে চিরসুন্দর, আমি তোরে ভালবাসি !



## বর্ষশেষ

নির্মল প্রভাতে আজি যত ছিল পাখী  
বনে বনে শাখে শাখে উঠিয়াছে ডাকি'  
দোয়েল শ্যামার কণ্ঠে আনন্দ-উচ্ছ্বাস,  
গেয়ে গেয়ে পাপিয়ার নাহি মিটে আশ  
করুণ মিনতিস্বরে অশ্রান্ত কোকিল  
অন্তরের আবেদনে ভরিছে নিখিল ।  
কেহ নাচে, কেহ গায়, উড়ে মন্তবৎ,  
ফিরিয়া পেয়েছে যেন হারানো জগৎ ।  
পাখীরা জানে না কেহ আজি বর্ষশেষ,  
বকবুদ্ধ কাছে নাহি শুনে উপদেশ ।  
যত দিন এ আকাশে এ জীবন আছে,  
বরষের শেষ নাহি তাহাদের কাছে ।  
মানুষ আনন্দহীন নিশিদিন ধরি'  
আপনারে ভাগ করে শতখানা করি' ।

৩০শে চৈত্র, ১৩০২

## সভয়

আজি বর্ষশেষ দিনে, গুরু মহাশয়,  
কারে দেখাইছ বসে' অন্তিমের ভয় !  
অনন্ত আশ্বাস আজি জাগিছে আকাশে,  
অনন্ত জীবনধারা বহিছে বাতাসে ।  
জগৎ উঠেছে হেসে জাগরণ-সুখে,  
ভয় শুধু লেগে আছে তব শুষ্ক মুখে !  
দেবতা রাক্ষস নহে মেলি' মৃত্যুগ্রাস ;  
প্রবঞ্চনা করি' তুমি দেখাইছ ত্রাস ।  
বরঞ্চ ঈশ্বরে ভুলি স্বপ্ন তাহে ক্ষতি,  
ভয় ঘোর অবিশ্বাস ঈশ্বরের প্রতি ।  
তিনি নিজে মৃত্যুকথা ভুলায়ে ভুলায়ে  
রেখেছেন আমাদের সংসার-কুলায়ে ।  
তুমি কে কর্কশ কণ্ঠ তুলিছ ভয়ের ।  
আনন্দই উপাসনা আনন্দময়ের ।

৩০শে চৈত্র, ১৩০২ ।

— — —

## অনাৰুষ্টি

শুনেছিঁ পুৰাকালে মানবীৰ প্ৰেমে  
দেবতারা স্বৰ্গ হ'তে আসিতেন নেমে ।  
সেকাল গিয়েছে । আজি এই বৃষ্টিহীন  
শুষ্কনদী দক্ষক্ষেত্ৰ বৈশাখের দিন  
কাতরে কৃষক-কন্যা অনুনয়-বাণী  
কহিতেছে বারম্বার—আয় বৃষ্টি হানি' ।  
ব্যাকুল প্ৰত্যাশাভরে গগনের পানে  
চাহিতেছে থেকে থেকে করুণ নয়ানে ।—  
তবু বৃষ্টি নাহি নামে, বাতাস বধির  
উড়ায়ে সকল মেঘ ছুটেছে অধীৰ ;  
আকাশের সৰ্ববরস রৌদ্ৰরসনায়  
লেহন করিল সূৰ্য্য । কলিযুগে, হায়  
দেবতারা বৃদ্ধ আজি ! নারীৰ মিনতি  
এখন কেবল খাটে মানবের প্ৰতি ।

২রা বৈশাখ, ১৩০৩

## অজ্ঞাত বিশ্ব

জন্মেছি তোমার মাঝে ক্ষণিকের তরে  
অসীম প্রকৃতি ! সরল বিশ্বাসভরে  
তবু তোরে গৃহ বলে' মাতা বলে' মানি ।  
আজ সন্ধ্যাবেলা তোর নখদন্ত হানি'  
প্রচণ্ড পিশাচরূপে ছুটিয়া গর্জিয়া  
আপনার মাতৃবেশ শূন্যে বিসর্জিয়া  
কুটি কুটি ছিন্ন করি', বৈশাখের ঝড়ে  
ধেয়ে এলি ভয়ঙ্করী ধূলিপঙ্কপরে,  
তৃণসম করিবারে প্রাণউৎপাটন ।  
সভয়ে শুধাই আজি, হে মহাভীষণ,  
অনন্ত আকাশপথ রুধি' চারিধারে  
কে তুমি সহস্রবাহু ঘিরেছ আমারে ?  
আমার ক্ষণিক প্রাণ কে এনেছে যাচি' ?  
কোথা মোরে যেতে হবে, কেন আমি আছি ?

২রা বৈশাখ, ১৩০৩ ।

## ভয়ের দুরাশা

জননী জননী বলে' ডাকি তোরে আসে,  
যদি জননীর স্নেহ মনে তোরে আসে  
শুনি' আৰ্ত্তস্বর । যদি ব্যাঘ্রিণীর মত  
অকস্মাৎ ভুলে গিয়ে হিংসা লোভ যত  
মানবপুত্রে করে স্নেহের লেহন ।  
নখর লুকায়ে ফেলি' পরিপূর্ণ স্তন  
যদি দাও মুখে তুলি', চিত্রাঙ্কিত বৃকে  
যদি ঘুমাইতে দাও মাথা রাখি' স্নুখে ।  
এমনি দুরাশা ! আছ তুমি লক্ষ কোটি  
গ্রহতারা চন্দ্র সূর্য্য গগনে প্রকটি'  
হে মহামহিম ! তুলি' তব বজ্রমুঠি  
তুমি যদি ধর আজি বিকট ভ্রুকুটি,  
আমি ক্ষীণ ক্ষুদ্র প্রাণ কোথা পড়ে' আছি,  
মা বলিয়া ভুলাইব তোমারে, পিশাচী !

২রা বৈশাখ, ১৩০৩ ।

## ভক্তের প্রতি

সরল সরস স্নিগ্ধ তরুণ হৃদয়,  
কি গুণে তোমারে আমি করিয়াছি জয়  
তাই ভাবি মনে । উৎফুল্ল উদ্ভান চোখে  
চেয়ে আছি মুখপানে প্রীতির আলোকে  
আমারে উজ্জ্বল করি' । তারুণ্য তোমার  
আপন লাবণ্যখানি ল'য়ে উপহার  
পরায় আমার কণ্ঠে,—সাজায় আমারে  
আপন মনের মত দেবতা আকারে  
ভক্তির উন্নত লোকে প্রতিষ্ঠিত করি' ।  
সেথায় একাকী আমি সসঙ্কোচে মরি ।  
সেথা নিত্য ধূপে দীপে পূজা-উপচারে  
অচল আসন পরে কে বাখে আমারে !  
গেয়ে গেয়ে ফিরি পথে আমি শুধু কবি,  
নহি আমি ধ্রুবতারা, নহি আমি রবি ।

২১শে আষাঢ়, ১৩০৩ ।

## নদীযাত্রা

চলেছে তরঙ্গী মোর শান্ত বায়ুভরে ।  
প্রভাতের শুভ্র মেঘ দিগন্ত শিয়রে ।  
বরষার ভরা নদী তৃপ্ত শিশুপ্রায়  
নিস্তরঙ্গ পুষ্ট অঙ্গ নিঃশব্দে ঘুমায় ।  
দুই কূলে স্তব্ধ ক্ষেত্র শ্যাম শস্যে ভরা,  
আলস্য-মন্তর যেন পূর্ণগর্ভা ধরা ।  
আজি সর্বদা জলস্থল কেন এত স্থির !  
নদীতে না হেরি তরী, জনশূন্য তীর ।  
পরিপূর্ণ ধরামাঝে বসিয়া একাকী  
চিরপুরাতন মৃত্যু আজি ম্লান আঁখি ।  
সেজেছে সুন্দর বেশে, কেশে মেঘভার  
পড়েছে মলিন আলো ললাটে তাহার ।  
গুঞ্জরিয়া গাহিতেছে সক্ররুণ তানে,  
ভুলায়ে নিতেছে মোর উতলা পরাণে ।

৭ই শ্রাবণ, ১৩০৩

## মৃত্যুমাধুরী

পরাণ কহিছে ধীরে—হে মৃত্যু মধুর,  
এই নীলাম্বর, একি তব অন্তঃপুর ?  
আজি মোর মনে হয় এ শ্যামলা ভূমি  
বিস্তীর্ণ কোমল শয্যা পাতিয়াছ তুমি ।  
জলে স্তলে লীলা আজি এই বরষার,  
এই শান্তি, এ লাবণ্য, সকলি তোমার ।  
মনে হয়, যেন তব মিলনবিহনে  
অতিশয় ক্ষুদ্র আমি এ বিশ্বভুবনে ।  
প্রশান্ত করুণচক্ষে, প্রসন্ন অধরে  
তুমি মোরে ডাকিতেছ সর্ব চরাচরে ।  
প্রথম মিলনভীতি ভেঙেছে বধূর,  
তোমার বিরাটমূর্তি নিরখি মধুর ।  
সর্বত্র বিবাহবাঁশি উঠিতেছে বাজি',  
সর্বত্র তোমার ক্রোড় হেরিতেছি আজি ।

৭ই শ্রাবণ, ১৩০৩ ।



## স্মৃতি

সে ছিল আরেক দিন এই তরী পরে,  
কণ্ঠ তা'র পূর্ণ ছিল সুধাগীতিস্বরে ।  
ছিল তা'র আঁখি দুটি ঘনপক্ষ্মাচ্ছায়,  
সজল মেঘের মত ভরা করুণায় ।  
কোমল হৃদয়খানি উদ্বেলিত সুখে,  
উচ্ছ্বসি উঠিত হাসি সরল কৌতুকে ।  
পাশে বসি' বলে' যেত কলকণ্ঠকথা,  
কত কি কাহিনী তা'র কত আকুলতা ।  
প্রত্নাবে আনন্দভরে হাসিয়া হাসিয়া  
প্রভাতপার্থীর মত জাগাত আসিয়া ।  
স্নেহের দৌরাভ্যা তা'র নির্ব্বারের প্রায়  
আমারে ফেলিত ঘোরি' বিচিত্র লীলায় ।  
আজি সে অনন্ত বিশ্বে আছে কোন্‌খানে  
তাই ভাবিতেছি বসি' সজল নয়ানে ।

৭ই শ্রাবণ, ১৩০৩

## বিলয়

যেন তা'র আঁখি দুটি নবনীল ভাসে  
ফুটিয়া উঠিছে আজি অসীম আকাশে ।  
বৃষ্টিধৌত প্রভাতের আলোক-হিল্লোলে  
অশ্রুমাখা হাসি তা'র বিকাশিয়া তোলে ।  
তা'র সেই স্নেহ-লীলা সহস্র আকারে  
সমস্ত জগৎ হ'তে ঘিরিছে আমারে ।  
বরষার নদীপরে চল চল আলো,  
দূর তাঁরে কাননের ছায়া কালো কালো,  
দিগন্তের শ্যামপ্রান্তে শান্ত মেঘরাজি  
তারি মুখখানি যেন শতরূপ সাজি' ।  
আঁখি তা'র কহে যেন মোর মুখে চাহি'  
“আজি প্রাতে সব পার্থা উঠিয়াছে গাহি’—  
শুধু মোর কণ্ঠস্বর এ প্রভাত বায়ে  
অনন্ত জগৎমাঝে গিয়েছে হারায়ে ।”

৭ই শ্রাবণ, ১৩০৩ ।



## প্রথম চুম্বন

স্তুক হ'ল দশদিক্ নত করি' আঁখি,—  
বন্ধ করি' দিল গান যত ছিল পাখী ।  
শান্ত হ'য়ে গেল বায়ু,—জলকলস্বর  
মুহূর্তে থামিয়া গেল—বনের মর্ম্মর  
বনের মর্ম্মের মাঝে মিলাইল ধীরে ।  
নিস্তরঙ্গ তটিনীর জনশূন্য তীরে  
নিঃশব্দে নামিল আসি' সায়াহুচ্ছায়ায়  
নিস্তক্ গগনপ্রান্ত নির্বাক্ ধরায় ।  
সেইক্ষণে বাতায়নে নীরব নির্জ্জন  
আমাদের দুজনের প্রথম চুম্বন ।  
দিক্ দিগন্তরে বাজি' উঠিল তখনি  
দেবালয়ে আরতির শঙ্খঘণ্টাধ্বনি ।  
অনন্ত নক্ষত্রলোক উঠিল শিহরি',  
আমাদের চক্ষে এল অশ্রুজল ভরি' ।

১০ই শ্রাবণ, ১৩০৩ ।

## শেষ চুম্বন

দূর স্বর্গে বাজে যেন নীরব ভৈরবী ।  
উষার করুণ চাঁদ শীর্ণ মুখচ্ছবি ।  
জ্ঞান হ'য়ে এল তারা ;—পূর্ব দিগ্ধর  
কপোল শিশিরসিক্ত, পাণ্ডুর বিধুর ।  
ধীরে ধীরে নিবে গেল শেষ দীপশিখা,  
খসে' গেল যামিনীর স্বপ্নবনিকা ।  
প্রবেশিল বাতায়নে পরিতাপসম  
রক্তরশ্মি প্রভাতের আঘাত নিশ্চয় ।  
সেইক্ষণে গৃহদ্বারে সত্বর সঘন  
আমাদের সর্ববশেষে বিদায় চুম্বন ।  
মুহূর্ত্তে উঠিল বাজি' চারিদিক্ হ'তে  
কর্মের ঘর্ঘরমন্দ সংসারের পথে ।  
মহারবে সিংহদ্বার খুলে বিশ্বপুরে ;  
অশ্রুজল মুছে ফেলি' চলি' গেলু দূরে

১০ই শ্রাবণ, ১৩০৩ ।

## যাত্রী

ওরে যাত্রী যেতে হবে বহুদূরদেশে ।  
কিসের করিস্ চিন্তা বসি' পথশেষে,  
কোন্‌ দুঃখে কাঁদে প্রাণ ! কার পানে চাহি'  
বসে' বসে' দিন কাটে শুধু গান গাহি'  
শুধু মুগ্ধনেত্র মেলি' । কার কথা শুনে  
মরিস্ জ্বলিয়া মিছে মনের আগুনে ।  
কোথায় রহিবে পড়ি' এ তোর সংসার,  
কোথায় পশিবে সেথা কলরব তা'র ?  
মিলাইবে যুগ যুগ স্বপনের মত,  
কোথা র'বে আজিকার কুশাকুরক্ষত ।  
নীরবে জ্বলিবে তব পথের দুধারে  
গ্রহতারকার দীপ কাতারে কাতারে ।  
তখনো চলেছ একা অনন্ত ভুবনে,  
কোথা হ'তে কোথা গেছ না রহিবে মনে ।

১১ই শ্রাবণ, ১৩০৩ ।

## তৃণ

হে বন্ধু প্রসন্ন হও, দূর কর ক্রোধ ।  
তোমাদের সাথে মোর বৃথা এ বিরোধ ।  
আমি চলিবারে চাই যেই পথ বাহি’  
সেথা কারো তরে কিছু স্থানাভাব নাহি ।  
সপ্তলোক সেই পথে চলে পাশে পাশে  
তবু তা’র অন্ত নাই মহান্ আকাশে ।  
তোমার ঐশ্বর্যরাশি গৃহভিতি মাঝে  
ব্রহ্মাণ্ডেরে তুচ্ছ করি’ দীপ্তগর্বে সাজে,—  
তা’রে সেই বিশ্বপথে করিলে বাহির  
মুহূর্ত্তে সে হবে ক্ষুদ্র গ্লান নতশির,—  
সেথা তা’র চেয়ে শ্রেষ্ঠ নব তৃণদল  
বরষার বৃষ্টিধারে সরস শ্যামল ।  
সেথা তা’র চেয়ে শ্রেষ্ঠ, ওগো অভিমান,  
এ আমার আজিকার অতিক্ষুদ্র গান ।

১১ই শ্রাবণ, ১৩০৩ ।

## ঐশ্বর্য

ক্ষুদ্র এই তৃণদল ব্রহ্মাণ্ডের মাঝে  
সরল মাহাত্ম্য ল'য়ে সহজে বিরাজে ।  
পূরবের নব সূর্য্য, নিশীথের শশী,  
তৃণটি তাদেরি সাথে একাসনে বসি' ।  
আমার এ গান এও জগতেরি গানে  
মিশে যায় নিখিলের মর্ম্মমাঝখানে ;—  
শ্রাবণের ধরাপাত, বনের মর্ম্মর  
সকলের মাঝে তা'র আপনার ঘর ।  
কিন্তু, হে বিলাসী, তব ঐশ্বর্য্যের ভার  
ক্ষুদ্র রুদ্ধদ্বারে শুধু একাকী তোমার ।  
নাহি পড়ে সূর্যালোক, নাহি চাহে চাঁদ,  
নাহি তাহে নিখিলের নিত্য আশীর্ব্বাদ ।  
সম্মুখে দাঁড়ালে মৃত্যু মুহূর্ত্তেই হয়  
পাংশু পাণ্ডু শীর্ণ গ্লান মিথ্যা হ'য়ে যায় !

১৪ই শ্রাবণ, ১৩০৩ ।

## স্বার্থ

কেরে তুই, ওরে স্বার্থ, তুই কতটুকু,  
তোর স্পর্শে ঢেকে যায় ব্রহ্মাণ্ডের মুখ,  
লুকায় অনন্ত সত্য,—স্নেহ সখ্য প্রীতি  
মূহুর্তে ধারণ করে নির্লজ্জ বিকৃতি,—  
থেমে যায় সৌন্দর্যের গীতি চিরন্তন  
তোর তুচ্ছ পরিহাসে । ওগো বন্ধুগণ  
সব স্বার্থ পূর্ণ হোক । ক্ষুদ্রতম কণা  
ভাঙারে টানিয়া আন—কিছু ত্যজিয়ো না  
আমি লইলাম বাড়ি' চিরপ্রেমখানি  
জাগিছে যাহার মুখে অনন্তের বাণী  
অমৃতে অশ্রুতে মাখা । মোর তরে থাক  
পরিহাস পুরাতন বিশ্বাস নির্বাক ।  
থাক মহাবিশ্ব, থাক হৃদয়-আসীনা  
অন্তরের মাঝখানে যে বাজায় বীণা ।

১১ই শ্রাবণ, ১৩০৩ ।



## প্রেয়সী

হে প্রেয়সী, হে শ্রেয়সী, হে বীণাবাদিনী,  
আজি মোর চিত্তপদ্মে বসি' একাকিনী  
ঢালিতেছ স্বর্গসুখা ; মাথার উপর  
সছস্নাত বরষার স্বচ্ছ নীলাম্বর  
রাখিয়াছে স্নিগ্ধহস্ত আশীর্ব্বাদে ভরা ;  
সম্মুখেতে শস্ত্রপূর্ণ হিল্লোলিত ধরা  
বুলায় নয়নে মোর অমৃত চুম্বন ;  
উতলা বাতাস আসি' করে আলিঙ্গন ;  
অন্তরে সঞ্চার করি' আনন্দের বেগ  
বহে' যায় ভরা নদী ; মধ্যাহ্নের মেঘ  
স্বপ্নমালা গাঁথি' দেয় দিগন্তের ভালে ।  
তুমি আজি মুগ্ধমুখী আমারে ভুলালে,  
ভুলাইলে সংসারের শতলক্ষ কথা—  
বীণাস্বরে রচি' দিলে মহা নীরবতা ।

১১ই শ্রাবণ, ১৩০৩ ।

## শান্তিমন্ত্র

কাল আমি তরী খুলি' লোকালয় মাঝে  
আবার ফিরিয়া যাব আপনার কাজে,—  
হে অন্তর্যামিনী দেবী ছেড়ো না আমারে,  
যেয়ো না একেলা ফেলি' জনতা-পাথারে  
কস্ম-কোলাহলে । সেথা সর্ববাক্কনায়  
নিত্য যেন বাজে চিত্তে তোমার বীণায়  
এমনি মঙ্গলধ্বনি । বিদ্রোহের বাণে  
বক্ষ বিদ্ধ করি' যবে রক্ত টেনে আনে  
তোমার সান্ত্বনাসুধা অশ্রুবারিসম  
পড়ে যেন বিন্দু বিন্দু ক্ষতপ্রাণে মম ।  
বিরোধ উঠিবে গর্জি' শতফণা ফণী,  
তুমি মৃদুস্বরে দিয়ো শান্তিমন্ত্রধ্বনি—  
স্বার্থ মিথ্যা, সব মিথ্যা—বোলো কানে কানে-  
আমি শুধু নিত্য সত্য তোর মাঝখানে ।

১১ই শ্রাবণ, ১৩০৩ ।

## কালিদাসের প্রতি

আজ তুমি কবি শুধু, নহ আর কেহ—  
কোথা তব রাজসভা, কোথা তব গেহ,  
কোথা সেই উজ্জয়িনী,—কোথা গেল আজ  
প্রভু তব, কালিদাস,—রাজঅধিরাজ ।  
কোনো চিহ্ন নাই কারো ! আজ মনে হয়  
ছিলে তুমি চিরদিন চিরানন্দময়  
অলকার অধিবাসী । সন্ধ্যাভ্রশিখরে  
ধ্যান ভাঙি' উমাপতি ভূমানন্দভরে  
নৃত্য করিতেন যবে, জলদ সজল  
গর্জিত মৃদঙ্গরবে, তড়িৎ চপল  
ছন্দে ছন্দে দিত তাল, তুমি সেই ক্ষণে  
গাহিতে বন্দনা গান,—গীতিসমাপনে  
কর্ণ হ'তে বহি' খুলি' স্নেহহাস্যভরে  
পরায়ে দিতেন গৌরী তব চূড়াপরে ।

১১ই শ্রাবণ, ১৩০৩ ।

## কুমারসম্ভবগান

যখন শুনালে কবি, দেবদম্পতীরে  
কুমারসম্ভবগান,—চারিদিকে ঘিরে  
দাঁড়াল প্রমথগণ,—শিখরের পর  
নামিল মন্তর শাস্ত সন্ধ্যা-মেঘস্তর,—  
স্থগিত বিদ্যুৎলীলা, গর্জ্জন বিরত,  
কুমারের শিখী করি' পুচ্ছ অবনত  
স্থির হ'য়ে দাঁড়াইল পার্বতীর পাশে  
বাঁকায়ে উন্নত-গ্রীবা । কভু স্মিতহাসে  
কাঁপিল দেবীর ওষ্ঠ,—কভু দার্য্যশ্বাস  
অলক্ষ্যে বহিল,—কভু অশ্রুজলোচ্ছ্বাস  
দেখা দিল আঁখিপ্ৰান্তে—যবে অবশেষে  
ব্যাকুল সরমখানি নয়ন-নিমেষে  
নামিল নীরবে,—কবি, চাহি' দেবীপানে  
সহসা থামিলে তুমি অসমাপ্তগানে ।

১৫ই শ্রাবণ, ১৩০৩ ।

## মানসলোক

মানসকৈলাসশৃঙ্গে নির্জন্মভুবনে  
ছিলে তুমি মহেশের মন্দিরপ্রাঙ্গণে  
তঁাহার আপন কবি,—কবি কালিদাস,  
নীলকণ্ঠদ্ব্যতিসম স্নিগ্ধ-নীল-ভাস  
চিরস্থির আঘাড়ে ঘনমেঘদলে,  
জ্যোতির্ময় সপ্তর্ষির তপোলোকতলে ।  
আজিও মানসধামে করিছ বসতি ;—  
চিরদিন র'বে সেথা ওহে কবিপতি,  
শঙ্করচরিত্রগানে ভরিয়া ভুবন ।—  
মাঝে হ'তে উজ্জয়িনী রাজনিকেতন,  
নৃপতি বিক্রমাদিত্য, নবরত্নসভা,  
কোথা হ'তে দেখা দিল স্বপ্ন ক্ষণপ্রভা ।  
সে স্বপ্ন মিলায়ে গেল, সে বিপুলচ্ছবি,  
রহিলে মানসলোকে তুমি চিরকবি ।

১৫ই শ্রাবণ, ১৩০৩ ।

## কাব্য

তবু কি ছিল না তব স্মৃতি দুঃখ যত  
আশা নৈরাশ্যের দ্বন্দ্ব আমাদেরি মত  
হে অমর কবি ! ছিল না কি অনুক্ষণ  
রাজসভা ষড়চক্র, আঘাত গোপন ।  
কখনো কি সহ নাই অপমানভার,  
অনাদর, অবিশ্বাস, অন্যায় বিচার,  
অভাব কঠোর ক্রুর,—নিদ্রাহীন রাতি  
কখনো কি কাটে নাই বক্ষে শেল গাঁথি' ।  
তবু সে সবার উর্দ্ধে নির্লিপ্ত নিশ্চল  
ফুটিয়াছে কাব্য তব সৌন্দর্য্যকমল  
আনন্দের সূর্য্যপানে ; তা'র কোনো ঠাঁই  
দুঃখদৈন্য দুদ্দিনের কোনো চিহ্ন নাই ।  
জীবনমন্ডনবিষ নিজেরি পান,  
অমৃত যা উঠেছিল করে' গেছ দান ।

১১ই শ্রাবণ, ১৩০৩ ।

## প্রার্থনা।

আজি, কোন্ ধন হ'তে বিশ্বে আমারে  
কোন্ জনে করে' বঞ্চিত,—  
তব চরণ-কমল-রতন-রেণুকা  
অন্তরে আছে সঞ্চিত ।  
কত নিষ্ঠুর কঠোর ঘরষে ঘরষে  
মর্ম্য মাঝারে শল্য বরষে  
তবু প্রাণ মন পীযুষপরশে  
পলে পলে পুলকাঞ্চিত ।  
আজি কিসের পিপাসা মিটিল না, ওগো  
পরম পরাণ-বল্লভ ।  
চিতে চিরসুখা করে সঞ্চার, তব  
সকরুণ কর-পল্লব ।  
হেথা কত দিনে রাতে অপমান-ঘাতে  
আছি নতশির গঞ্জিত,  
তবু চিত্তললাট তোমারি স্বকরে  
রয়েছে তিলকরঞ্জিত ।  
হেথা কে আমার কানে কঠিন বচনে  
বাজায় বিরোধঝঙ্কনা ।  
প্রাণে দিবসরজনী উঠিতেছে ধ্বনি  
তোমারি বাণীর গুঞ্জনা ।

## প্রার্থনা

নাথ, যার যাহা আছে তা'র তাই থাক  
আমি থাকি চিরলাঞ্ছিত,—  
শুধু তুমি এ জীবনে নয়নে নয়নে  
থাক থাক চিরবাঞ্ছিত ।

১৪ই শ্রাবণ, ১৩০৩ ।





## ইছামতী নদী

অয়ি তব্বী ইছামতী তব তীরে তীরে  
শান্তি চিরকাল থাক্ কুটীরে কুটীরে,—  
শস্ত্রে পূর্ণ হোক ক্ষেত্র তব তটদেশে ।—  
বর্ষে বর্ষে বরষায় আনন্দিত বেশে  
ঘনঘোরঘটাসাথে বজ্রবাঘরবে  
পূর্ববায়ু-কল্লোলিত তরঙ্গউৎসবে  
তুলিয়া আনন্দধ্বনি দক্ষিণে ও বামে  
আশ্রিত পালিত তব দুই তটগ্রামে,  
সমারোহে চলে' এস শৈলগৃহ হ'তে  
সৌভাগ্যে শোভায় গর্বে উল্লসিতশ্রোতে  
যখন র'ব না আমি, র'বে না এ গান,  
তখনো ধরার বক্ষে সঞ্চরিয়া প্রাণ,  
তোমার আনন্দগাথা এ বঙ্গে, পার্বতী,  
বর্ষে বর্ষে বাজিবেক অয়ি ইছামতী ।

১৪ই শ্রাবণ, ১৩০৩ ।

## শুশ্রূষা

ব্যথাক্রান্ত মোর প্রাণ ল'য়ে তব ঘরে  
অতিথিবৎসলা নদী কত স্নেহভরে  
শুশ্রূষা করিলে আজি,—স্নিগ্ধ হস্তখানি  
দগ্ধ হৃদয়ের মাঝে সুধা দিল আনি' ।  
সায়ারু আসিল নামি' পশ্চিমের তীরে,  
ধান্যক্ষেত্রে রক্ত রবি অস্ত গেল ধীরে ।  
পূর্ববর্তীতে গ্রাম বন নাহি যায় দেখা,  
জ্বলন্ত দিগন্তে শুধু মসীপুঞ্জরেখা ;  
সেথা অন্ধকার হ'তে আনিছে সমীর  
কর্ষ্যাবসানধ্বনি অজ্ঞাত পল্লীর ।  
দুই তীর হ'তে তুলি' দুই শান্তিপাখা  
আমারে বুকের মাঝে দিলে তুমি ঢাকা ।  
চুপি চুপি বলি' দিলে—বৎস, জেনো সার,  
সুখ দুঃখ বাহিরের, শান্তি সে আত্মার ।

১৪ই শ্রাবণ, ১৩০৩ ।

## আশিষ-গ্রহণ

চলিয়াছি রণক্ষেত্রে সংগ্রামের পথে ।  
সংসারবিপ্লবধ্বনি আসে দূর হ'তে ।  
বিদায় নেবার আগে, পারি যতক্ষণ  
পরিপূর্ণ করি' লই মোর প্রাণমন  
নিত্যউচ্চারিত তব কমকণ্ঠস্বরে  
উদার মঙ্গলমন্ত্রে—হৃদয়ের পরে  
লই তব শুভস্পর্শ, কল্যাণসঞ্চয় ।  
এই আশীর্বাদ কর, জয়পরাজয়  
ধরি যেন নম্রচিন্তে করি' শির নত  
দেবতার আশীর্বাদী কুসুমের মত ।  
বিশ্বস্ত স্নেহের মূর্ত্তি দুঃস্বপ্নের প্রায়  
সহসা বিরূপ হয়—তবু যেন তায়  
আমার হৃদয়স্থধা না পায় বিকার,  
আমি যেন আমি থাকি নিত্য আপনার ।

১৪ই শ্রাবণ, ১৩০৩ ।

## বিদায়

হে তটিনী, সে নগরে নাই কলস্বন  
তোমার কণ্ঠের মত ;—উদার গগন  
—অলিখিত মহাশাস্ত্র—নীল পত্রগুলি  
দিব্ হ’তে দিগন্তরে নাহি রাখে খুলি’ ;—  
শাস্ত্র স্নিগ্ধ বসুন্ধরা শ্যামল অঞ্জনে  
সত্যের স্বরূপখানি নির্মল নয়নে  
রাখে না নবীন করি’ ; সেথায় কেবল  
একমাত্র আপনার অন্তর সম্বল  
অকূলের মাঝে । তাই প্রাণপণে  
হৃদয় চাহে না আজি লইতে বিদায়  
তোমাসবাকার কাছে । তাই ভীত শিশুপ্রায়  
আঁকড়িয়া ধরিতেছে আর্ত আলিঙ্গনে  
নির্জ্জন লক্ষ্মীরে । শুভশাস্তিপত্র তব  
অন্তরে বাঁধিয়া দাও, কণ্ঠে পরি’ লব ।

১৪ই শ্রাবণ, ১৩০৩ ।



କହ୍ନା



# কল্পনা



## দুঃসময়

যদিও সন্ধ্যা আসিছে মন্দ মন্তরে  
সব সঙ্গীত গেছে ইঙ্গিতে থামিয়া,  
যদিও সঙ্গী নাই অনন্ত অম্বরে,  
যদিও ক্লান্তি আসিছে অঙ্গে নামিয়া,  
মহা আশঙ্কা জপিছে মৌন মন্তরে,  
দিব্ দিগন্ত অবগুণ্ঠনে ঢাকা,  
তবু বিহঙ্গ, ওরে বিহঙ্গ মোর,  
এখনি, অন্ধ, বন্ধ কোরো না পাখা ।

এ নহে মুখর বন-মন্দির গুঞ্জিত,  
এ যে অজাগর-গরজে সাগর ফুলিছে ;  
এ নহে কুঞ্জ কুন্দ-কুসুমরঞ্জিত,  
ফেন-হিল্লোল কল-কল্লোলে ঢুলিছে ;



## কল্পনা

কোথারে সে তীর ফুল-পল্লব-পুঞ্জিত,  
কোথারে সে নীড়, কোথা আশ্রয়-শাখা ।  
তবু বিহঙ্গ, ওরে বিহঙ্গ মোর,  
এখনি, অন্ধ, বন্ধ কোরো না পাখা ।

এখনো সমুখে রয়েছে সূচির শর্ববরী,  
ঘুমায় অরুণ স্তদূর অস্ত-অচলে ;  
বিশ্ব-জগৎ নিশ্বাসবায়ু সম্বরি’  
স্তব্ধ আসনে প্রহর গণিছে বিরলে ;  
সবে দেখা দিল অকূল তিমির সন্তুরি’  
দূর দিগন্তে ক্ষীণ শশাঙ্ক বাঁকা ;  
ওরে বিহঙ্গ, ওরে বিহঙ্গ মোর,  
এখনি, অন্ধ, বন্ধ কোরো না পাখা ।

উর্দ্ধ আকাশে তারাগুলি মেলি’ অঙ্গুলি  
ইঙ্গিত করি’ তোমাপানে আছে চাহিয়া ;  
নিম্নে গভীর অধীর মরণ উচ্ছলি’  
শত তরঙ্গে তোমাপানে উঠে ধাইয়া ;  
বহুদূর তীরে কারা ডাকে বাঁধি’ অঞ্জলি  
এস এস সুরে করুণ মিনতি-মাখা ;  
ওরে বিহঙ্গ, ওরে বিহঙ্গ মোর,  
এখনি, অন্ধ, বন্ধ কোরো না পাখা ।

ওরে ভয় নাই, নাই স্নেহ-মোহবন্ধন,  
ওরে আশা নাই, আশা শুধু মিছে ছলনা  
ওরে ভাষা নাই, নাই বৃথা বসে' ক্রন্দন,  
ওরে গৃহ নাই, নাই ফুল-শেজ-রচনা ।  
আছে শুধু পাখা, আছে মহা নভ-অঙ্গন  
উষা-দিশাহারা নিবিড়-তিমির-আঁকা,  
ওরে বিহঙ্গ, ওরে বিহঙ্গ মোর,  
এখনি, অন্ধ, বন্ধ কোরো না পাখা ।

১৩০৪ ।

## বর্ষামঙ্গল

ঐ আসে ঐ অতি ভৈরব হরষে  
জলসিঞ্চিত ক্ষিতিসৌরভ-রভসে  
ঘনগৌরবে নবযৌবনা বরষা  
শ্যামগম্ভীর সরসা ।  
গুরুগর্জনে নীল অরণ্য শিহরে  
উতলা কলাপী কেকা-কলরবে বিহরে ;  
নিখিল-চিন্ত-হরষা  
ঘনগৌরবে আসিছে মত্ত বরষা ।

কোথা তোরা অয়ি তরুণী পথিক-ললনা,  
জনপদবধূ তড়িৎ-চকিত-নয়না,  
মালতীমালিনী কোথা প্রিয়-পরিচারিকা,  
কোথা তোরা অভিসারিকা ।  
ঘনবনতলে এস ঘননীলবসনা,  
ললিত নৃত্যে বাজুক স্বর্ণরসনা,  
আনো বীণা মনোহারিকা ।  
কোথা বিরহিণী, কোথা তোরা অভিসারিকা ।

আন মৃদঙ্গ, মুরজ, মুরলী মধুরা,  
 বাজাও শঙ্খ, হনুরব কর বধূরা,  
 এসেছে বরষা, ওগো নব অনুরাগিণী,  
 ওগো প্রিয়সুখভাগিনী ।  
 কুঞ্জকুটীরে, অয়ি ভাবাকুললোচনা,  
 ভূর্জ-পাতায় নব গীত কর রচনা  
 মেঘমল্লার রাগিণী ।  
 এসেছে বরষা, ওগো নব অনুরাগিণী ।

কেতকীকেশরে কেশপাশ কর সুরভি,  
 ক্ষীণ কটিতটে গাঁথি' ল'য়ে পর করবী,  
 কদম্বরেণু বিছাইয়া দাও শয়নে,  
 অঞ্জন আঁক নয়নে ।  
 তালে তালে ছুটি কঙ্কণ কনকনিয়া  
 ভবন-শিখীরে নাচাও গণিয়া গণিয়া  
 স্নিত-বিকশিত বয়নে ;  
 কদম্বরেণু বিছাইয়া ফুল-শয়নে ।

স্নিগ্ধসজল মেঘকজ্জল দিবসে  
 বিবশ প্রহর অচল অলস আবেশে ;

## কল্পনা

শশিতারাহীনা অন্ধতামসী যামিনী ;  
কোথা তোরা পুরকামিনী ।  
আজিকে দুয়ার রুদ্ধ ভবনে ভবনে  
জনহীন পথ কাঁদিছে ক্ষুদ্র পবনে,  
চমকে দীপ্ত দামিনী ;  
শূন্যশয়নে কোথা জাগে পুরকামিনী ।

যুথী-পরিমল আসিছে সজল সমীরে,  
ডাকিছে দাদুরী তমালকুঞ্জ-তিমিরে,  
জাগে সহচরী আজিকার নিশি ভুলো না,  
নীপশাথে বাঁধ ঝুলনা ।  
কুসুম-পরাগ ঝরিবে ঝলকে ঝলকে  
অধরে অধরে মিলন অলকে অলকে,  
কোথা পুলকের তুলনা ।  
নীপশাথে সখি ফুলডোরে বাঁধ ঝুলনা ।

এসেছে বরষা, এসেছে নবীন বরষা,  
গগন ভরিয়া এসেছে ভুবন-ভরসা,  
ছলিছে পবনে সনসন বন-বীথিকা ।  
গীতময় তরুলতিকা ।

শতেক যুগের কবিদলে মিলি' আকাশে  
ধ্বনিয়া তুলিছে মন্ডমদির বাতাসে  
শতেক যুগের গীতিকা ।  
শত শত গীত-মুখরিত বন-বীথিকা ।

১৩০৪ ।



## চৌর-পঞ্চাশিকা

ওগো সুন্দর চোর,  
বিছা তোমার কোন্ সন্ধ্যার  
কনক চাঁপার ডোর ।  
কত বসন্ত ঢলি' গেছে হায়,  
কত কবি আজি কত গান গায়,  
কোথা রাজবালা চিরশয্যায়  
ওগো সুন্দর চোর,  
কোনো গানে আর ভাঙে না যে তা'র  
অনন্ত ঘুমঘোর ।

ওগো সুন্দর চোর,  
কত কাল হ'ল কবে সে প্রভাতে  
তব প্রেমনিশি ভোর ।  
কবে নিবে গেছে নাহি তাহা লিখা  
তোমার বাসরে দীপানল-শিখা,  
খসিয়া পড়েছে সোহাগ-লতিকা,  
ওগো সুন্দর চোর,  
শিথিল হয়েছে নবীন প্রেমের  
বাহুপাশ স্নকঠোর ।

## চোর-পঞ্চাশিকা

তবু সুন্দর চোর,  
মৃত্যু হারায়ে কেঁদে কেঁদে ঘুরে  
পঞ্চাশ শ্লোক তোর ।  
পঞ্চাশবার ফিরিয়া ফিরিয়া  
বিছার নাম ঘিরিয়া ঘিরিয়া  
তীত্র ব্যথায় মশ্ম চিরিয়া  
ওগো সুন্দর চোর,  
যুগে যুগে তা'রা কাঁদিয়া মরিছে  
মুঢ় আবেগে ভোর ।

ওগো সুন্দর চোর,  
অবোধ তাহারা বধির তাহারা  
অন্ধ তাহারা ঘোর ।  
দেখে না শোনে না কে আসে কে যায়,  
জানে না কিছুই কারে তা'রা চায়,  
শুধু এক নাম এক সুরে গায়  
ওগো সুন্দর চোর—  
না জেনে না বুঝে বার্থ ব্যথায়  
ফেলিছে নয়নলোর ।

ওগো সুন্দর চোর,  
এক সুরে বাঁধা পঞ্চাশ গাথা  
শুনে মনে হয় মোর—



## কল্পনা

রাজভবনের গোপনে পালিত,  
রাজবালিকার সোহাগে লালিত,  
তব বুকে বসি' শিখোঁছিল গীত  
ওগো সুন্দর চোর,  
পোষা শুকসারী মধুরকণ্ঠ  
যেন পঞ্চাশজোড়।

ওগো সুন্দর চোর,  
তোমারি রচিত সোনার ছন্দ-  
পিঞ্জরে তা'রা ভোর।  
দেখিতে পায় না কিছু চারিধারে,  
শুধু চিরনিশি গাহে বারেবারে  
তোমাদের চিরশয়নদুয়ারে  
ওগো সুন্দর চোর—  
আজি তোমাদের দুজনের চোখে  
অনন্ত ঘুমঘোর।

১৩০৪।

## স্বপ্ন

দূরে বহুদূরে

স্বপ্নলোকে উজ্জয়িনী পুরে

খুঁজিতে গেছিছু কবে শিপ্রানদী পারে

মোর পূর্বজনমের প্রথমা প্রিয়ারে ।

মুখে তা'র লোধরেণু, লীলাপদ্ম হাতে;

কর্ণমূলে কুন্দকলি, কুরুবক মাথে,

তনু দেহে রক্তাম্বর নীবীবন্ধে বাঁধা,

চরণে নৃপূরখানি বাজে আধা আধা ।

বসন্তের দিনে

ফিরেছিছু বহুদূরে পথ চিনে চিনে ।

মহাকাল মন্দিরের মাঝে

তখন গম্ভীরমন্দ্রে সন্ধ্যারতি বাজে ।

জনশূন্য পণ্যবীথি,—উর্দ্ধে যায় দেখা

অন্ধকার হর্ষ্যাপরে সন্ধ্যারশ্মিরেখা ।

প্রিয়ার ভবন

বন্ধিম সঙ্কীর্ণপথে দুর্গম নির্জ্জন ।

দ্বারে আঁকা শঙ্খ চক্র, তারি দুই ধারে

দুটি শিশু নীপতরু পুত্রস্নেহে বাড়ে ।

## কল্পনা

তোরণের শ্বেতস্তম্ভপরে  
সিংহের গস্তীর মূর্তি বসি' দস্তভরে ।

প্রিয়ার কপোতগুলি ফিরে এল ঘরে,  
ময়ূর নিদ্রায় মগ্ন স্বর্ণদণ্ড পরে ।

হেনকালে হাতে দীপশিখা  
ধীরে ধীরে নামি' এল মোর মালবিকা ।  
দেখা দিল দ্বারপ্রান্তে সোপানের পরে  
সন্ধ্যার লক্ষ্মীর মত সন্ধ্যাতারা করে ।  
অঙ্গের কুঙ্কুমগন্ধ কেশ-ধূপবাস  
ফেলিল সর্বদাঙ্গে মোর উতলা নিশ্বাস ।  
প্রকাশিল অর্দ্ধচ্যুত বসন-অন্তরে  
চন্দনের পত্রলেখা বাম পয়োধরে ।

দাঁড়াইল প্রতিমার প্রায়  
নগরগুঞ্জনক্ষান্ত নিস্তব্ধ সন্ধ্যায় ।

মোরে হেরি প্রিয়া  
ধীরে ধীরে দীপখানি দ্বারে নামাইয়া  
আইল সম্মুখে,—মোর হস্তে হস্ত রাখি'  
নীরবে স্খাল শুধু, স করুণ আঁখি,  
“হে বন্ধু, আচ্ছ ত ভালো ?”—মুখে তা'র চাহি'  
কথা বলিবারে গেলু—কথা আর নাহি ।

সে ভাষা ভুলিয়া গেছি,—নাম দৌহাকার  
 দুজনে ভাবিনু কত,—মনে নাহি আর ।  
 দুজনে ভাবিনু কত চাহি' দৌহাপানে,  
 অঝোরে ঝরিল অশ্রু নিঃস্পন্দ নয়ানে ।

দুজনে ভাবিনু কত দ্বারতরুতলে ।  
 নাহি জানি কখন কি ছলে  
 সুকোমল হাতখানি লুকাইল আসি'  
 আমার দক্ষিণকরে,—কুলায়প্রত্যাশী  
 সন্ধ্যার পাখীর মত ; মুখখানি তা'র  
 নতবৃত্ত পদ্যসম এ বক্ষে আমার  
 নমিয়া পড়িল ধীরে ;—ব্যাকুল উদাস  
 নিঃশব্দে মিলিল আসি' নিশ্বাসে নিশ্বাস ।

রজনীর অন্ধকার  
 উজ্জয়িনী করি দিল লুপ্ত একাকার ।  
 দীপ দ্বারপাশে  
 কখন নিবিয়া গেল ছুরন্ত বাতাসে ।  
 শিপ্রানদীতীরে  
 আরতি থামিয়া গেল শিবের মন্দিরে ।

## মদনভস্মের পূর্বে

একদা তুমি অঙ্গ ধরি' ফিরিতে নব ভুবনে  
মরি মরি অনঙ্গ দেবতা ।  
কুসুমরথে মকরকেতু উড়িত মধুপবনে  
পথিকবধু চরণে প্রণতা ।  
ছড়াত পথে আঁচল হ'তে অশোক চাঁপা করবী  
মিলিয়া যত তরুণ তরুণী,  
বকুলবনে পবন হ'ত সুরার মত সুরভি  
পরাণ হ'ত অরুণবরণী ।

সন্ধ্যা হ'লে কুমারীদলে বিজন তব দেউলে  
জ্বালায়ে দিত প্রদীপ যতনে,  
শূন্য হ'লে তোমার তুণ বাছিয়া ফুল-মুকুলে  
সায়ক তা'রা গড়িত গোপনে ।  
কিশোর কবি মুগ্ধ ছবি বসিয়া তব সোপানে  
বাজায়ে বীণা রচিত রাগিণী ।  
হরিণ সাথে হরিণী আসি' চাহিত দীন নয়ানে,  
বাঘের সাথে আসিত বাঘিনী ।

হাসিয়া যবে তুলিতে ধনু প্রণয়ভীরু ষোড়শী  
চরণে ধরি' করিত মিনতি ।  
পঞ্চশর গোপনে ল'য়ে কৌতূহলে উলসি'  
পরখন্ডে খেলিত যুবতী ।  
শ্যামল তৃণশয়নতলে ছড়ায়ে মধু-মাধুরী  
যুমাতে তুমি গভীর আলসে,  
ভাঙাতে যুম লাজুক বধু করিত কত চাতুরী  
নূপুর দুটি বাজাত লালসে ।

কাননপথে কলস ল'য়ে চলিত যবে নাগরী  
কুসুমশর মারিতে গোপনে,  
যমুনাকূলে মনের ভূলে ভাসায়ে দিয়ে গাগরী  
রহিত চাহি' আকুল নয়নে ।  
বাহিয়া তব কুসুমতরী সমুখে আসি' হাসিতে  
সরমে বালা উঠিত জাগিয়া,  
শাসনতরে বাঁকায়ে ভুরু নামিয়া জলরাশিতে  
মারিত জল হাসিয়া রাগিয়া ।

তেমনি আজো উদিছে বিধু মাতিছে মধুযামিনী  
মাধবীলতা মুদিছে মুকূলে ।  
বকুলতলে বাঁধিছে চুল একেলা বসি' কামিনী  
মলয়ানিল-শিথিল দুকূলে ।

বিজন নদীপুলিনে আজো ডাকিছে চখা চখীরে  
মাঝেতে বহে বিরহ-বাহিনী ।  
গোপনব্যথা-কাতরা বালা বিরলে ডাকি' সখীরে  
কাঁদিয়া কহে করুণ কাহিনী ।

এসগো আজি অঙ্গ ধরি' সঙ্গে করি' সখারে  
বন্যমালা জড়ায়ে অলকে,  
এস গোপনে মৃদু চরণে বাসরগৃহদ্বারে  
স্তিমিতশিখা প্রদীপআলোকে ।  
এস চতুর মধুরহাসি তড়িৎসম সহসা  
চকিত কর বধূরে হরষে,  
নবীন কর মানবঘর ধরণী কর বিবশা  
দেবতাপদ-সরস-পরশে ।

১৩০৪ ।

## মদনভস্মের পর

পঞ্চশরে দণ্ড করে' করেছ এ কি, সন্ন্যাসী,  
বিশ্বময় দিয়েছ তা'রে ছড়ায়ে ।  
ব্যাকুলতর বেদনা তা'র বাতাসে উঠে নিশ্বাসি'  
অশ্রু তা'র আকাশে পড়ে গড়ায়ে ।  
ভরিয়া উঠে নিখিল ভব রতি-বিজাপ-সঙ্গীতে  
সকল দিক কাঁদিয়া উঠে আপনি ।  
ফাগুনমাসে নিমেষ মাঝে না জানি কার ইঙ্গিতে  
শিহরি উঠি' মূরছি' পড়ে অবনী ।

আজিকে তাই বুঝিতে নারি কিসের বাজে যজ্ঞণা  
হৃদয়-বীণা-যন্ত্রে মহা পুলকে,  
তরুণী বসি' ভাবিয়া মরে কি দেয় তা'রে মন্ত্রণা  
মিলিয়া সবে দু্যলোকে আর ভুলোকে ।  
কি কথা উঠে মর্ম্মরিয়া বকুল-তরু-পল্লবে,  
ভ্রমর উঠে গুঞ্জরিয়া কি ভাষা ।  
উর্দ্ধমুখে সূর্য্যমুখী স্মরিছে কোন্ বল্লভে,  
নির্ঝরিণী বহিছে কোন্ পিপাসা ।



বসন কার দেখিতে পাই জ্যোৎস্নালোকে লুপ্তিত  
নয়ন কার নীরব নীল গগনে ।  
বদন কার দেখিতে পাই কিরণে অবগুপ্তিত  
চরণ কার কোমল তৃণশয়নে ।  
পরশ কার পুষ্পবাসে পরাণমন উল্লাসি'  
হৃদয়ে উঠে লতার মত জড়িয়ে,  
পঞ্চশরে ভস্ম করে' করেছ এ কি, সন্ধ্যাসী,  
বিশ্বময় দিয়েছ তা'রে ছড়িয়ে ।

১৩০৪ ।

মার্জনা।

ওগো প্রিয়তম, আমি তোমারে যে ভালবেসেছি  
মোরে দয়া করে' কোরো মার্জ্জনা, কোরো মার্জ্জনা ।

ভীরু পাখীর মতন তব পিঞ্জরে এসেছি  
ওগো তাই বলে' দ্বার কোরো না রুদ্ধ কোরো না ।

মোর যাহা কিছু ছিল কিছুই পারিনি রাখিতে,  
মোর উতলা হৃদয় তিলেক পারিনি ঢাকিতে,  
সখা, তুমি রাখ ঢাক তুমি কর মোরে করুণা,  
ওগো আপনার গুণে অবলারে কোরো মার্জ্জনা  
কোরো মার্জ্জনা ।

ওগো প্রিয়তম, যদি নাহি পার ভালবাসিতে  
তবু ভালবাসা কোরো মার্জ্জনা, কোরো মার্জ্জনা ।  
তব দুটি আঁখিকোণ ভরি দুটি কণা হাসিতে  
এই অসহায়্যাপানে চেয়ো না বন্ধু চেয়ো না ।  
আমি সম্বর' বাস ফিরে যাব দ্রুতচরণে,  
আমি চকিত সরমে লুকাব আঁধার মরণে,  
আমি দু'হাতে ঢাকিব নগ্ন হৃদয়-বেদনা,  
ওগো প্রিয়তম, তুমি অভাগীরে কোরো মার্জ্জনা,  
কোরো মার্জ্জনা ।

## कहलना

ওগো প্রিয়তম, যদি চাহ মোরে ভালবাসিয়া  
মোর সুখরাশি কোরো মার্জ্জনা, কোরো মার্জ্জনা ।  
যবে সোহাগের স্রোতে যাব নিরুপায় ভাসিয়া  
তুমি দূর হ'তে বসি' হেসো না গো সখা হেসো না !  
যবে রাণীর মতন বসিব রতনআসনে,  
যবে বাঁধিব তোমারে নিবিড় প্রণয়শাসনে,  
যবে দেবীর মতন পূরাব তোমার বাসনা,  
ওগো তখন হে নাথ, গরবীরে কোরো মার্জ্জনা,  
কোরো মার্জ্জনা ।

187

## চৈত্ররজনী

আজি উন্মাদ মধুনিশি, ওগো  
চৈত্র-নিশীথশশী !  
তুমি এ বিপুল ধরণীর পানে  
কি দেখিছ একা বসি’  
চৈত্র-নিশীথ-শশী !

কত নদীতীরে, কত মন্দিরে,  
কত বাতায়নতলে,  
কত কানাকানি, মন জানাজানি,  
সাধাসাধি কত ছলে ।  
শাখাপ্রশাখার, দ্বারজানালার  
আড়ালে আড়ালে পশি’  
কত স্মৃথদুখ কত কৌতুক  
দেখিতেছ একা বসি’ ।  
চৈত্র-নিশীথ-শশী !

মোরে দেখ চাহি', কেহ কোথা নাহি,  
শূন্য ভবন-ছাদে  
নৈশ পবন কাঁদে ।  
তোমারি মতন একাকী আপনি  
চাহিয়া রয়েছে বসি'  
চৈত্র-নিশীথ-শশী !

১৩০৪ ।

---

## স্পর্শ

সে আসি' কহিল—“প্রিয়ে মুখ তুলে চাও !”  
ছুষিয়া তাহারে রুষিয়া কহিনু “যাও !”  
সখি ওলো সখি, সত্য করিয়া বলি,  
তবু সে গেল না চলি' ।

দাঁড়াল সমুখে, কহিনু তাহারে, সর' !  
ধরিল দু'হাত, কহিনু, আহা কি কর !  
সখি ওলো সখি মিছে না কহিব তোরে—  
তবু ছাড়িল না মোরে ।

শ্রুতিমূলে মুখ আনিল সে মিছিমিছি,—  
নয়ন বাঁকায়ে কহিনু তাহারে, ছি ছি !  
সখি ওলো সখি, কহিনু শপথ করে'  
তবু সে গেল না সরে' ।

অধরে কপোল পরশ করিল তবু,  
কাঁপিয়া কহিনু, এমন দেখিনি কভু !  
সখি ওলো সখি, এ কি তা'র বিবেচনা,  
তবু মুখ ফিরাল না ।

আপন মালাটি আমারে পরায়ে দিল,  
কহিনু তাহারে, মালায় কি কাজ ছিল !  
সখি ওলো সখি, নাহি তা'র লাজ ভয়,  
মিছে তা'রে অনুনয় ।

আমার মালাটি চলিল গলায় ল'য়ে,  
চাহি তা'র পানে রহিনু অবাক হ'য়ে !  
সখি ওলো সখি, ভাসিতেছি আঁখিনীরে,-  
কেন সে এল না ফিরে ।

১৩০৪ ।

— — —

## পিয়াসী

আমি ত চাহিনি কিছু ।  
বনের আড়ালে দাঁড়ায়ে ছিলাম  
নয়ন করিয়া নীচু ।  
তখনো ভোরের আলস-অরুণ  
আঁখিতে রয়েছে ঘোর,  
তখনো বাতাসে জড়ানো রয়েছে  
নিশির শিশির লোর ।  
নূতন তৃণের উঠিছে গন্ধ  
মন্দ প্রভাতবায়ে ;  
তুমি একাকিনী কুটীরবাহিরে  
বসিয়া অশথ-ছায়ে  
নবীন-নবনী-নিন্দিত করে  
দোহন করিছ দুগ্ধ ;  
আমি ত কেবল বিধুর বিভোল  
দাঁড়ায়ে ছিলাম মুগ্ধ ।

আমি ত কহি নি কথা ।  
বকুলশাখায় জানি না কি পাখী  
কি জানাল ব্যাকুলতা ।



আত্মকাননে ধরেছে মুকুল,  
 ঝরিছে পথের পাশে ;  
 গুঞ্জনস্বরে দুয়েকটি করে'  
 মৌমাছি উড়ে আসে ।  
 সরোবরপারে খুলিছে দুয়ার  
 শিবমন্দিরঘরে,  
 সন্ন্যাসী গাহে ভোরের ভজন  
 শান্ত গভীরস্বরে ।  
 ঘট ল'য়ে কোলে বসি' তরুতলে  
 দোহন করিছ দুগ্ধ ;  
 শূন্যপাত্র বহিয়া মাত্র  
 দাঁড়ায়েছিলাম লুপ্ত ।

আমি ত যাইনি কাছে ।  
 উতলা বাতাস অলকে তোমার  
 কি জানি কি করিয়াছে ।  
 ঘণ্টা তখন বাজিছে দেউলে  
 আকাশ উঠিছে জাগি' ;  
 ধরণী চাহিছে উর্দ্ধগগনে  
 দেবতা-আশিষ মাগি ।  
 গ্রামপথ হ'তে প্রভাত আলোতে  
 উড়িছে গোখুরধূলি,—

উছলিত ঘট বেড়ি কটিতটে  
চলিয়াছে বধূগুলি ।  
তোমার কঁকণ বাজে ঘনঘন  
ফেনায়ে উঠিছে দুন্ধ,—  
পিয়াসী নয়নে ছিনু এক কোণে  
পরাণ নীরবে ক্ষুদ্র ।

১৩০৪ ।

---

## পসারিণী

ওগো পসারিণী, দেখি আয়  
কি রয়েছে তব পসরায় ।

এত ভার মরিমরি                      কেমনে রয়েছ ধরি’  
কোমল করুণ ক্লান্তকায় ।

কোথা কোন্ রাজপুরে                      যাবে আরো কতদূরে  
কিসের দুৰুহ দুরাশায় ।

সম্মুখে দেখ ত চাহি,                      পথের যে সীমা নাহি,  
তপ্তবালু অগ্নিবাণ হানে ।

পসারিণী কথা রাখো,                      দূর পথে যেয়োনা কো,  
স্বপ্নে দাঁড়াও এইখানে ।

হেথা দেখ শাখা-ঢাকা বাঁধা বটতল ;

কূলে কূলে ভরা দীঘি, কাকচক্ষু জল ।

ঢালু পাড়ি চারিপাশে                      কচিকচি কাঁচা ঘাসে  
ঘনশ্যাম চিকণ-কোমল ;

পাষাণের ঘাটখানি,                      কেহ নাই জনপ্রাণী,  
আত্মবন নিবিড় শীতল ।

থাক্ তব বিকি-কিনি,                      ওগো শ্রান্ত পসারিণী  
এইখানে বিছাও অঞ্চল ।

ব্যথিত চরণ দুটি ধুয়ে নিবে জলে,  
 বনফুলে মালা গাঁথি' পরি' নিবে গলে ।  
 আত্মমঞ্জরীর গন্ধ                      বহি' আনি' মৃদুমন্দ  
 বায়ু তব উড়াবে অলক,  
 ঘুঘু ডাকে ঝিল্লিরবে                      কি মন্ত্র শ্রবণে কবে,  
 মুদে যাবে চোখের পলক ।  
 পসরা নামায়ে ভূমে                      যদি ঢুলে পড় ঘুমে,  
 অঙ্গে লাগে সুখালসঘোর ;  
 যদি ভুলে তন্দ্রাভরে                      ঘোমটা খসিয়া পড়ে,  
 তাহে কোনো শঙ্কা নাহি তোর ।

যদি সন্ধ্যা হ'য়ে আসে, সূর্য্য যায় পাটে,  
 পথ নাহি দেখা যায় জনশূন্য মাঠে,  
 নাই গেলে বহুদূরে,                      বিদেশের রাজপুরে,  
 নাই গেলে রতনের হাটে ।  
 কিছু না করিয়ো ডর,                      কাছে আছে মোর ঘর,  
 পথ দেখাইয়া যাব আগে ;  
 শশিহীন অন্ধ রাত,                      ধরিয়ো আমার হাত  
 যদি মনে বড় ভয় লাগে ।

শয্যা শুভ্রফেননিভ                      স্বহস্তে পাতিয়া দিব,  
 গৃহকোণে দীপ দিব জ্বালি',

## কল্পনা

দুখ-দোহনের রবে                      কোকিল জাগিবে যবে  
আপনি জাগায়ে দিব কালি ।  
ওগো পসারিণী,  
মধ্যদিনে রুদ্ধ ঘরে                      সবাই বিশ্রাম করে,  
দুখপথে উড়ে তপ্তবালি,  
দাঁড়াও, যেও না আর,                      নামাও পসরাভার,  
মোর হাতে দাও তব ডালি ।

১৩০৪ ।

## ভ্রষ্ট লগ্ন

শয়ন-শিয়রে প্রদীপ নিবেছে সবে,  
জাগিয়া উঠেছি ভোরের কোকিল-রবে ।  
অলসচরণে বসি' বাতায়নে এসে  
নূতন মালিকা পরেছি শিথিল কেশে ।  
এমন সময়ে অরুণ-ধূসর পথে  
তরুণ পথিক দেখা দিল রাজরথে ।  
সোনার মুকুটে পড়েছে উষার আলো,  
মুকুতার মালা গলায় সেজেছে ভালো ।  
সুখাল কাতরে—“সে কোথায়, সে কোথায় !”  
ব্যগ্রচরণে আমারি দুয়ারে নামি,—  
সরমে মরিয়া বলিতে নারিনু হায়,  
“নবীন পথিক, সে যে আমি, সেই আমি ।”

গোধূলিবেলায় তখনো জ্বালেনি দীপ,  
পরিতেছিলাম কপালে সোনার টীপ ;—  
কনক মুকুর হাতে ল'য়ে বাতায়নে—  
বাঁধিতেছিলাম কবরী আপন মনে ।  
হেনকালে এল সন্ধ্যা-ধূসর পথে  
করুণ নয়ন তরুণ পথিক রথে ।

ফেনায় ঘর্ষে আকুল অশ্বগুলি  
 বসনে ভূষণে ভরিয়া গিয়াছে ধূলি ।  
 স্খাল কাতরে “সে কোথায় সে কোথায় !”  
 ক্লান্ত চরণে আমারি দুয়ারে নামি,—  
 সরমে মরিয়া বলিতে নারিনু হায়,  
 “শ্রান্ত পথিক, সে যে আমি, সেই আমি ।”

ফাগুন যামিনী, প্রদীপ জ্বলিছে ঘরে,  
 দখিণ বাতাস মরিছে বৃকের পরে ।  
 সোনার খাঁচায় ঘুমায় মুখরা সারী,  
 দুয়ার সমুখে ঘুমায়ে পড়েছে দ্বাবী ।  
 ধূপের ধোঁয়ায় ধূসর বাসর গেহ,  
 অগুরুগন্ধে আকুল সকল দেহ ।  
 ময়ূরকণ্ঠি পরেছি কাঁচলখানি,  
 দূর্বাসাশ্রমল আঁচল বক্ষে টানি’ ।  
 রয়েছি বিজন রাজপথপানে চাহি,—  
 বাতায়নতলে বসেছি ধূলায় নামি,—  
 ত্রিযামা যামিনী একা বসে’ গান গাহি,  
 “হতাশ পথিক, সে যে আমি, সেই আমি ।”

## প্রণয়-প্রশ্ন

এ কি তবে সবি সত্য  
হে আমার চির ভক্ত ?  
আমার চোখের বিজুলি-উজল আলোকে  
হৃদয়ে তোমার ঝঙ্কার মেঘ ঝলকে,  
এ কি সত্য ?  
আমার মধুর অধর, বধূর  
নব লাজসম রক্ত,  
হে আমার চিরভক্ত  
এ কি সত্য ?

চির মন্দার ফুটেছে আমার মাঝে কি ?  
চরণে আমার বীণা-ঝঙ্কার বাজে কি ?  
এ কি সত্য ?  
নিশির শিশির ঝরে কি আমারে হেরিয়া ?  
প্রভাত-আলোকে পুলক আমারে ঘেরিয়া,  
এ কি সত্য ?



তপ্ত কপোল-পরশে অধীর  
সমীর মদিরমন্ত,  
হে আমার চিরভক্ত  
এ কি সত্য ?

কালো কেশপাশে দিবস লুকায় আঁধারে,  
মরণ-বাঁধন মোর দুই ভুজে বাঁধারে,  
এ কি সত্য ?

ভুবন মিলায় মোর অঞ্চলখানিতে,  
বিশ্ব নীরব মোর কণ্ঠের বাণীতে,  
এ কি সত্য ?

ত্রিভুবন ল'য়ে শুধু আমি আছি,  
আছে মোর অনুরক্ত,  
হে আমার চিরভক্ত  
এ কি সত্য ?

তোমার প্রণয় যুগে যুগে মোর লাগিয়া  
জগতে জগতে ফিরিতেছিল কি জাগিয়া ?  
এ কি সত্য ?

আমার বচনে নয়নে অধরে অলকে  
চিরজনমের বিরাম লভিলে পলকে  
এ কি সত্য ?

মোর সুকুমার ললাট-ফলকে  
লেখা অসীমের তত্ত্ব,  
হে আমার চিরভক্ত  
এ কি সত্য ?

১৩০৪

---

## আশা

এ জীবন-সূর্য্য যবে অস্তে গেল চলি',  
হে বঙ্গজননী মোর, “আয় বৎস,” বলি'  
খুলি' দিলে অন্তঃপুরে প্রবেশ-দুয়ার,  
ললাটে চুম্বন দিলে ; শিয়রে আমার  
জ্বালিলে অনন্ত দীপ । ছিল কণ্ঠে মোর  
একখানি কণ্টকিত কুমুমের ডোর  
সঙ্গীতের পুরস্কার, তারি ক্ষতজ্বালা  
হৃদয়ে জ্বলিতেছিল,—তুলি' সেই মালা  
প্রত্যেক কণ্টক তা'র নিজ হস্তে বাছি'  
ধূলি তা'র ধুয়ে ফেলি' শুভ্র মালাগাছি  
গলায় পরায়ে দিয়ে লইলে বরিয়া  
মোরে তব চিরন্তন সন্তান করিয়া ।  
অশ্রুতে ভরিয়া উঠি' খুলিল নয়ন ;  
সহসা জাগিয়া দেখি—এ শুধু স্বপন ।

১৩০৫ ।

## বঙ্গলক্ষ্মী

তোমার মাঠের মাঝে, তব নদীতীরে,  
তব আশ্রবনেঘেরা সহস্র কুটীরে,  
দোহন-মুখর গোষ্ঠে, ছায়াবটমূলে,  
গঙ্গার পাশাণ ঘাটে দ্বাদশ দেউলে,  
হে নিত্যকল্যাণী-লক্ষ্মী, হে বঙ্গ-জননী,  
আপন অজস্র কাজ করিছ আপনি  
অহিনিশি হাস্তমুখে ।

এ বিশ্বসমাজে

তোমার পুত্রের হাত নাহি কোনো কাজে  
নাহি জান সে বারতা । তুমি শুধু, মাগো,  
নিদ্রিত শিয়রে তা'র নিশিদিন জাগো  
মলয় বীজন করি' । রয়েছ মা ভুলি'  
তোমার শ্রীঅঙ্গ হ'তে একে একে খুলি'  
সৌভাগ্য ভূষণ তব, হাতের কঙ্কণ,  
তোমার ললাট-শোভা সীমন্ত-রতন,  
তোমার গৌরব, তা'রা বাঁধা রাখিয়াছে  
বহুদূর বিদেশের বণিকের কাছে ।  
নিত্যকর্মে রত শুধু, অয়ি মাতৃভূমি,  
প্রত্যাষে পূজার ফুল ফুটাইছ তুমি,

মধ্যাহ্নে পল্লবাঞ্চল প্রসারিয়া ধরি'  
 রৌদ্র নিবারিছ,—যবে আসে বিভাবরী  
 চারিদিক হ'তে তব যত নদনদী  
 ঘুম পাড়াবার গান গাহে নিরবধি  
 ঘেরি' ক্লান্ত গ্রামগুলি শত বাহুপাশে ।  
 শরৎমধ্যাহ্নে আজি স্বপ্ন অবকাশে  
 ক্ষণিক বিরাম দিয়া পুণ্য গৃহকাজে  
 হিল্লোলিত হৈমন্তিকমঞ্জরীর মাঝে  
 কপোতকূজনাকুল নিস্তন্ধ প্রহরে  
 বসিয়া রয়েছ মাতঃ, প্রফুল্ল অধরে  
 বাক্যহীন প্রসন্নতা ; স্নিগ্ধ আঁখিদ্বয়  
 ধৈর্য্যশান্ত দৃষ্টিপাতে চতুর্দিকময়  
 ক্ষমাপূর্ণ আশীর্ব্বাদ করে বিকিরণ ।  
 হেরি সেই স্নেহাপ্লুত আত্মবিস্মরণ,  
 মধুর মঙ্গলচ্ছবি মৌন অবিচল,  
 নতশির কবিচক্ষে ভরি' আসে জল ।

## শরৎ

আজি কি তোমার মধুর মূরতি  
হেরিনু শারদ প্রভাতে ।  
হে মাতঃ বঙ্গ, শ্যামল অঙ্গ  
ঝলিছে অমল শোভাতে ।  
পারে না বহিতে নদী জল-ধার,  
মাঠে মাঠে ধান ধরেনাক আর,  
ডাকিছে দোয়েল, গাহিছে কোয়েল  
তোমার কানন-সভাতে ।  
মাঝখানে তুমি দাঁড়ায়ে জননী  
শরৎকালের প্রভাতে ।

জননী, তোমার শুভ আহ্বান  
গিয়েছে নিখিল ভুবনে,—  
নূতন ধান্ধে হবে নবান্ন  
তোমার ভবনে ভবনে ।  
অবসর আর নাহিক তোমার,  
আঁঠিআঁঠি ধান চলে ভারে ভার,

গ্রামপথে-পথে গন্ধ তাহার  
ভরিয়া উঠিছে পবনে ।  
জননী, তোমার আহ্বানলিপি  
পাঠায়ে দিয়েছ ভুবনে ।

তুলি' মেঘভার আকাশ তোমার  
করেছ সুনীলবরণী ;  
শিশির ছিটায় করেছ শীতল  
তোমার শ্যামল ধরণী ।  
স্থলে জলে আর গগনে গগনে  
বাঁশি বাজে যেন মধুর লগনে,  
আসে দলেদলে তব দারতলে  
দিশিদিশি হ'তে তরণী ।  
আকাশ করেছ সুনীল অমল  
স্নিগ্ধশীতল ধরণী ।

বহিছে প্রথম শিশির-সমীর  
ক্লান্ত শরীর জুড়ায়,—  
কুটীরে কুটীরে নব নব আশা  
নবীন জীবন উড়ায় ।

দিকে দিকে, মাতা, কত আয়োজন,  
 হাসিভরা মুখ তব পরিজন,  
 ভাঙারে তব সুখ নব নব  
 মুঠা মুঠা লয় কুড়ায়ে ।  
 ছুটেছে সমীর আঁচলে তাহার  
 নবীন জীবন উড়ায়ে ।

আয় আয় আয়, আছ যে যেথায়,  
 আয় তোরা সবে ছুটিয়া,  
 ভাঙারদ্বার খুলেছে জননী  
 অন্ন যেতেছে লুটিয়া ।  
 ওপার হইতে আয় থেয়া দিয়ে,  
 ওপাড়া হইতে আয় মায়ে বিয়ে,  
 কে কাঁদে দ্বুধায় জননী শুধায়  
 আয় তোরা সবে জুটিয়া ।  
 ভাঙারদ্বার খুলেছে জননী  
 অন্ন যেতেছে লুটিয়া ।

মাতার কণ্ঠে শেফালি-মালা  
 গন্ধে ভরিছে অবনী ।  
 জলহারা মেঘ আঁচলে খচিত  
 শুভ্র যেন সে নবনী ।



কল্পনা

পরেছে কিরীট কনক কিরণে,  
মধুর মহিমা হরিতে হিরণে,  
কুসুম-ভূষণ-জড়িত-চরণে  
দাঁড়ায়েছে মোর জননী ।  
আলোকে শিশিরে কুসুমে ধাত্রে  
হাসিছে নিখিল অবনী ।

---

## মাতার আহ্বান

বারেক তোমার দুয়ারে দাঁড়ায়ে  
ফুকারিয়া ডাক জননি ।  
প্রান্তরে তব সন্ধ্যা নামিছে,  
আঁধারে ঘেরিছে ধরণী ।  
ডাক “চলে’ আয়, তোরা কোলে আয়,”  
ডাক সক্রুণ আপন ভাষায় ;  
সে বাণী হৃদয়ে করুণা জাগায়,  
বেজে উঠে শিরা ধমনী,  
হেলায় খেলায় যে আছে যেথায়  
সচকিয়া উঠে অমনি ।

আমরা প্রভাতে নদী পার হ’নু  
ফিরিনু কিসের দুরাশে ।  
পরের উজ্জ্বল অঞ্চলে ল’য়ে  
ঢালিনু জঠর-ছত্যাশে ।  
খেয়া বহেনাক, চাহি ফিরিবারে,  
তোমার তরণী পাঠাও এপারে,

আপনার ক্ষেত গ্রামের কিনারে  
পড়িয়া রহিল কোথা সে ।  
বিজন বিরাট শূন্য সে মাঠ  
কাঁদিছে উতলা বাতাসে ।

কাঁপিয়া কাঁপিয়া দীপখানি তব  
নিবু-নিবু করে পবনে,  
জননি, তাহারে করিয়ো রক্ষা  
আপন বক্ষ-বসনে ।  
তুলি' ধর তা'রে দক্ষিণ করে,  
তোমার ললাটে যেন আলো পড়ে,  
চিনি' দূর হ'তে, ফিরে আসি' ঘরে,  
না ভুলি আলেয়া-ছলনে ।  
এপারে দুয়ার রুদ্ধ জননি,  
এ পর-পুরীর ভবনে ।

তোমার বনের ফুলের গন্ধ  
আসিছে সন্ধ্যাসমীরে ।  
শেষ গান গাহে তোমার কোকিল  
সুদূর কুঞ্জতিমিরে ।  
পথে কোনো লোক নাহি আর বাকী  
গহন কাননে জ্বলিছে জোনাকী,

আকুল অশ্রু ভরি' দুই আঁখি  
উচ্ছ্বসি' উঠে অধীরে ।  
“তোরা যে আমার” ডাক একবার  
দাঁড়ায়ে দুয়ার-বাহিরে ।

১৩০৫ ।



## হতভাগ্যের গান

বিভাস—একতালা

কিসের তরে অশ্রু ঝরে,  
কিসের লাগি' দীর্ঘশ্বাস ।  
হাস্তমুখে অদৃষ্টেরে  
করব মোরা পরিহাস ।  
রিক্ত যারা সর্ববাহারা,  
সর্ববজয়ী বিশ্বে তা'রা,  
গর্ববময়ী ভাগ্যদেবীর  
নয়কো তারা ক্রীতদাস ।  
হাস্তমুখে অদৃষ্টেরে  
করব মোরা পরিহাস ।

আমরা সুখের স্ফীতবুকের  
ছায়ার তলে নাহি চরি ।  
আমরা দুখের বক্রমুখের  
চক্র দেখে ভয় না করি ।  
ভগ্ন ঢাকে যথাসাধ্য  
বাজিয়ে যাব জয়বাণ্ড,

ছিন্ন আশার ধ্বজা তুলে  
ভিন্ন করব নীলাকাশ ।  
হাস্তমুখে অদৃষ্টিরে  
করব মোরা পরিহাস ।

হে অলক্ষ্মী, রুক্ষকেশী,  
তুমি দেবি অচঞ্চলা ।  
তোমার রীতি সরল অতি  
নাহি জান ছলাকলা ।  
জ্বালাও পেটে অগ্নিকণা  
নাইক তাহে প্রতারণা,  
টানো যখন মরণ ফাঁসি  
বলনাক মিষ্টভাষ ।  
হাস্তমুখে অদৃষ্টিরে  
করব মোরা পরিহাস ।

ধরার যারা সেরা সেরা  
মানুষ তা'রা তোমার ঘরে ।  
তাদের কঠিন শয্যাখানি  
তাই পেতেছ মোদের তরে ।  
আমরা বরপুত্র তব,  
যাহাই দিবে তাহাই লব,

তোমায় দিব ধন্যধ্বনি  
মাথায় বহি' সর্বনাশ।  
হাস্তমুখে অদৃষ্টেরে  
করব মোরা পরিহাস।

যৌবরাজ্যে বসিয়ে দে মা  
লক্ষ্মীছাড়ার সিংহাসনে।  
ভাঙা কুলোয় করুক পাখা  
তোমার যত ভূভাগণে।  
দগ্ধভালে প্রলয়শিখা  
দিক্ মা এঁকে তোমার টীকা,  
পরাও সজ্জা লজ্জাহারা  
জীর্ণ কপ্তা, ছিন্নবাস !  
হাস্তমুখে অদৃষ্টেরে  
করব মোরা পরিহাস।

লুকোক্ তোমার ডঙ্কা শুনে  
কপট সখার শৃগ্ন হাসি।  
পালাক্ ছুটে পুচ্ছ তুলে  
মিথা চাটু মক্কা কাশি।  
আত্মপরের প্রভেদ-ভোলা  
জীর্ণ ছুয়োর নিত্য খোলা,

থাকবে তুমি থাকব আমি  
সমানভাবে বারো মাস ।  
হাস্তমুখে অদৃষ্টেরে  
করব মোরা পরিহাস ।

শঙ্কা তরাস লজ্জা সরম,  
চুকিয়ে দিলেম স্তুতি-নিন্দে ।  
ধূলো, সে তোর পায়ের ধূলো,  
তাই মেখেছি ভক্তবৃন্দে ।  
আশারে কই, “ঠাকুরাণী,  
তোমার খেলা অনেক জানি,  
যাহার ভাগ্যে সকল ফাঁকি  
তা’রেও ফাঁকি দিতে চাস ।”  
হাস্তমুখে অদৃষ্টেরে  
করব মোরা পরিহাস ।

মৃত্যু যেদিন বলবে “জাগো,  
প্রভাত হ’ল তোমার রাতি,”—  
নিবিয়ে যাব আমার ঘরের  
চন্দ্র সূর্য্য দুটো বাতি ।  
আমরা দৌঁছে ঘেঁষাঘেঁষি  
চিরদিনের প্রতিবেশী,



কল্পনা

বন্ধুভাবে কণ্ঠে সে মোর  
জড়িয়ে দেবে বাহুপাশ,—  
বিদায়কালে অদৃষ্টেরে  
করে' যাব পরিহাস ।

১৩০৪ ।

## জুতা আবিষ্কার

কহিলা হবু, “শুন গো গবুরায়,  
কালিকে আমি ভেবেছি সারারাত্র—  
মলিন ধূলা লাগিবে কেন পায়  
ধরণীমাঝে চরণ ফেলা মাত্র ।  
তোমরা শুধু বেতন লহ বাঁটি’  
রাজার কাজে কিছুই নাহি দৃষ্টি ।  
আমার মাটি লাগায় মোরে মাটি,  
রাজ্যে মোর একি এ অনাস্থি ।  
শীঘ্র এর করিবে প্রতিকার  
নহিলে কারো রক্ষা নাহি আর ।”

শুনিয়া গবু ভাবিয়া হ’ল খুন,  
দারুণ ত্রাসে ঘর্ম্ম বহে গাত্রে ।  
পণ্ডিতের হইল মুখ চূণ  
পাত্রদের নিদ্রা নাহি রাত্রে ।  
রান্না ঘরে নাহিক চড়ে হাঁড়ি,  
কান্নাকাটি পড়িল বাড়িমধ্যে,  
অশ্রুজলে ভাসায়ে পাকা দাড়ি  
কহিলা গবু হবুর পাদপদ্মে,—

“যদি না ধূলা লাগিবে তব পায়ে  
পায়ের ধূলা পাইব কি উপায়ে ।”

শুনিয়া রাজা ভাবিল ছুলি ছুলি,  
কহিল শেষে “কথাটা বটে সত্য,  
কিন্তু আগে বিদায় কর ধূলি,  
ভাবিয়ো পরে পদধূলির তত্ত্ব ।  
ধূলা-অভাবে না পেলে পদধূলা  
তোমরা সবে মাহিনা খাও মিথ্যে,  
কেন বা তবে পুষিনু এতগুলো  
উপাধি-ধরা বৈজ্ঞানিক ভ্রূত ।  
আগের কাজ আগে ত ভূমি সারো  
পরের কথা ভাবিয়ো পরে আরো ।”

আঁধার দেখে রাজার কথা শুনি’,  
যতনভরে আনিল তবে মন্ত্রী  
যেখানে যত আছিল জ্ঞানীগুণী  
•দেশে বিদেশে যতেক ছিল যন্ত্রী ।  
বসিল সবে চশমা চোখে আঁটি,  
ফুরায়ে গেল উনিশ পিপে নশ্র,  
অনেক ভেবে কহিল, “গেলে মাটি  
ধরায় তবে কোথায় হবে শশ্র ।”

কহিল রাজা, “তাই যদি না হবে,  
পাণ্ডিতেরা রয়েছে কেন তবে ?”

সকলে মিলি’ যুক্তি করি’ শেষে  
কিনিল ঝাঁটা সাড়ে সাতেরো লক্ষ,  
ঝাঁটের চোটে পথের ধূলা এসে  
ভরিয়া দিল রাজার মুখ বক্ষ ।  
ধূলায় কেহ মেলিতে নারে চোখ,  
ধূলার মেঘে পড়িল ঢাকা সূর্য্য ;  
ধূলার বেগে কাশিয়া মরে লোক,  
ধূলার আড়ে নগর হ’ল উহা ।  
কহিল রাজা, “করিতে ধূলা দ্র.—  
জগত হ’ল ধূলায় ভরপুর ।”

তখন বেগে ছুটিল ঝাঁকে ঝাঁক  
মশক কাঁখে একুশলাখ ভিস্তি ।  
পুকুরে বিলে রহিল শুধু পাক,  
নদীর জলে নাহিক চলে কিস্তি ;  
জলের জীব মরিল জল বিনা,  
ডাঙার প্রাণী সাঁতার করে চেফা ;  
পাঁকের তলে মজিল বেচা-কেনা,  
সর্দিজ্বরে উজাড় হ’ল দেশটা ।

কহিল রাজা, “এমনি সব গাধা  
ধূলারে মারি’ করিয়া দিল কাদা ।”

আবার সবে ডাকিল পরামর্শে ;  
বসিল পুন যতেক গুণবন্ত ;  
যুরিয়া মাথা হেরিল চোখে শর্সে,  
ধূলার হায় নাহিক পায় অন্ত ।  
কহিল “মহী মাদুর দিয়ে ঢাক ;  
ফরাস পাতি’ করিব ধূলা বন্ধ ।”  
কহিল কেহ, “রাজারে ঘরে রাখ  
কোথাও যেন না থাকে কোনো রন্ধ  
ধূলার মাঝে না যদি দেন পা  
তা হ’লে পায়ে ধূলা ত লাগে না ।”

কহিল রাজা, “সে কথা বড় খাঁটি,  
কিন্তু মোর হতেছে মনে সন্ধ  
মাটির ভয়ে রাজ্য হবে মাটি  
দিবসরাতি রহিলে আমি বন্ধ ।”  
কহিল সবে “চামারে তবে ডাকি’  
চন্দ্র দিয়া মুড়িয়া দাও পৃথ্বী !  
ধূলির মহী ঝুলির মাঝে ঢাকি’  
মহীপতির রহিবে মহাকীর্তি ।”

কহিল সবে, “হবে সে অবহেলে,  
যোগ্যমত চামার যদি মেলে।”

রাজার চর ধাইল হেথা হোথা,  
ছুটিল সবে ছাড়িয়া সব কস্ম্য ।  
যোগ্যমত চামার নাহি কোথা,  
না মিলে তত উচিতমত চস্ম্য ।  
তখন ধীরে চামার-কুলপতি  
কহিল এসে ঈষৎ হেসে বৃদ্ধ,—  
“বলিতে পারি করিলে অনুমতি  
সহজে যাহে মানস হবে সিদ্ধ ।  
নিজের দুটি চরণ ঢাক, তবে  
ধরণী আর ঢাকিতে নাহি হবে।”

কহিল রাজা, “এত কি হবে সিধে,  
ভাবিয়া ম’ল সকল দেশসুদ্ধ ।”  
মন্ত্রী কহে, “বেটারে শূল বিঁধে  
কারার মাঝে করিয়া রাখ রুদ্ধ ।”  
রাজার পদ চস্ম্য-আবরণে  
ঢাকিল বুড়া বসিয়া পদোপান্তে ;

মন্ত্রী কহে, “আমারো ছিল মনে,  
কেমনে বেটা পেরেছে সেটা জান্তে।”  
সেদিন হ’তে চলিল জুতো-পরা,  
বাঁচিল গবু, রক্ষা পেল ধরা।

১৩০৪।

---

## সে আমার জননী রে

ভৈরবী—রূপক

কে এসে যায় ফিরে ফিরে  
আকুল নয়নের নীরে ?  
কে বৃথা আশাভরে  
চাহিছে মুখপরে ?  
সে যে আমার জননী রে !

কাহার সুধাময়ী বাণী  
মিলায় অনাদর মানি ?  
কাহার ভাষা হায়,  
ভুলিতে সবে চায় ?  
সে যে আমার জননী রে !

কণেক স্নেহকোল ছাড়ি’  
চিনিতে আর নাহি পারি ।  
আপন সন্তান  
করিছে অপমান,—  
সে যে আমার জননী রে !



কল্পনা

পুণ্য কুটীরে বিষম  
কে বসে' সাজাইয়া অন্ন ?  
সে স্নেহ-উপহার  
রুচে না মুখে আর !  
সে যে আমার জননী রে !

---

## জগদীশচন্দ্র বসু

বিজ্ঞান-লক্ষ্মীর প্রিয় পশ্চিম মন্দিরে  
দূর সিন্ধুতীরে  
হে বন্ধু গিয়েছ তুমি ; জয়মালাখানি  
সেথা হ'তে আনি'  
দীনহীনা জননীর লজ্জানত শিরে  
পরায়েছ ধীরে ।

বদেশের মহোজ্জ্বল মহিমা-মণ্ডিত  
পণ্ডিত-সভায়  
বহু সাধুবাদধ্বনি নানা কণ্ঠরবে  
শুনেছ গৌরবে ।  
সে ধ্বনি গস্তীরমন্ড্রে ছায় চারিধার  
হ'য়ে সিন্ধুপার ।

আজি মাতা পাঠাইছে—অশ্রুসিক্ত বাণী  
আশীর্বাদখানি

কল্পনা

জগৎ-সভার কাছে অখ্যাত অজ্ঞাত  
কবিকণ্ঠে ভ্রাতঃ !  
সে বাণী পশিবে শুধু তোমারি অন্তরে  
ক্ষীণ মাতৃস্বরে ।

১৩০৪ ।

---

# ভিখারী

## ভৈরবী—একতালা

ওগো                    কাঙাল, আমারে কাঙাল করেছ,  
                             আরো কি তোমার চাই ?

ওগো                    ভিখারী, আমার ভিখারী, চলেছ  
                             কি কাতর গান গাই' ।

প্রতিদিন প্রাতে নব নব ধনে  
তুষিব তোমারে সাধ ছিল মনে  
                             ভিখারী, আমার ভিখারী ।

হায়                    পলকে সকলি সঁপেছি চরণে,  
                             আর ত কিছুই নাই ।

ওগো                    কাঙাল, আমারে কাঙাল করেছ  
                             আরো কি তোমার চাই ?

আমি                    আমার বুকের আঁচল ঘেরিয়া  
                             তোমারে পরা'নু বাস ;

আমি                    আমার ভুবন শূন্য করেছি  
                             তোমার পূরাতে আশ !

## কল্পনা

মম প্রাণমন যৌবন নব  
করপুটতলে পড়ে' আছে তব,  
          ভিখারী, আমার ভিখারী ।  
হায়           আরো যদি চাও, মোরে কিছু দাও,  
          ফিরে আমি দিব তাই ।  
ওগো         কাঙাল, আমারে কাঙাল করেছ,  
          আরো কি তোমার চাই ?

---

## যাচনা

ভালবেসে সখি, নিভুতে যতনে  
আমার নামটি লিখিয়ো—তোমার  
মনের মন্দিরে ।  
আমার পরাণে যে গান বাজিছে  
তাহারি তালটি শিখিয়ো—তোমার  
চরণ-মঞ্জীরে ।

ধরিয়া রাখিয়ো সোহাগে আদরে  
আমার মুখর পাখীটি—তোমার  
প্রাসাদ-প্রাঙ্গণে ।  
মনে করে' সখি বাঁধিয়া রাখিয়ো  
আমার হাতের রাখিটি—তোমার  
কনক কঙ্কণে ।

আমার লতার একটি মুকুল  
ভুলিয়া তুলিয়া রাখিয়ো—তোমার  
অলক-বন্ধনে ।  
আমার স্মরণ-শুভ-সিন্দূরে  
একটি বিন্দু অঁকিয়ো—তোমার  
ললাটচন্দনে ।

আমার মনের মোহের মাধুরী  
মাথিয়া রাখিয়া দিয়োগো—তোমার  
অঙ্গসৌরভে ।

আমার আকুল জীবনমরণ  
টুটিয়া লুটিয়া নিয়োগো—তোমার  
অতুল গৌরবে ।

---

# বিদায়

## বিভাস

এবার চলিনু তবে ।  
সময় হয়েছে নিকট, এখন  
বাঁধন ছিঁড়িতে হবে ।  
উচ্ছল জল করে চলছিল,  
জাগিয়া উঠেছে কল-কোলাহল,  
তরণী-পতাকা চল-চঞ্চল  
কাঁপিছে অধীর রবে ।  
সময় হয়েছে নিকট, এখন  
বাঁধন ছিঁড়িতে হবে ।

আমি নিষ্ঠুর কঠিন কঠোর  
নির্ম্মম আমি আজি ।  
আর নাই দেৱী, ভৈরব-ভৈরী  
বাহিরে উঠেছে বাজি' ।  
তুমি ঘুমাইছ নিমীল-নয়নে,  
কাঁপিয়া উঠিছ বিরহ-স্বপনে,



প্রভাতে জাগিয়া শূন্য শয়নে  
কাঁদিয়া চাহিয়া র'বে ।  
সময় হয়েছে নিকট, এখন,  
বাঁধন ছিঁড়িতে হবে ।

অরুণ তোমার তরুণ অধর,  
করুণ তোমার আঁখি,  
অমিয়-রচন সোহাগ-বচন  
অনেক রয়েছে বাকি ।  
পাখী উড়ে যাবে সাগরের পার,  
সুখময় নীড় পড়ে' র'বে তা'র,  
মহাকাশ হ'তে ওই বারেবার  
আমারে ডাকিছে সবে ।  
সময় হয়েছে নিকট, এখন  
বাঁধন ছিঁড়িতে হবে ।

বিশ্বজগৎ আমারে মাগিলে  
কে মোর আত্মপর ।  
আমার বিধাতা আমাতে জাগিলে  
কোথায় আমার ঘর ।

কিসেরি বা সুখ, কদিনের প্রাণ ?  
ওই উঠিয়াছে সংগ্রাম-গান,  
অমর মরণ রক্তচরণ  
নাচিছে সগৌরবে ।  
সময় হয়েছে নিকট, এখন  
বাঁধন ছিঁড়িতে হবে ।

১৩০৪ ।

---

# লীলা

সিন্ধু—ভৈরবী

কেন      বাজাও কাঁকণ কনকন, কত  
            ছলভরে ।

ওগো      ঘরে ফিরে চল, কনক কলসে  
            জল ভরে' ।

কেন      জলে ঢেউ তুলি' ছলকি ছলকি  
            কর খেলা,

কেন      চাহ খণে-খণে চকিত নয়নে  
            কার তরে  
            কত ছলভরে ।

হের      যমুনা-বেলায় আলসে হেলায়  
            গেল বেলা

যত      হাসিভরা ঢেউ করে কানাকানি  
            কলস্বরে  
            কত ছলভরে !

হের        নদী-পরপারে গগনকিনারে  
              মেঘ-মেলা,  
তা'রা      হাসিয়া হাসিয়া চাহিছে তোমারি  
              মুখপরে  
              কত ছলভরে ।

১৩০৪ ।

---

# নব বিরহ

মল্লার

হেরিয়া শ্যামল ঘন নীল গগনে  
সজল কাজল আঁখি পড়িল মনে !  
অধর করুণামাখা  
মিনতি-বেদনা-আঁকা,  
নীরবে চাহিয়া থাকা  
বিদায়-থণে ।  
হেরিয়া শ্যামল ঘন নীল গগনে ।

ঝর ঝর ঝরে জল বিজুলি হানে,  
পবন মাতিছে বনে পাগল গানে ।  
আমার পরাণ-পুটে  
কোন্‌খানে ব্যথা ফুটে  
কার কথা বেজে উঠে  
হৃদয়কোণে,  
হেরিয়া শ্যামল ঘন নীল গগনে ।

১৩০৪ ।

# লজ্জিতা

## ভৈরবী

যামিনী না যেতে জাগালে না কেন,

বেলা হ'ল মরি লাজে ।

সরমে জড়িত চরণে কেমনে

চলিব পথের মাঝে ।

আলোক-পরশে মরমে মরিয়া

হেরগো শেফালি পড়িছে ঝরিয়া,

কোনোমতে আছে পরাণ ধরিয়া

কামিনী শিথিলসাজে ।

যামিনী না যেতে জাগালে না কেন,

বেলা হ'ল মরি লাজে ।

নিবিয়া বাঁচিল নিশার প্রদীপ

উষার বাতাস লাগি' ।

রজনীর শশী গগনের কোণে'

লুকায় শরণ মাগি' ।

পাখী ডাকি' বলে—গেল বিভাবরী,—

বধু চলে জলে লইয়া গাগরী,

কল্পনা

আমি এ আকুল কবরী আবরি'  
কেমনে যাইব কাজে ।  
যামিনী না যেতে জাগালে না কেন  
বেলা হ'ল মরি লাজে ।

১৩০৪ ।

---

# কাল্পনিক

## বেহাগ

আমি            কেবলি স্বপন করেছি বপন  
                  বাতাসে,—  
তাই            আকাশকুসুম করিনু চয়ন  
                  হতাশে ।  
                  ছায়ার মতন মিলায় ধরণী,  
                  কূল নাহি পায় আশার তরণী,  
                  মানস-প্রতিমা ভাসিয়া বেড়ায়  
                  আকাশে ।  
কিছু            বাঁধা পড়িল না শুধু এ বাসনা-  
                  বাঁধনে ।  
কেহ            নাহি দিল ধরা শুধু এ স্নদূর-  
                  সাধনে ।  
                  আপনার মনে বসিয়া একেলা  
                  অনল-শিখায় কি করিনু খেলা,  
                  দিন-শেষে দেখি ছাই হ'ল সব  
                  হতাশে ।  
আমি            কেবলি স্বপন করেছি বপন  
                  বাতাসে ।



## মানসপ্রতিমা

### ইমন— কল্যাণ

তুমি      সন্ধ্যার মেঘ শান্ত সুদূর  
                 আমার সাধের সাধনা,  
মম      শূন্য গগন-বিহারী ।  
আমি      আপন মনের মাধুরী মিশায়ে  
                 তোমাতে করেছি রচনা ;  
তুমি      আমারি যে তুমি আমারি,  
মম      অসীম গগন-বিহারী ।

মম      হৃদয়-রক্ত-রঞ্জে, তব  
                 চরণ দিয়েছি রাঙিয়া,  
অয়ি      সন্ধ্যা-স্বপন-বিহারী ।  
তব      অধর এঁকেছি সুধাবিষে মিশে  
                 মম সুখদুখ ভাঙিয়া ;  
তুমি      আমারি যে তুমি আমারি,  
মম      বিজন-জীবন-বিহারী ।

মম        মোহের স্বপন-অঞ্জন তব  
              নয়নে দিয়েছি পরায়ে  
              অয়ি মুগ্ধ নয়ন-বিহারী ।

মম        সঙ্গীত তব অঙ্গে অঙ্গে  
              দিয়েছি জড়ায়ে জড়ায়ে ।  
              তুমি আমারি যে তুমি আমারি,  
              মম    জীবন-মরণ-বিহারী ।

১৩০৪ ।

---

## সঙ্কোচ

### ছায়ানট

যদি            বারণ কর তবে  
                 গাহিব না ।

যদি            সরম লাগে, মুখে  
                 চাহিব না ।

যদি            বিরলে মালাগাঁথা  
                 সহসা পায় বাধা,  
                 তোমার ফুলবনে  
                 যাইব না ।

যদি            বারণ কর, তবে  
                 গাহিব না ।

যদি            থমকি' থেমে যাও  
                 পথমাঝে

আমি           চমকি' চলে' যাব  
                 আন কাজে ।

যদি তোমার নদীকূলে  
ভুলিয়া ঢেউ তুলে,  
আমার তরীখানি  
বাহিব না ।

যদি বারণ কর, তবে  
গাহিব না ।

১৩০৪ ।

# প্রার্থী

## কাল্যাণ্ডা

আমি      চাহিতে এসেছি শুধু একখানি মালা,  
তব      নবপ্রভাতের নবীনশিশির-ঢালা ।

সরমে জড়িত কত না গোলাপ  
কত না গরবী করবী  
কত না কুসুম ফুটেছে তোমার  
মালঞ্চ করি' আলা ।

আমি      চাহিতে এসেছি শুধু একখানি মালা ।

অমল শরত শীতল সমীর  
বহিছে তোমার কেশে,  
কিশোর অরুণ-কিরণ, তোমার  
অধরে পড়েছে এসে ।

অঞ্চল হ'তে বনপথে ফুল  
যেতেছে পড়িয়া ঝরিয়া  
অনেক কুন্দ অনেক শেফালি  
ভরেছে তোমার ডালা ।

আমি      চাহিতে এসেছি শুধু একখানি মালা ।

১৩০৪ ।

# সকরুণা

## আলোয়া

সখি      প্রতিদিন হায় এসে ফিরে যায় কে !  
তা'রে      আমার মাথার একটি কুসুম দে ।  
যদি      শুধায় কে দিল, কোন্ ফুল-কাননে,  
তো'র      শপথ, আমার নামটি বলিস্নে ।  
সখি      প্রতিদিন হায় এসে ফিরে যায় কে !

সখি      তরুর তলায় বসে সে ধূলায় যে !  
সেথা      বকুলমালায় আসন বিছায়ে দে ।  
সে যে      করুণা জাগায় সকরুণ নয়নে  
কেন      কি বলিতে চায়, না বলিয়া যায় সে ।  
সখি      প্রতিদিন হায় এসে ফিরে যায় কে !

১৩০৪

# বিবাহ-মঙ্গল

ঝাঁঝিট

দুইটি হৃদয়ে একটি আসন  
পাতিয়া বসহে হৃদয়নাথ ।  
কল্যাণ-করে মঙ্গলডোরে  
বাঁধিয়া রাখ হে দৌহার হাত ।  
প্রাণেশ, তোমার প্রেম অনন্ত  
জাগাক্ জীবনে নববসন্ত,  
যুগল প্রাণের নবীন মিলনে  
কর হে করুণনয়নপাত ।  
সংসারপথ দীর্ঘ দারুণ,  
বাহিরিবে দুটি পান্থ তরুণ,  
আজিকে তোমারি প্রসাদ-অরুণ  
করুক উদয় নব-প্রভাত ।  
তব মঙ্গল তব মহত্ত্ব  
তোমারি মাধুরী তোমারি সত্য  
দৌহার চিন্তে রহুক নিত্য  
নবনবরূপে দিবসরাত ।

১৩০৪ ।

# ভারতলক্ষ্মী

## ভৈরবী

অয়ি ভুবনমনোমোহিনী ।  
অয়ি নিশ্চলসূর্য্যকরোজ্জ্বল ধরণী  
জনক-জননী-জননী ।  
নীল-সিন্ধু-জল-ধৌত চরণতল,  
অনিল-বিকম্পিত শ্যামল অঞ্চল,  
অম্বর-চুম্বিতভাল হিমাচল,  
শুভ্র-তুষার-কিরীটিনী ।  
প্রথম প্রভাত উদয় তব গগনে,  
প্রথম সামরব তব তপোবনে,  
প্রথম প্রচারিত তব বনভবনে  
জ্ঞানধর্ম্ম কত কাব্যকাহিনী  
চিরকল্যাণময়ী তুমি ধন্য,  
দেশবিদেশে বিতরিছ অন্ন,  
জাহ্নবীযমুনা বিগলিত করুণা  
পুণ্যপীযুষ-স্তুতবাহিনী ।

১৩০৪ ।



## প্রকাশ

হাজার হাজার বছর কেটেছে, কেহ ত কহেনি কথা ।

ভ্রমর ফিরেছে মাধবীকুঞ্জে, তরুরে ঘিরেছে লতা ;

চাঁদেরে চাহিয়া চকোরী উড়েছে, তড়িৎ খেলেছে মেঘে,

সাগর কোথায় খুঁজিয়া খুঁজিয়া তটিনী ছুটেছে বেগে ;

ভোরের গগনে অরুণ উঠিতে কমল মেলেছে আঁখি,

নবীন আষাঢ় যেমনি এসেছে চাতক উঠেছে ডাকি’ ;

এত যে গোপন মনের মিলন ভুবনে ভুবনে আছে,

সে কথা কেমনে হইল প্রকাশ প্রথম কাহার কাছে ।

না জানি সে কবি জগতের কোণে কোথা ছিল দিবানিশি,

লতাপাতা-চাঁদ-মেঘের সহিতে এক হ’য়ে ছিল মিশি’ ।

ফুলের মতন ছিল সে মৌন মনের আড়ালে ঢাকা,

চাঁদের মতন চাহিতে জানিত নয়ন স্বপনমাথা ;

বায়ুর মতন পারিত ফিরিতে অলক্ষ্য মনোরথে

ভাবনাসাধনা-বেদনাবিহীন বিফল ভ্রমণপথে ;

মেঘের মতন আপনার মাঝে ঘনায়ে আপন ছায়া

একা বসি’ কোণে জানিত রচিতে ঘনগস্তীর মায়া ।

দ্যুলোকে ভুলোকে ভাবে নাই কেহ আছে সে কিসের খোঁজে,

হেন সংশয় ছিল না কাহারো, সে যে কোনো কথা বোঝে ।

বিশ্বপ্রকৃতি তা'র কাছে তাই ছিলনাক সাবধানে,  
 ঘনঘন তা'র ঘোমটা খসিত ভাবে ইঙ্গিতে গানে ।  
 বাসরঘরের বাতায়ন যদি খুলিয়া যাইত কভু  
 দ্বারপাশে তা'রে বসিতে দেখিয়া রুধিয়া দিত না তবু ।  
 যদি সে নিভৃত শয়নের পানে চাহিত নয়ন তুলি'  
 শিয়রের দীপ নিবাইতে কেহ ছুঁড়িত না ফুলধূলি ।

শশী যবে নিত নয়নে নয়নে কুমুদীর ভালবাসা  
 এরে দেখি হেসে ভাবিত এ লোক জানে না চোখের ভাষা ।  
 নলিনী যখন খুলিত পরাণ চাহি' তপনের পানে  
 ভাবিত এ জন ফুলগন্ধের অর্থ কিছু না জানে ।  
 তড়িৎ যখন চকিত নিমেঘে পালাত চুমিয়া মেঘে,  
 ভাবিত, এ ক্ষ্যাপা কেমনে বুঝিবে কি আছে অগ্নিবেগে ।  
 সহকারশাখে কাঁপিতে কাঁপিতে ভাবিত মালতীলতা  
 আমি জানি আর তরু জানে শুধু কলমস্মরকথা ।

একদা ফাগুনে সন্ধ্যা-সময়ে সূর্য্য নিতেছে ছুটি,  
 পূর্ব্ব গগনে পূর্ণিমা চাঁদ করিতেছে উঠি-উঠি ;  
 কোনো পুরনারী তরু-আলবালে জল সেচিবার ভাণে  
 ছল করে' শাখে আঁচল বাধায়ে ফিরে চায় পিছুপানে,

## কল্পনা

কোনো সাহসিকা ছুলিছে দোলায় হাসির বিজুলি হানি,  
না চাহে নামিতে না চাহে খামিতে না মানে বিনয়বাণী ;  
কোনো মায়াবিনী মৃগশিশুটিরে তৃণ দেয় একমনে,  
পাশে কে দাঁড়ায়ে চিনেও তাহারে চাহে না চোখের কোণে

হেন কালে কবি গাহিয়া উঠিল—নরনারী, শুন সবে,  
কত কাল ধরে' কি যে রহস্য ঘটিছে নিখিল ভবে ।  
এ কথা কে কবে স্বপনে জানিত—আকাশের চাঁদ চাহি'  
পাণ্ডুকপোল কুমুদীর চোখে সারারাত নিদ্ নাহি ।  
উদয়-অচলে অরুণ উঠিলে কমল ফুটে যে জলে  
এতকাল ধরে' তাহার তত্ত্ব ছাপা ছিল কোন্ ছলে !  
এত যে মন্ত্র পড়িল ভ্রমর নবমালতীর কানে  
বড় বড় যত পণ্ডিতজনা বুঝিল না তা'র মানে ।

শুনিয়া তপন অস্তে নামিল সরমে গগন ভরি',  
শুনিয়া চন্দ্র থমকি রহিল বনের আড়াল ধরি' ।  
শুনে সরোবরে তখনি পদ্ম নয়ন মুদিল ত্বরা,  
দখিণ-বাতাস বলে' গেল তা'রে—সকলি পড়েছে ধরা ।  
শুনে ছিছি বলে' শাখা নাড়ি' নাড়ি' শিহরি উঠিল লতা,  
ভাবিল, মুখর এখনি না জানি আরো কি রটাবে কথা ।

ভ্রমর কহিল যুথীর সভায়—যে ছিল বোবার মত  
পরের কুৎসা রটাবার বেলা তা'রো মুখ ফোটে কত ।

শুনিয়া তখনি করতালি দিয়ে হেসে উঠে নরনারী—  
যে যাহারে চায় ধরিয়া তাহায় দাঁড়াইল সারি সারি ।  
“হয়েছে প্রমাণ, হয়েছে প্রমাণ” হাসিয়া সবাই কহে—  
“যে কথা রটেছে, একটি বর্ণ বানানো কাহারো নহে ।”  
বালুতে বালুতে বাঁধিয়া কহিল নয়নে নয়নে চাহি’—  
“আকাশে পাতালে মরতে আজি ত গোপন কিছুই নাহি ।”  
কহিল হাসিয়া মালা হাতে ল'য়ে পাশাপাশি কাছাকাছি,  
“ত্রিভুবন যদি ধরা পড়ি' গেল তুমি আমি কোথা আছি ।”

হায় কবি হায়, সে হ'তে প্রকৃতি হ'য়ে গেছে সাবধানী,—  
মাথাটি ঘেরিয়া বুকের উপরে আঁচল দিয়েছে টানি' ।  
যত ছলে আজ যত ঘুরে মরি জগতের পিছু পিছু  
কোনোদিন কোনো গোপন খবর নূতন মেলে না কিছু ।  
শুধু গুঞ্জনে কূজনে গন্ধে সন্দেশ হয় মনে  
লুকানো কথার হাওয়া বহে যেন বন হ'তে উপবনে ;  
মনে হয় যেন আলোতে ছায়াতে রয়েছে কি ভাব ভরা,—  
হায় কবি হায়, হাতে হাতে আর কিছুই পড়ে না ধরা ।

## উন্নতি-লক্ষণ

(১)

ওগো পুরবাসী, আমি পরবাসী  
জগৎব্যাপারে অজ্ঞ,  
শুধাই তোমায় এ পুর-শালায়  
আজি এ কিসের যজ্ঞ ?  
সিংহদুয়ারে পথের দু'ধারে  
রথের না দেখি অন্ত,—  
কার সম্মানে ভিড়েছে এখানে  
যত উষ্ণীষবন্ত ?  
বসেছেন ধীর অতি গম্ভীর  
দেশের প্রবীণ বিজ্ঞ,  
প্রবেশিয়া ঘরে সঙ্কোচে ডরে  
মরি আমি অনভিজ্ঞ ।  
কোন্ শূরবীর জন্মভূমির  
ঘুচাল হীনতাপঙ্ক ?  
ভারতের শুচি যশশশিরুচি  
কে করিল অকলঙ্ক ?

রাজা মহারাজ মিলেছেন আজ  
কাহারে করিতে ধন্য ?  
বসেছেন এঁরা পূজ্যজনেরা  
কাহার পূজার জন্য ?

( উত্তর )

গেল যে সাহেব ভরি' দুই জেব্  
করিয়া উদর পূর্তি ;—  
এঁরা বড়লোক করিবেন শোক  
স্থাপিয়া তাহারি মূর্তি ।

---

অভাগা কে ওই মাগে নাম-সই,  
দ্বারে দ্বারে ফিরে খিন্ন,  
তবু উৎসাহে রচিবারে চাহে  
কাহার স্মরণচিহ্ন ?  
সন্ধ্যাবেলায় ফিরে আসে হায়  
নয়ন অশ্রুসিক্ত,  
হৃদয় ক্ষুণ্ণ, খাতাটি শূণ্য,  
থলি একেবারে রিক্ত ।  
যাহার লাগিয়া ফিরিছে মাগিয়া  
মুছি' ললাটের ঘর্ষ,  
স্বদেশের কাছে কি সে করিয়াছে ?  
কি অপরাধের কস্ম ?

( উত্তর )

আর কিছু নহে, পিতাপিতামহে  
বসিয়ে গেছে সে উচ্ছে,  
জন্মভূমিরে সাজিয়েছে ঘিরে  
অমর-পুষ্পগুচ্ছে ।

( ২ )

দেবী দশভূজা, হবে তাঁরি পূজা,  
মিলিবে স্বজনবর্গ ;  
হেথা এল কোথা দ্বিতীয় দেবতা,  
নূতন পূজার অর্ঘ্য ?  
কার সেবাতরে আসিতেছে ঘরে  
আয়ুহীন মেঘবৎস ?  
নিবেদিতে পারে আনে ভারে ভারে  
বিপুল ভেটকি মৎস্য ?  
কি আছে পাত্রে যাহার গাত্রে  
বসেছে তৃষিত মক্ষী ?  
শলায় বিদ্ধ হতেছে সিদ্ধ  
মনু-নিষিদ্ধ পক্ষী ।  
দেবতার সেরা কি দেবতা এঁরা  
পূজাভবনের পূজ্য ?  
যাঁহাদের পিছে পড়ে' গেছে নীচে  
দেবী হয়ে' গেছে উহ ।

( উত্তর )

ম্যাকে, ম্যাকিনন্, অ্যালেন্, ডিলন্

দোকান ছাড়িয়া সখ

সরবে গরবে পূজার পরবে

তুলেছেন পাদপদ্ম !

এসেছিল দ্বারে পূজা দেখিবারে

দেবীর বিনীত ভক্ত,

কেন যায় ফিরে অবনতশিরে

অবমানে আঁখি রক্ত ?

উৎসবশালা, জ্বলে দীপমালা,

রবি চলে' গেছে অস্তে ;—

কুতূহলীদলে কি বিধানবলে

বাধা পায় দ্বারীহস্তে ?

ইহারা কি তবে অনাচারী হবে,

সমাজ হইতে ভিন্ন ?

পূজাদানধ্যানে ছেলেখেলা জ্ঞানে

এরা মনে মানে ঘৃণ্য ?

( উত্তর )

না না এরা সবে ফিরিছে নীরবে

দীন প্রতিবেশীবৃন্দে,

সাহেব-সমাজ আসিবেন আজ,

এরা এলে হবে নিন্দে ।



( ৩ )

লোকটি কে ইনি যেন চিনি-চিনি,

বাঙালী মুখের ছন্দ,—

ধরণে ধারণে অতি অকারণে

ইংরাজিতরো গন্ধ ।

কালিয়া-বরণ, অঙ্গে পরণ

কালো হাট্ কালোকুর্তি,

যদি নিজ-দেশী কাছে আসে ঘেসি’

কিছু যেন কড়ামূর্ত্তি ।

ধুতি-পরা দেহ দেখা দিলে কেহ

অতিশয় লাগে লজ্জা,

বাংলা আলাপে রোষে সন্তাপে

জলে’ ওঠে হাড় মজ্জা ।

ইঁহারা কি শেষ ছাড়িবেন দেশ ?

এঁরা কি ভারত-দেষ্টা ?

এঁদের কি তবে দলে দলে সবে

বিজাতি হবার চেষ্টা ?

( উত্তর )

এঁরা সবে বীর, এঁরা স্বদেশীর

প্রতিনিধি বলে’ গণ্য ;

কোট্‌পরা কায় সঁপেছেন হায়

শুধু স্বজাতির জন্য ।

অনুরাগভরে ঘুচাবার তরে  
বঙ্গভূমির দুঃখ  
এ সভা মহতী ; এর সভাপতি  
সভোরা দেশমুখ্য ।  
এরা দেশহিতে চাহিছে সঁপিতে  
আপন রক্তমাংস,  
তবে এ সভাকে ছেড়ে কেন থাকে  
এ দেশের অধিকাংশ ?  
কেন দলে দলে দূরে যায় চলে',  
বুঝে না নিজের ইফৎ,  
যদি কুতূহলে আসে সভাতলে,  
কেন বা নিদ্রাবিষ্ট ?  
তবে কি ইহারা নিজ-দেশছাড়া ?  
রুধিয়া রয়েছে কর্ণ  
দৈবের বশে পাছে কানে পশে  
শুভ কথা এক বর্ণ ?  
( উত্তর )  
না, না, এঁরা হন জন-সাধারণ,  
জানে দেশভাষামাত্র,  
স্বদেশসভায় বসিবারে হায়  
তাই অযোগ্যপাত্র !

( ৪ )

বেশভূষা ঠিক যেন আধুনিক,  
 মুখ দাড়ি-সমাকীর্ণ,  
 কিন্তু বচন অতি পুরাতন,  
 ঘোরতর জরাজীর্ণ ।  
 উচ্চ আসনে বসি' একমনে  
 শূন্যে মেলিয়া দৃষ্টি  
 তরুণ এ লোক ল'য়ে মন্থশ্লোক  
 করিছে বচনবৃষ্টি ।  
 জলের সমান করিছে প্রমাণ,  
 কিছু নহে উৎকৃষ্ট  
 শালিবাহনের পূর্ব সনের  
 পূর্বের যা নহে স্মৃতি ।  
 শিশুকাল থেকে গেছেন কি পেকে  
 নিখিল পুরাণ-তন্ত্রে ?  
 বয়স নবীন করিছেন ক্ষীণ  
 প্রাচীন বেদের মন্ত্রে ?  
 আছেন কি তিনি লইয়া পাণিনি,  
 পুঁথি ল'য়ে কীটদন্ড ?  
 বায়ুপুরাণের খুঁজি' পাঠ-ফের  
 আয়ু করিছেন নষ্ট ?

প্রাচীনের প্রতি গভীর আরতি  
বচন-রচনে সিদ্ধ,  
কহ ত ম'শায় প্রাচীন ভাষায়  
কতদূর কৃতবিদ্য ?  
( উত্তর )  
ঋজুপাঠ দুটি নিয়েছেন লুটি',  
দু' সর্গ রঘুবংশ,  
মোক্ষমূলার হ'তে অধিকার  
শাস্ত্রের বাকি অংশ ।

---

পণ্ডিত ধীর মুণ্ডিত শির  
প্রাচীনশাস্ত্রে শিক্ষা,  
নবীন সভায় নব্য উপায়ে  
দিবেন ধর্মদীক্ষা ।  
কহেন বোঝায়ে, কথাটি সোজা এ,  
হিন্দুধর্ম সত্য,  
মূলে আছে তা'র কেমিষ্টি, আর  
শুধু পদার্থতত্ত্ব ।  
টিকিটা যে রাখা, ওতে আছে ঢাকা  
ম্যাগেটিজম্ শক্তি,  
তিলকরেখায় বৈদ্যুত ধায়  
তাই জেগে ওঠে ভক্তি ।

সন্ধ্যাটি হ'লে প্রাণপণবলে  
বাজালে শঙ্খঘণ্টা  
মথিত বাতাসে তাড়িত প্রকাশে  
সচেতন হয় মনটা ।  
এম্-এ ঝাঁকে ঝাঁক শুনিছে অবাক  
অপরূপ বৃত্তান্ত—  
বিজ্ঞাভূষণ এমন ভীষণ  
বিজ্ঞানে দুর্দান্ত ।  
তবে ঠাকুরের পড়া আছে ঢের,—  
অন্ততঃ গ্যানো-খণ্ড,  
হেলম্হৎস অতি বীভৎস  
করেছে লগুভণ্ড ।

( উত্তর )

কিছু না, কিছু না, নাই জানাশুনা  
বিজ্ঞান কানাকোড়ি,  
ল'য়ে কল্পনা লম্বা রসনা  
করিছে দৌড়াদৌড়ি ।

১৩০৬ ।

## অশেষ

আবার আহ্বান ?

যত কিছু ছিল কাজ,                      সাজ ত করেছি আজ  
দীর্ঘ দিনমান ।

জাগায়ে মাধবীবন                      চলে' গেছে বহুক্ষণ  
প্রত্যুষ নবীন,  
প্রথর পিপাসা হানি'                      পুষ্পের শিশির টানি'  
গেছে মধ্যদিন ।

মাঠের পশ্চিম শেষে                      অপরাহ্ন স্নান হেসে  
হ'ল অবসান,  
পরপারে উত্তরিতে                      পা দিয়েছি তরণীতে  
আবার আহ্বান ?

নামে সন্ধ্যা তন্দ্রালসা,                      সোনার আঁচলখসা,  
হাতে দীপশিখা,  
দিনের কল্লোলপর                      টানি' দিল ঝিল্লিস্বর  
ঘন ঘবনিকা ।  
ওপারের কালো কূলে                      কালী ঘনাইয়া তুলে  
নিশার কালিমা,

## কল্পনা

গাঢ় সে তিমিরতলে                      চক্ষু কোথা ডুবে চলে  
নাহি পায় সীমা ।

নয়ন-পল্লবপরে                      স্বপ্ন জড়াইয়া ধরে  
থেমে যায় গান ;  
ক্লান্তি টানে অঙ্গ মম                      প্রিয়ার মিনতিসম ;  
এখনো আহ্বান ?

রে মোহিনী, রে নিষ্ঠুরা                      ওরে রক্তলোভাতুরা  
কঠোর স্বামিনী,  
দিন মোর দিনু তোরে                      শেষে নিতে চাস্ হরে’  
আমার যামিনী ?

জগতে সবারি আছে                      সংসারসীমার কাছে  
কোনোখানে শেষ,  
কেন আসে মৰ্ম্মচ্ছেদি’                      সকল সমাপ্তি ভেদি’  
তোমার আদেশ ?

বিশ্বযোড়া অন্ধকার                      সকলেরি আপনার  
একেলার স্থান,  
কোথা হ’তে তারো মাঝে                      বিদ্যুতের মত বাজে  
তোমার আহ্বান ?

দক্ষিণসমুদ্রপারে,                      তোমার প্রাসাদদ্বারে,  
হে জাগ্রত রাণী,

বাজে না কি সন্ধ্যাকালে      শান্ত সুরে ক্লান্ত তালে  
    বৈরাগ্যের বাণী ?  
 সেথায় কি মূক বনে                      ঘুমায় না পাখীগণে  
    আঁধার শাখায় ?  
 তারাগুলি হস্ম্যাশিরে                      উঠে না কি ধীরে ধীরে  
    নিঃশব্দ পাখায় ?  
 লতাবিতানের তলে                      বিছায় না পুষ্পদলে  
    নিভৃত শয়ান ?  
 হে অশান্ত শান্তিহীন,                      শেষ হ'য়ে গেল দিন  
    এখনো আহ্বান ?

রহিল রহিল তবে                      আমার আপন সবে,  
    আমার নিরালা,  
 মোর সন্ধ্যাদীপালোক,                      পথ-চাওয়া দুটি চোখ,  
    যত্নে গাঁথা মালা ।  
 খেয়া তরী যাক্ বয়ে'                      গৃহ-ফেরা লোক ল'য়ে  
    ওপারের গ্রামে,  
 তৃতীয়ার ক্ষীণ শশী                      ধীরে পড়ে' যাক্ খসি'  
    কুটীরের বামে !  
 রাত্রি মোর, শান্তি মোর,                      রহিল স্বপ্নের ঘোর  
    স্নিগ্ধ নিৰ্বাণ,



कल्लना

আবার চলি' ফিরে                      বহি' ক্লান্ত নতশিরে  
তোমার আহ্বান।

বল তবে কি বাজাব,                      ফুল দিয়ে কি সাজাব  
তব দ্বারে আজ,  
রক্ত দিয়ে কি লিখিব,                      প্রাণ দিয়ে কি শিখিব  
কি করিব কাজ ?  
যদি আঁখি পড়ে ঢুলে,                      শ্লথ হস্ত যদি ভুলে  
পূর্ব্ব নিপুণতা,  
বক্ষে নাই পাই বল,                      চক্ষে যদি আসে জল,  
বেধে যায় কথা,  
চেয়োনাক ঘৃণাভরে,                      কোরোনাক অনাদরে  
মোরে অপমান,  
মনে রেখো, হে নিদয়ে,                      মেনেছিঁছু অসময়ে  
তোমার আহ্বান ।

সেবক আমার মত                      রয়েছে সহস্র শত  
তোমার দুয়ারে,  
তাহারা পেয়েছে ছুটি,                  ঘুমায় সকলে জুটি’  
পথের দু’ধারে ।

শুধু আমি তোরে সেবি’                  বিদায় পাইনে দেবী,  
ডাক কণ্ঠেকণ্ঠে ;

বেছে নিলে আমারেই,                    দুৰুহ সৌভাগ্য সেই  
 বহি প্রাণপণে ।  
 সেই গর্বেব জাগি' র'ব                    সারারাত্রি দ্বারে তব  
 অনিদ্র নয়ান,  
 সেই গর্বেব কণ্ঠে মম                    বহি' বরমালাসম  
 তোমার আহ্বান ।

হবে, হবে, হবে জয়                    হে দেবী করিনে ভয়,  
 হব আমি জয়ী ।  
 তোমার আহ্বানবাণী                    সফল করিব রাণী,  
 হে মহিমাময়ী ।  
 কাঁপবে না ক্লান্তকর                    ভাঙিবে না কণ্ঠস্বর,  
 টুটিবে না বীণা,  
 নবীন প্রভাত লাগি                    দীর্ঘরাত্রি র'ব জাগি',  
 দীপ নিবিবে না ।  
 কস্মভার নবপ্রাতে                    নবসেবকের হাতে  
 করি' যাব দান,  
 মোর শেষ কণ্ঠস্বরে                    যাইব ঘোষণা করে'  
 তোমার আহ্বান ।

## বিদায়

ক্ষমা কর, ধৈর্য্য ধর,  
হউক সুন্দরতর  
বিদায়ের ক্ষণ ।

মৃত্যু নয়, ধ্বংস নয়,  
নহে বিচ্ছেদের ভয়,  
শুধু সমাপন ।

শুধু সুখ হ'তে স্মৃতি  
শুধু ব্যথা হ'তে গীতি,  
তরী হ'তে তীর,  
খেলা হ'তে খেলাশাস্তি,  
বাসনা হইতে শাস্তি,  
নভ হ'তে নীড় ।

দিনান্তের নম্র কর  
পড়ুক মাথার পর,  
আঁখিপরে ঘুম,  
হৃদয়ের পত্রপুটে  
গোপনে উঠুক ফুটে  
নিশার কুসুম ।

আরতির শঙ্খরবে  
 নামিয়া আসুক তবে  
 পূর্ণ পরিণাম,  
 হাসি নয় অশ্রু নয়  
 উদার বৈরাগ্যময়  
 বিশাল বিশ্রাম ।

প্রভাতে যে পাখী সবে  
 গেয়েছিল কলরবে,  
 থামুক এখন ।  
 প্রভাতে যে ফুলগুলি  
 জেগেছিল মুখ তুলি',  
 মুড়ুক নয়ন ।  
 প্রভাতে যে বায়ুদল  
 ফিরেছিল সচঞ্চল  
 যাক্ থেমে যাক্ ।  
 নীরবে উদয় হোক  
 অসীম নক্ষত্র লোক  
 পরম নির্বাক ।

হে মহানন্দর শেষ,  
 হে বিদায় অনিমেষ,  
 হে সৌম্য বিষাদ,

ক্লেবে দাঁড়াও স্থির  
মুছায়ে নয়ন-নীর  
কর আশীর্ববাদ ।  
ক্লেবে দাঁড়াও স্থির,  
পদতলে নমি শির  
তব যাত্রাপথে,  
নিঃকম্প প্রদীপ ধরি'  
নিঃশব্দে আরতি করি  
নিঃস্বপ্ন জগতে ।

১৩০৫ ।

## বর্ষ শেষ\*

ঈশানের পূজ্যমেঘ অন্ধবেগে ধেয়ে চলে' আসে  
বাধাবন্ধহারা

গ্রামান্তের বেণুকুঞ্জে নীলাঞ্জন ছায়া সঞ্চারিয়া,  
হানি' দীর্ঘধারা ।

বর্ষ হ'য়ে আসে শেষ, দিন হ'য়ে এল সমাপন,  
চৈত্র অবসান ;

গাহিতে চাহিছে হিয়া পুরাতন ক্লান্ত বরষের  
সর্ববশেষ গান ।

ধূসর-পাংশুল মাঠ, ধেনুগণ ধায় উদ্ধমুখে,  
ছুটে চলে চাষী,

তুরিতে নামায় পাল নদীপথে ত্রস্ত তরী যত  
তীরপ্রান্তে আসি' ।

পশ্চিমে বিচ্ছিন্ন মেঘে সায়াহ্নের পিঙ্গল আভাস  
রাঙাইছে আঁখি,—

বিদ্যুৎ-বিদীর্ণ শূন্যে ঝাঁকে ঝাঁকে উড়ে চলে' যায়  
উৎকণ্ঠিত পাখী ।

বীণাতন্ত্রে হান হান খরতর বন্ধার বঙ্কনা,  
তোল উচ্চস্বর ।

---

\* ১৩০৫ শালে ৩০শে চৈত্র ঝড়ের দিনে রচিত ।

## কল্পনা

হৃদয় নির্দয়ঘাতে ঝাঝরিয়া ঝরিয়া পড়ুক  
প্রবল প্রচুর ।

ধাও গান প্রাণভরা ঝড়ের মতন উর্দ্ধবেগে  
অনন্ত আকাশে ।

উড়ে যাক দূরে যাক বিবর্ণ বিশীর্ণ জীর্ণ পাতা  
বিপুল নিশ্বাসে ।

আনন্দে আতঙ্কে মিশি', ক্রন্দনে উল্লাসে গরজিয়া  
মত্ত হাহারবে

ঝঞ্ঝার মঞ্জীর বাঁধি' উন্মাদিনী কালবৈশাখীর  
নৃত্য হোক তবে ।

ছন্দে ছন্দে পদে পদে অঞ্চলের আবর্তনআঘাতে  
উড়ে হোক ক্ষয়

ধূলিসম তৃণসম পুরাতন বৎসরের যত  
নিষ্ফল সঞ্চয় ।

মুক্ত করি' দিগু দ্বার,—আকাশের যত বৃষ্টিঝড়  
আয় মোর বুকে,

শঙ্খের মতন তুলি' একটি ফুৎকার হানি' দাও  
হৃদয়ের মুখে ।

বিজয়-গর্জন-স্বনে অভ্রভেদ করিয়া উঠুক  
মঙ্গলনির্ঘোষ,

জাগায়ে জাগ্রত চিত্তে মুনিসম উলঙ্গ নিশ্মল  
কঠিন সন্তোষ ।

সে পূর্ণ উদাত্তধ্বনি বেদগাথা সামমন্ত্রসম  
সরল গম্ভীর  
সমস্ত অন্তর হ'তে মূর্ছভেঁ অথগুমূর্ত্তি ধরি'  
হউক বাহির ।  
নাহি তাহে দুঃখ স্তখ পুরাতন তাপ-পরিতাপ  
কম্প লজ্জা ভয়,  
শুধু তাহা সত্ত্বাত ঋজু শুভ্র মুক্ত জীবনের  
জয়ধ্বনিময় ।

হে নূতন, এস তুমি সম্পূর্ণ গগন পূর্ণ করি'  
পুঞ্জ পুঞ্জ রূপে,  
ব্যাপ্ত করি', লুপ্ত করি', স্তরে স্তরে স্তবকে স্তবকে  
ঘন ঘোর স্তপে ।  
কোথা হ'তে আচম্বিতে মুহূর্ত্তেকে দিক্ দিগন্তর  
করি' অন্তরাল  
স্নিগ্ধ কৃষ্ণ ভয়ঙ্কর তোমার সঘন অন্ধকারে  
রহ ক্ষণকাল ।

তোমার ইঙ্গিত যেন ঘনগূঢ় ক্রকুটির তলে  
বিদ্যুতে প্রকাশে,—



## কল্পনা

তোমার সঙ্গীত যেন গগনের শত ছিদ্রমুখে  
বায়ুগর্জে আসে,—  
তোমার বর্ষণ যেন পিপাসারে তীব্র তীক্ষ্ণবেগে  
বিদ্ধ করি' হানে,  
তোমার প্রশান্তি যেন সুপ্ত শ্যাম ব্যাপ্ত সুগম্ভীর  
স্তব্ধ রাত্রি আনে ।

এবার আসনি তুমি বসন্তের আবেশ-হিল্লোলে  
পুষ্পদল চুমি',  
এবার আসনি তুমি মর্ম্মরিত কূজনে গুঞ্জনে,—  
ধন্য ধন্য তুমি ।  
রথচক্র ঘর্ঘরিয়া এসেছ বিজয়ী রাজসম  
গর্বিবত নিভয়,—  
বজ্রমন্ত্রে কি ঘোষিলে বুঝিলাম, নাহি বুঝিলাম,—  
জয় তব জয় ।

হে দুর্দম, হে নিশ্চিত, হে নূতন নিষ্ঠুর নূতন,  
সহজ প্রবল ।  
জীর্ণ পুষ্পদল যথা ধ্বংস ভ্রংশ করি' চতুর্দিকে  
বাহিরায় ফল—  
পুরাতন-পর্ণপুট দীর্ণ করি' বিকীর্ণ করিয়া  
অপূর্ব আকারে

তেমনি সবলে তুমি পরিপূর্ণ হয়েছ প্রকাশ,—  
প্রণমি তোমারে ।

তোমারে প্রণমি আমি, হে ভীষণ, স্তম্ভিত শ্যামল,  
অক্লান্ত অগ্নান ।

সন্তোজাত মহাবীর, কি এনেছ করিয়া বহন  
কিছু নাহি জান ।

উড়েছে তোমার ধ্বজা মেঘরন্ধ্রচ্যুত তপনের  
জ্বলদর্শি-রেখা ;

করঘোড়ে চেয়ে আছি উদ্ধমুখে, পড়িতে জানি না  
কি তাহাতে লেখা ।

হে কুমার, হস্তমুখে তোমার ধনুকে দাও টান  
বনন রনন,

বক্ষে পঙ্কর ভেদি' অন্তরেতে হউক কম্পিত  
সুতীত্র স্বনন ।

হে কিশোর, তুলে লও তোমার উদার জয়ভেরী  
করহ আহ্বান ।

আমরা দাঁড়াব উঠি, আমরা ছুটিয়া বাহিরিব,  
অর্পিব পরাণ ।

চাব না পশ্চাতে মোরা, মানিব না বন্ধন ক্রন্দন,  
হেরিব না দিক্,

## কল্পনা

গণিব না দিনক্ষণ, করিব না বিতর্ক বিচার,

উদ্যম পথিক ।

মুহূর্ত্তে করিব পান মৃত্যুর ফেনিল উন্মত্ততা

উপকণ্ঠ ভরি,—

খিন্ন শীর্ণ জীবনের শত লক্ষ ধিক্কার লাঞ্ছনা

উৎসর্জ্ঞন করি ।

শুধু দিনযাপনের শুধু প্রাণধারণের ঘ্যানি,

সরমের ডালি,

নিশি নিশি রুদ্ধ ঘরে ক্ষুদ্রশিখা স্তিমিত দীপের

ধূমান্বিত কালী,

লাভ ক্ষতি টানাটানি, অতি সূক্ষ্ম ভগ্ন অংশ ভাগ

কলহ সংশয়,

সহে না সহে না আর জীবনেরে খণ্ড খণ্ড করি’

দণ্ডে দণ্ডে ক্ষয় ।

যে পথে অনন্ত লোক চলিয়াছে ভীষণ নীরবে

সে পথপ্রান্তের

এক পার্শ্বে রাখ মোরে, নিরখিব বিরাট স্বরূপ

যুগ-যুগান্তের ।

শোনসম অকস্মাৎ ছিন্ন করে’ উদ্ধে ল’য়ে যাও

পঙ্ককুণ্ড হ’তে,

মহান্ মৃত্যুর সাথে মুখোমুখি করে' দাও মোরে  
বজ্রের আলোতে ।

তা'র পরে ফেলে দাও, চূর্ণ কর, যাহা ইচ্ছা তব,  
ভগ্ন কর পাখা ।

যেখানে নিক্ষেপ কর হতপত্র, চ্যুত পুষ্পদল,  
ছিন্নভিন্ন শাখা,  
ক্ষণিক খেলনা তব, দয়াহীন তব দম্ভ্যতার  
লুণ্ঠনাবশেষ,  
সেথা মোরে ফেলে দিয়ো অনন্ত-তমিস্র সেই  
বিস্মৃতির দেশ ।

নবাকুর ইক্ষুবনে এখনো বারিছে বৃষ্টিধারা  
বিশ্রামবিহীন ;

মেঘের অনন্ত পথে অন্ধকার হ'তে অন্ধকারে  
চলে' গেল দিন ।

শান্ত ঝড়ে, ঝিল্লিরবে, ধরণীর স্নিগ্ধ গন্ধোচ্ছ্বাসে,  
মুক্ত বাতায়নে  
বৎসরের শেষ গান সাঙ্গ করি' দিনু অঞ্জলিয়া  
নিশীথগগনে ।

## ঝড়ের দিনে

আজি এই আকুল আশ্বিনে,  
মেঘে-ঢাকা ছরস্তু ছুর্দিনে,  
হেমন্ত ধানের ক্ষেতে বাতাস উঠেছে মেতে  
কেমনে চলিবে পথ চিনে ?  
আজি এই ছরস্তু ছুর্দিনে ।

দেখিছ না ওগো সাহসিকা  
ঝিকিমিকি বিদ্যুতের শিখা ।  
মনে ভেবে দেখ তবে এ ঝড়ে কি বাঁধা র'বে  
কবরীর শেফালি-মালিকা ?  
ভেবে দেখ ওগো সাহসিকা ।

আজিকার এমন ঝঞ্ঝায়  
নূপুর বাঁধে কি কেহ পায় ?  
যদি আজি বৃষ্টিজল ধুয়ে দেয় নীলাঞ্চল  
গ্রামপথে যাবে কি লজ্জায়  
আজিকার এমন ঝঞ্ঝায় ?

হে উতলা শোনো কথা শোনো,  
 ছুয়ার কি খোলা আছে কোনো ?  
 এ বাঁকা পথের শেষে মাঠ যেথা মেঘে মেশে  
 বসে' কেহ আছে কি এখনো  
 এ ছুর্যোগে, শোনো ওগো শোনো ।

আজ যদি দীপ জ্বালে দ্বারে  
 নিবে কি যাবে না বারেবারে ?  
 আজ যদি বাজে বাঁশি গান কি যাবে না ভাসি'  
 আশ্বিনের অসীম আঁধারে  
 ঝড়ের ঝাপটে বারেবারে ?

মেঘ যদি ডাকে গুরু গুরু,  
 নৃত্য মাঝে কেঁপে ওঠে উরু,  
 কাহারে করিবে রোষ, কার পরে দিবে দোষ  
 বক্ষ যদি করে ছুরু ছুরু,  
 মেঘ ডেকে ওঠে গুরু গুরু ।

যাবে যদি,—মনে ছিল না কি,  
 আমাদের নিলে না কেন ডাকি' ?  
 আমি ত পথেরি ধারে বসিয়া ঘরের দ্বারে  
 আনমনে ছিলাম একাকী  
 আমাদের নিলে না কেন ডাকি' ?

## কল্পনা

কখন প্রহর গেছে বাজি',  
কোনো কাজ নাহি ছিল আজি ।  
ঘরে আসে নাই কেহ,      সারাদিন শূন্য গেহ,  
বিলাপ করেছে তরুরাজি ।  
কোনো কাজ নাহি ছিল আজি ।

যত বেগে গরজিত ঝড়,  
যত মেঘে ছাইত অম্বর,  
রাত্রে অন্ধকারে যত      পথ অফুরান্ হ'ত  
আমি নাহি করিতাম ডর—  
যত বেগে গরজিত ঝড় ।

বিদ্যুতের চমকানি-কালে  
এ বক্ষ নাচিত তালে তালে ;  
উত্তরী উড়িত মম      উন্মুখ পাথার সম,  
মিশে যেত আকাশে পাতালে  
বিদ্যুতের চমকানি কালে ।

তোমায় আমায় একন্ডর  
সে যাত্রা হইত ভয়ঙ্কর ।  
তোমার নূপুর আজি      প্রলয়ে উঠিত বাজি',  
বিজুলী হানিত আঁখিপর,  
যাত্রা হ'ত মত্ত ভয়ঙ্কর ।

ঝড়ের দিনে

কেন আজি যাও একাকিনী ?  
কেন পায়ে বেঁধেছে কিস্কিনী ?  
এ দুর্দিনে কি কাবণে      পড়িল তোমার মনে  
বসন্তের বিন্মৃতি কাহিনী ?  
কোথা আজি যাও একাকিনী ?

১৩০৬।

-----



## অসময়

হয়েছে কি তবে সিংহ-দুয়ার বন্ধ রে,  
এখনো সময় আছে কি, সময় আছে কি ?  
দূরে কলরব ধ্বনিছে মন্দ মন্দ রে,  
ফুরাল কি পথ, এসেছি পুরীর কাছে কি ?  
মনে হয় সেই স্তম্ভের মধুর গন্ধ রে,  
রহি রহি যেন ভাসিয়া আসিছে বাতাসে ।  
বহু সংশয়ে বহু বিলম্ব করেছি,  
এখন বন্ধা সন্ধ্যা আসিল আকাশে !

ওই কি প্রদীপ দেখা যায় পুরমন্দিরে ?  
ও যে ছুটি তারা দূর পশ্চিম গগনে ।  
ও কি শিঞ্জিত ধ্বনিছে কনক মঞ্জীরে ?  
ঝিল্লির রব বাজে বনপথে সঘনে ।  
মরীচিকা-লেখা দিগন্তপথ রঞ্জি' রে  
সারাদিন আজি চলনা করেছে হতাশে ।  
বহু সংশয়ে বহু বিলম্ব করেছি,  
এখন বন্ধা সন্ধ্যা আসিল আকাশে ।

এত দিনে সেথা বন-বনাস্ত নন্দিয়া  
 নব-বসন্তে এসেছে নবীন ভূপতি !  
 তরুণ আশায় সোনার প্রতিমা বন্দিয়া  
 নব আনন্দে ফিরিছে যুবক-যুবতী ।  
 বীণার তন্ত্রী আকুল ছন্দে ক্রন্দিয়া  
 ডাকিছে সবারে আছে যারা দূর প্রবাসে  
 বহু সংশয়ে বহু বিলম্ব করেছি,  
 এখন বক্ষ্যা সক্ষ্যা আসিল আকাশে ।

আজিকে সবাই সাজিয়াছে ফুলচন্দনে,  
 মুক্ত আকাশে যাপিবে জ্যোৎস্না-যামিনী  
 দলে দলে চলে বাঁধাবাঁধি বাহু-বন্ধনে,  
 ধ্বনিছে শূণ্ণে জয় সঙ্গীত-রাগিণী ।  
 নূতন পতাকা নূতন প্রাসাদ-প্রাঙ্গণে  
 দক্ষিণবায়ে উড়িছে বিজয়বিলাসে ।  
 বহু সংশয়ে বহু বিলম্ব করেছি  
 এখন বক্ষ্যা সক্ষ্যা আসিল আকাশে ।

সারা নিশি ধরে' বৃথা করিলাম মন্ত্ৰণা,  
 শরৎ-প্রভাত কাটিল শূণ্ণে চাহিয়া,  
 বিদায়ের কালে দিতে গেনু কারে সান্ত্বনা,  
 যাত্রীরা হোথা গেল খেয়াতরী বাহিয়া ।

## কল্পনা

আপনারে শুধু বুখা করিলাম বঞ্চনা,  
জীবন-আহুতি দিলাম কি আশা-হতাশে ।  
বহু সংশয়ে বহু বিলম্ব করেছি  
এখন বন্ধ্যা সন্ধ্যা আসিল আকাশে ।

প্রভাতে আমায় ডেকেছিল সবে ইঙ্গিতে,  
বহুজনমাঝে লয়েছিল মোরে বাছিয়া,  
যবে রাজপথ ধ্বনিয়া উঠিল সঙ্গীতে  
তখনো বারেক উঠেছিল প্রাণ নাচিয়া ।  
এখন কি আর পারিব প্রাচীর লঙ্ঘিতে,  
দাঁড়ায়ে বাহিরে ডাকিব কাহারে বুখা সে ।  
বহু সংশয়ে বহু বিলম্ব করেছি  
এখন বন্ধ্যা সন্ধ্যা আসিল আকাশে ।

তবু একদিন এই আশাহীন পন্থ রে  
অতি দূরে দূরে ঘুরে ঘুরে শেষে ফুরাবে,  
দীর্ঘ ভ্রমণ একদিন হবে অন্ত রে,  
শান্তি সঙ্গীর শান্ত শরীর জুড়াবে ।  
দুয়ার-প্রান্তে দাঁড়ায়ে বাহির প্রান্তরে  
ভেরী বাজাইব মোর প্রাণপণ প্রয়াসে ।  
বহু সংশয়ে বহু বিলম্ব করেছি  
এখন বন্ধ্যা সন্ধ্যা আসিছে আকাশে ।

## বসন্ত

অযুত বৎসর আগে, হে বসন্ত, প্রথম ফাল্গুনে  
মস্ত কুতূহলী,  
প্রথম যেদিন খুলি' নন্দনের দক্ষিণ দুয়ার  
মর্ত্যে এলে চলি,—  
অকস্মাৎ দাঁড়াইলে মানবের কুটীরপ্রাঙ্গণে  
পীতাম্বর পরি',  
উতলা উত্তরী হ'তে উড়াইয়া উন্মাদ পবনে  
মন্দার-মঞ্জরী,—  
দলে দলে নর-নারী ছুটে এল গৃহদ্বার খুলি'  
ল'য়ে বীণা বেণু  
মাতিয়া পাগল নৃত্যে হাসিয়া করিল হানাহানি  
ছুঁড়ি' পুষ্পরেণু।

সখা, সেই অতি দূর সজোজাত আদি মধুমাসে  
তরুণ ধরায়  
এনেছিলে যে কুসুম ডুবাইয়া তপ্ত কিরণের  
স্বর্ণ মদিরায়,

## কল্পনা

সেই পুরাতন সেই চিরন্তন অনন্ত প্রবীণ  
নব পুষ্পরাজি  
বর্ষে বর্ষে আনিয়াছ, তাই ল'য়ে আজো পুনর্ব্বার  
সাজাইলে সাজি ।  
তাই সেই পুষ্পে লিখা জগতের প্রাচীন দিনের  
বিস্মৃত বারতা,  
তাই তা'র গন্ধে ভাসে ক্লান্ত লুপ্ত-লোকলোকান্তের  
কান্ত মধুরতা ।

তাই আজি প্রস্ফুটিত নিবিড় নিকুঞ্জবন হ'তে  
উঠিছে উচ্ছ্বাসি'  
লক্ষ দিনযামিনীর যৌবনের বিচিত্র বেদনা,  
অশ্রু, গান, হাসি ।  
যে মালা গেঁথেছি আজি তোমাতে সঁপিতে উপহার,  
তারি দলে দলে  
নামহারা নায়িকার পুরাতন আকাঙ্ক্ষাকাহিনী  
আঁকা অশ্রুজলে ।  
সম্বন্ধ-সেচন-সিক্ত নবোন্মুক্ত এই গোলাপের  
রক্ত পত্রপুটে  
কল্পিত কুণ্ঠিত কত অগণ্য চুম্বন-ইতিহাস  
রহিয়াছে ফুটে ।

আমার বসন্তরাতে চারি চক্ষে জেগে উঠেছিল  
 যে কয়টি কথা,  
 তোমার কুসুমগুলি, হে বসন্ত, সে গুপ্ত সংবাদ,  
 নিয়ে গেল কোথা ?  
 সে চম্পক, সে বকুল, সে চঞ্চল চকিত চামেলি  
 স্মিত শুভ্রমুখী,  
 তরুণী রজনীগন্ধা আগ্রহে উৎসুক উন্মিতা,  
 একান্ত কৌতুকী,  
 কয়েক বসন্তে তা'রা আমার যৌবন-কাব্যগাথা  
 লয়েছিল পড়ি' ।  
 কণ্ঠে কণ্ঠে থাকি' তা'রা শুনেছিল দুটি বন্ধোমাঝে  
 বাসনা বাঁশরি ।

ব্যর্থ জীবনের সেই কয়খানি পরম অধ্যায়,  
 ওগো মধুমাস,  
 তোমার কুসুম গন্ধে বর্ষে বর্ষে শূন্যে জলেস্থলে  
 হইবে প্রকাশ ।  
 বকুলে চম্পকে তা'রা গাঁথা হ'য়ে নিত্য যাবে চলি'  
 যুগে যুগান্তরে,  
 বসন্তে বসন্তে তা'রা কুঞ্জে কুঞ্জে উঠিবে আকুলি'  
 কুহকলস্বরে ।

কল্পনা

অমর বেদনা মোর, হে বসন্ত, রহি' গেল তব  
মর্ম্মর নিশ্বাসে ।  
উত্তপ্ত যৌবনমোহ রক্তরৌদ্রে রহিল রঞ্জিত  
চৈত্রসন্ধ্যাকাশে ।

---

## ভগ্ন মন্দির

ভাঙা দেউলের দেবতা,  
তব বন্দনা রচিতে, ছিন্না  
বীণার তন্ত্রী বিরতা ।  
সন্ধ্যা-গগনে ঘোষে না শঙ্খ  
তোমার আরতিবারতা ।  
তব মন্দির স্থির গম্ভীর,  
ভাঙা দেউলের দেবতা ।

তব জনহীন ভবনে  
থেকে থেকে আসে ব্যাকুল গন্ধ  
নব-বসন্ত-পবনে ।  
যে ফুলে রচেনি পূজার অর্ঘ্য,  
রাখেনি ও রাঙা চরণে,  
সে ফুলফোটার আসে সমাচার  
জনহীন ভাঙা ভবনে ।

পূজাহীন তব পূজারী  
কোথা সারাদিন ফিরে উদাসীন  
কার প্রসাদের ভিখারী ।



গোধূলিবেলায় বনের ছায়ায়  
চির-উপবাস-ভুখারী  
ভাঙা মন্দিরে আসে ফিরে ফিরে  
পূজাহীন তব পূজারী ।

ভাঙা দেউলের দেবতা,  
কত উৎসব হইল নীরব  
কত পূজানিশা বিগত ।  
কত বিজয়ায় নবীন প্রতিমা  
কত যায় কত কব তা',  
শুধু চিরদিন থাকে সেবাহীন  
ভাঙা দেউলের দেবতা ।

---

## বৈশাখ

হে ভৈরব, হে রুদ্র বৈশাখ !  
ধূলায় ধূসর রুক্ষ উড্ডীন পিঙ্গল জটাজাল,  
তপঃক্লিষ্ট তপ্ত তনু, মুখে তুলি' পিনাক করাল  
কারে দাও ডাক,  
হে ভৈরব, হে রুদ্র বৈশাখ !

ছায়ামূর্তি যত অনুচর  
দক্ষতাম্র দিগন্তের কোন্ ছিদ্র হ'তে ছুটে আসে ।  
কি ভীষ্ম অদৃশ্য নৃত্যে মাতি' উঠে মধ্যাহ্ন আকাশে  
নিঃশব্দ প্রথর  
ছায়ামূর্তি তব অনুচর ।

মত্তশ্রমে শ্বসিছে হতাশ ।  
রহি রহি দহি দহি উগ্রবেগে উঠিছে ঘুরিয়া,  
আবর্তিয়া তৃণপর্ণ, ঘূর্ণ্যচ্ছন্দে শূন্যে আলোড়িয়া,  
চূর্ণ-রেণুরাশ  
মত্তশ্রমে শ্বসিছে হতাশ ।

দীপ্তচক্ষু হে শীর্ণ সন্ন্যাসী,  
পদ্মাসনে বস' আসি' রক্তনেত্র তুলিয়া ললাটে,  
শুষ্কজল নদীতীরে শশিশূন্য তৃষাদীর্ণ মাঠে  
উদাসী প্রবাসী,  
দীপ্তচক্ষু হে শীর্ণ সন্ন্যাসী ।

জ্বলিতেছে সম্মুখে তোমার  
লোলূপ চিতাগ্নিশিখা, লেহি লেহি বিরাট অম্বর  
নিখিলের পরিত্যক্ত মৃতস্তূপ বিগত বৎসর  
করি' ভস্মসার  
চিতা জ্বলে সম্মুখে তোমার ।

হে বৈরাগী কর শান্তিপাঠ ।  
উদার উদাস কণ্ঠ যাক্ ছুটে দক্ষিণে ও বামে,  
যাক্ নদী পার হ'য়ে, যাক্ চলি' গ্রাম হ'তে গ্রামে,  
পূর্ণ করি' মাঠ ।  
হে বৈরাগী কর শান্তিপাঠ ।

সকরুণ তব মন্ত্রসাথে  
মৰ্ম্মভেদী যত দুঃখ বিস্তারিয়া যাক্ বিশ্বপরে,  
ক্লান্ত কপোতের কণ্ঠে ক্ষীণ জাহ্নবীর শ্রান্ত স্বরে,  
অশ্বখ ছায়াতে  
সকরুণ তব মন্ত্রসাথে ।

সুখ দুঃখ আশা ও নৈরাশ  
 তোমার ফুৎকার-ক্ষুর ধূলাসম উড়ুক্ গগনে,  
 ভরে' দিক নিকুঞ্জের স্থলিত ফুলের গন্ধসনে  
 আকুল আকাশ ।  
 সুখ দুঃখ আশা ও নৈরাশ ।

তোমার গেরুয়া বস্ত্রাঞ্চল  
 দাও পাতি' নভস্তলে,—বিশাল বৈরাগ্যে আবরিয়া  
 জরা মৃত্যু ক্ষুধা তৃষ্ণা, লক্ষকোটি নরনারী-হিয়া  
 চিন্তায় বিকল ।  
 দাও পাতি' গেরুয়া অঞ্চল ।

ছাড় ডাক, হে রুদ্র বৈশাখ !  
 ভাঙিয়া মধ্যাহ্নতন্দ্রা জাগি' উঠি বাহিরিব দ্বারে,  
 চেয়ে র'ব প্রাণিশূন্য দন্ধতৃণ দিগন্তের পারে  
 নিস্তব্ধ নির্বাক্ ।  
 হে ভৈরব, হে রুদ্র বৈশাখ !

১৩০৬ ।

## রাত্রি

মোরে কর সভাকবি ধ্যানমৌন তোমার সভায়  
হে শর্ব্বরী, হে অবগুষ্ঠিতা ।  
তোমার আকাশ জুড়ি' যুগে যুগে জপিছে যাহারা  
বিরচিব তাহাদের গীতা ।  
তোমার তিমিরতলে যে বিপুল নিঃশব্দ উছোগ  
ভ্রমিতেছে জগতে জগতে  
আমারে তুলিয়া লও সেই তা'র ধ্বজচক্রহীন  
নীরবঘর্ঘর মহারথে ।  
তুমি একেশ্বরী রাণী বিশ্বের অন্তর অন্তঃপুরে  
সুগম্ভীরা হে শ্যামাসুন্দরী !  
দিবসের ক্ষয়ক্ষীণ বিরাট ভাঙারে প্রবেশিয়া  
নীরবে রাখিছ ভাঙু ভরি' ।  
নক্ষত্র-রতন-দীপ্ত নীলকান্ত সুপ্তি-সিংহাসনে  
তোমার মহান্ জাগরণ ।  
আমারে জাগায়ে রাখ সে নিস্তরু জাগরণতলে  
নির্ণিমেষ পূর্ণ সচেতন ।  
কত নিদ্রাহীন চক্ষু যুগে যুগে তোমার আঁধারে  
খুঁজেছিল প্রশ্নের উত্তর ।  
তোমার নির্বাক্ মুখে একদৃষ্টে চেয়েছিল বসি'  
কত ভক্ত জুড়ি দুই কর ।

দিবস মুদিলে চক্ষু, ধীরপদে কোঁতুহলী দল

অঙ্গনে পশিয়া সাবধানে

তব দীপহীন কক্ষে সুখ দুঃখ জন্মমরণের

ফিরিয়াছে গোপন সন্ধানে ।

স্তম্ভিত তমিস্রপুঞ্জ কম্পিত করিয়া অকস্মাৎ

অন্ধরাত্রে উঠেছে উচ্ছ্বাসি’

সদৃশ্ফুট ব্রহ্মমন্ত্র আনন্দিত ঋষিকণ্ঠ হ’তে

আন্দোলিয়া ঘন তন্দ্রাশি ।

পীড়িত ভুবন লাগি মহাযোগী করুণা-কাতর,

চকিতে বিদ্যুৎ-রেখাবৎ

তোমার নিখিল-লুপ্ত অন্ধকারে দাঁড়ায়ে একাকী

দেখেছে বিশ্বের মুক্তিপথ ।

জগতের সেই সব যামিনীর জাগরুকদল

সঙ্গীহীন তব সভাসদ

কে কোথা বসিয়া আছে আজি রাত্রে ধরণীর মাঝে

গণিতেছে গোপন সম্পদ ;

কেহ করে নাহি জানে, আপনার স্বতন্ত্র আসনে

আসীন স্বাধীন স্তব্ধচ্ছবি ;

হে শর্ব্বরী সেই তব বাক্যহীন জাগ্রত সভায়

মোরে করি’ দাও সভাকবি ।

## অনবচ্ছিন্ন আমি

আজি মগ্ন হয়েছিঁনু ব্রহ্মাণ্ড মাঝারে,  
যখন মেলিনু অঁখি, হেরিনু আমারে ।  
ধরণীর বস্ত্রাঞ্চল দেখিলাম তুলি',  
আমার নাড়ীর কম্পে কম্পমান ধূলি ।  
অনন্ত আকাশতলে দেখিলাম নামি',  
আলোক-দোলায় বসি' ছুলিতেছি আমি  
আজি গিয়েছিঁনু চলি' মৃত্যুপরপারে  
সেথা বৃদ্ধ পুরাতন হেরিনু আমারে ।  
অবিচ্ছিন্ন আপনারে নিরখি ভুবনে  
শিহরি উঠিনু কাঁপি' আপনার মনে ।  
জলে স্থলে শূন্যে আমি যতদূরে চাই  
আপনারে হারাবার নাহি কোনো ঠাঁই ।  
জলস্থল দূর করি' ব্রহ্ম অন্তর্যামী,  
হেরিলাম তাঁর মাঝে স্পন্দমান আমি ।

১৩০৬ ।

# জন্মদিনের গান

## বেহাগ—চৌতাল

ভয় হ'তে তব অভয়-মাঝারে

নূতন জন্ম দাও হে ।

দীনতা হইতে অক্ষয় ধনে,

সংশয় হ'তে সত্য-সদনে,

জড়তা হইতে নবীন জীবনে

নূতন জন্ম দাও হে ।

আমার ইচ্ছা হইতে, হে প্রভু,

তোমার ইচ্ছা মাঝে,

আমার স্বার্থ হইতে, হে প্রভু,

তব মঙ্গল কাজে,

অনেক হইতে একের ডোরে,

সুখদুখ হ'তে শান্তি-ক্রেড়ে,

আমা হ'তে নাথ তোমাতে মোরে

নূতন জন্ম দাও হে ।

---



# পূর্ণকাম

## কীৰ্তনের স্তর

সংসারে মন দিয়েছিলু, তুমি  
আপনি সে মন নিয়েছ ।  
সুখ বলে' দুখ চেয়েছিলু, তুমি  
দুখ বলে' সুখ দিয়েছ ।  
হৃদয় যাহার শতখানে ছিল  
শত স্বার্থের সাধনে,  
তাহারে কেমনে কুড়ায়ে আনিলে,  
বাঁধিলে ভক্তিবান্ধনে ।  
সুখ সুখ করে' দ্বারে দ্বারে মোরে  
কতদিকে কত খোঁজালে ।  
তুমি যে আমার কত আপনার  
এবার সে কথা বোঝালে ।  
করণা তোমার কোন্ পথ দিয়ে  
কোথা নিয়ে যায় কাহারে ।  
সহসা দেখিনু নয়ন মেলিয়ে  
এনেছ তোমারি দুয়ারে ।

# পরিণাম

## ভৈরবী—ঝাঁপতাল

জানি হে যবে প্রভাত হবে, তোমার কৃপা-তরঙ্গী  
লইবে মোরে ভব-সাগর-কিনারে ।  
করি না ভয়, তোমারি জয় গাহিয়া যাব চলিয়া,  
দাঁড়াব আমি তব অমৃত-দুয়ারে ।  
জানি হে তুমি যুগে যুগে তোমার বাহু ঘেরিয়া  
রেখেছ মোরে তব অসীম ডুবনে ;  
জনম মোর দিয়েছ তুমি আলোক হ'তে আলোকে,  
জীবন হ'তে নিয়েছ নবজীবনে ।  
জানি হে নাথ পুণ্যপাপে হৃদয় মোর সতত  
শয়ান আছে তব নয়ন-সমুখে ;  
আমার হাতে তোমার হাত রয়েছে দিন রজনী  
সকল পথে বিপথে স্মৃথে অস্মৃথে ।  
জানি হে জানি জীবন মম বিফল কভু হবে না,  
দিবে না ফেলি' বিনাশ-ভয়-পাথারে ।  
এমন দিন আসিবে যবে করুণাভরে আপনি  
ফুলের মত তুলিয়া লবে তাহারে ।

১৩০৬



ଶ୍ରୀମଦ୍ଭଗବତ୍



# ঋণিকা



## উদ্বোধন

শুধু অকারণ পুলকে  
ঋণিকের গান গা'রে আজি প্রাণ  
ঋণিক দিনের আলোকে !  
যারা আসে যায়, হাসে আর চায়,  
পশ্চাতে যারা ফিরে না তাকায়,  
নেচে ছুটে ধায়, কথা না শুধায়,  
ফুটে আর টুটে পলকে,  
তাহাদেরি গান গা'রে আজি প্রাণ,  
ঋণিক দিনের আলোকে !

প্রতি নিমেষের কাহিনী  
আজি বসে' বসে' গাঁথিস্নে আর,  
বাঁধিস্নে স্মৃতি-বাহিনী ।

## ক্ষণিকা

যা আসে আশ্রুক্, যা হবার হোক্,  
যাহা চলে' যায় মুছে যাক্ শোক্,  
গেয়ে ধেয়ে যাক্ দ্যুলোক ভুলোক  
প্রতি পলকের রাগিনী ।

নিমেষে নিমেষ হ'য়ে যাক্ শেষ  
বহি' নিমেষের কাহিনী ।

ফুরায় যা' দেরে ফুরাতে !  
ছিন্ন মালার ভ্রষ্ট কুসুম  
ফিরে' যাস্নেক কুড়াতে !  
বুঝি নাই যাহা, চাই না বুঝিতে,  
জুটিল না যাহা চাই না খুঁজিতে,  
পূরিল না যাহা কে র'বে বুঝিতে  
তারি গহ্বর পূরাতে !  
যখন যা পাস্ মিটায়ে নে আশ  
ফুরাইলে দিস্ ফুরাতে !

ওরে থাক্, থাক্ কাঁদনি !  
দুই হাত দিয়ে ছিঁড়ে' ফেলে' দেরে  
নিজ হাতে বাঁধা বাঁধনি !  
যে সহজ তোর রয়েছে সমুখে  
আদরে তাদের ডেকে নে রে বুকে,

আজিকার মত যাক্ যাক্ চুকে

যত অসাধ্য-সাধনি !

ক্ষণিক সুখের উৎসব আজি,

ওরে থাক্, থাক্ কঁাদনি !

শুধু অকারণ পুলকে

নদীজলে-পড়া আলোর মতন

ছুটে যা বলকে বলকে !

ধরণীর পরে শিথিল-বঁধন

বলমল প্রাণ করিস্ যাপন,

ছুঁয়ে থেকে ছুলে শিশির যেমন

শিরীষ ফুলের অলকে !

মর্ম্মর তানে ভরে' ওঠ্ গানে

শুধু অকারণ পুলকে !



## যথাসময়

ভাগ্য যবে কৃপণ হ'য়ে আসে  
বিশ্ব যবে নিঃস্ব তিলে তিলে,  
মিষ্ট মুখে ভুবন-ভরা হাসি  
ওষ্ঠে শেষে ওজনদরে মিলে,  
বন্ধুজনে বন্ধ করে প্রাণ,  
দীর্ঘ দিন সঙ্গীহীন একা,  
হঠাৎ পড়ে ঋণ-শোধেরি পালা,  
ঋণী জনের না পাওয়া যায় দেখা,  
তখন ঘরে বন্ধ হ'রে কবি,  
খিলের পরে খিল, লাগাও খিল !  
কথার সাথে গাঁথ কথার মালা,  
মিলের সাথে মিল, মিলাও মিল !

কপাল যদি আবার ফিরে যায়,  
প্রভাতকালে হঠাৎ জাগরণে,  
শূন্য নদী আবার যদি ভরে  
শরৎমেঘে ত্বরিত বরিষণে,

বন্ধু ফিরে বন্দী করে বুকে,  
সন্ধি করে অন্ধ অরিদল,  
অরুণ ঠোঁটে তরুণ ফোটে হাসি,  
কাজল চোখে করুণ আঁখিজল,  
তখন খাতা পোড়াও স্ক্যাপা কবি,  
দিলের সাথে দিল, লাগাও দিল !  
বাহুর সাথে বাঁধ মৃণাল বাহু,  
চোখের সাথে চোখে মিলাও মি ল !

---

## মাতাল

ওরে মাতাল, দুয়ার ভেঙে দিয়ে  
পথেই যদি করিস্ মাতামাতি,  
থলি ঝুলি উজাড় করে' ফেলে'  
যা আছে তোর ফুরাস রাতারাতি,  
অশ্লেষাতে যাত্রা করে' সুরু  
পাঁজিপুঁথি করিস্ পরিহাস,  
অকারণে অকাজ ল'য়ে ঘাড়ে  
অসময়ে অপথ দিয়ে যাস্,  
হালের দড়ি নিজের হাতে কেটে  
পালের পরে লাগাস্ ঝোড়ো হাওয়া,  
আমিও ভাই তোদের ব্রত লব—  
মাতাল হ'য়ে পাতালপানে ধাওয়া!

পাড়ার যত জ্ঞানীগুণীর সাথে  
নষ্ট হ'ল দিনের পরে দিন,  
অনেক শিখে' পক্ব হ'ল মাথা,  
অনেক দেখে' দৃষ্টি হ'ল ক্ষীণ,

## মাতাল

কত কালের কত মন্দ ভালো  
বসে' বসে' কেবল জমা করি,  
ফেলা-ছড়া ভাঙা-ছেঁড়ার বোঝা  
বুকের মাঝে উঠছে ভরি'-ভরি',  
গুঁড়িয়ে সে সব উড়িয়ে ফেলে দিক্  
দিক্-বিদিকে তোদের ঝোড়ো হাওয়া !  
বুকেছি ভাই স্মৃতির মধ্যে স্মৃতি  
মাতাল হ'য়ে পাতালপানে ধাওয়া

হোক্রে সিধা কুটিল দ্বিধা যত,  
নেশায় মোরে করুক দিশাহারা,  
দানোয় এসে হঠাৎ কেশে ধরে'  
এক দমকে করুক লক্ষ্মীছাড়া !  
সংসারেতে সংসারী ত ঢের,  
কাজের হাটে অনেক আছে কেজো,  
মেলাই আছে মস্ত বড় লোক,  
সঙ্গে তাঁদের অনেক সেজো মেজো,  
থাকুন্ তাঁরা ভবের কাজে লেগে ;—  
লাগুক মোরে সৃষ্টিছাড়া হাওয়া !  
বুকেছি ভাই কাজের মধ্যে কাজ  
মাতাল হ'য়ে পাতালপানে ধাওয়া !

শপথ করে' দিলেম ছেড়ে আজই  
যা আছে মোর বুদ্ধি বিবেচনা,  
বিছা যত ফেলবো ঝেড়ে ঝুড়ে  
ছেড়ে ছুড়ে তত্ত্ব আলোচনা !  
স্মৃতির ঝারি উপুড় করে' ফেলে'  
নয়নবারি শূন্য করি' দিব,  
উচ্ছ্বসিত মদের ফেনা দিয়ে  
অটু হাসি শোধন করি' নিব !  
ভদ্রলোকের তক্কা-তাবিজ ছিঁড়ে'  
উড়িয়ে দেবে মদোন্মত্ত হাওয়া !  
শপথ করে' বিপথ-ব্রত নেব—  
মাতাল হ'য়ে পাতালপানে ধাওয়া !

---

## যুগল

ঠাকুর, তব পায়ে নমোনমঃ,  
পাপিষ্ঠ এই অক্ষমেরে ক্ষম,  
আজ বসন্তে বিনয় রাখ মম,  
বন্ধ কর শ্রীমদ্ভাগবত ।  
শাস্ত্র যদি নেহাৎ পড়তে হবে  
গীতগোবিন্দ খোলা হোক না তবে,  
শপথ মম, বোলো না এই ভবে  
জীবনখানা শুধুই স্বপ্নবৎ !  
একটা দিনের সন্ধি করিয়াছি,  
বন্ধ আছে যমরাজের সমর,  
আজকে শুধু এক বেলারই তরে  
আমরা দৌঁহে অমর, দৌঁহে অমর ।

স্বয়ং যদি আসেন আজি দ্বারে  
মান্বনাক রাজার দারোগারে,—  
কেল্লা হ'তে ফৌজ সারে সারে  
দাঁড়ায় যদি, ওঁচায় ছোরা-ছুরি,  
বলব, রে ভাই, বেজার কোরোনাক,  
গোল হতেছে, একটু থেমে থাক,

## কণিকা

কুপাণ-খোলা শিশুর খেলা রাখ  
ক্ষ্যাপার মত কামান-ছোঁড়াছুঁড়ি !  
একটুখানি সরে' গিয়ে কর  
সঙের মত সঙীন্ বমবমর,  
আজকে শুধু এক বেলারই তরে  
আমরা দৌঁহে অমর দৌঁহে অমর !

বন্ধুজনে যদি পুণ্যফলে  
করেন দয়া, আসেন দলে দলে,  
গলায় বস্ত্র ক'ব নয়নজলে,—  
ভাগ্য নামে অতিবর্ষা সম !  
একদিনেতে অধিক মেশামেশি  
শ্রান্তি বড়ই আনে শেষাশেষি,  
জানত ভাই দুটি প্রাণীর বেশি  
এ কুলায়ে কুলায়নাক মম !  
ফাল্গুন মাসে ঘরের টানাটানি,  
অনেক চাঁপা, অনেকগুলি ভ্রমর,  
ক্ষুদ্র আমার এই অমরাবতী  
আমরা দুটি অমর দুটি অমর !

## শাস্ত্র

পঞ্চাশোর্ধ্বে বনে যাবে  
এমন কথা শাস্ত্রে বলে,  
আমরা বলি বানপ্রস্থ  
যৌবনেতেই ভালো চলে ।  
বনে এত বকুল ফোটে,  
গেয়ে মরে কোকিলপাখী,  
লতাপাতার অন্তরালে  
বড় সরস ঢাকাঢাকি !  
চাঁপার শাখে চাঁদের আলো,  
সে স্থিতি কি কেবল মিছে ?  
এ সব যারা বোঝে তা'রা  
পঞ্চাশতের অনেক নীচে !

পঞ্চাশোর্ধ্বে বনে যাবে,  
এমন কথা শাস্ত্রে বলে,  
আমরা বলি বানপ্রস্থ  
যৌবনেতেই ভালো চলে ।



২

ঘরের মধ্যে বকাবকি,  
নানান্ মুখে নানা কথা,  
হাজার লোকে নজর পাড়ে,  
একটুকু নাই বিরলতা ;  
সময় অল্প, ফুরায় তাও  
অরসিকের আনাগোনায়ে,  
ঘণ্টা ধরে' থাকেন তিনি  
সৎপ্রসঙ্গ আলোচনায় ;  
হতভাগ্য নবীন যুবা  
কাজেই থাকে বনের খোঁজে,  
ঘরের মধ্যে মুক্তি যে নেই  
একথা সে বিশেষ বোঝে ।

পঞ্চাশোর্ধ্বে বনে যাবে  
এমন কথা শাস্ত্রে বলে,  
আমরা বলি বানপ্রস্থ  
যৌবনেতেই ভালো চলে !

৩

আমরা সবাই নব্যকালের  
সভ্য যুবা অনাচারী,

মনুর শাস্ত্র শুধরে দিয়ে  
 নতুন বিধি কর'ব জারি—  
 বুড়ো থাকুন ঘরের কোণে,  
 পয়সা কড়ি করুন জমা,  
 দেখুন বসে' বিষয় পত্র,  
 চালান্ মামলা মকদ্দমা ;  
 ফাগুন মাসে লগ্ন দেখে'  
 যুবারা যাক্ বনের পথে,  
 রাত্রি জেগে সাধ্য সাধন,  
 থাকুক রত কঠিন ত্রিতে !

পঞ্চাশোর্ধ্বে বনে যাবে  
 এমন কথা শাস্ত্রে বলে,  
 আমরা বলি বানপ্রস্থ  
 যৌবনেতেই ভালো চলে !

## অনবসর

ছেড়ে গেলে হে চঞ্চলা,  
হে পুরাতন সহচরী !  
ইচ্ছা বটে বছর কতক  
তোমার জন্ত বিলাপ করি,—  
সোনার স্মৃতি গড়িয়ে তোমার  
বসিয়ে রাখি চিন্ততলে,  
একলা ঘরে সাজাই তোমায়  
মাল্য গেঁথে অশ্রুজলে,

নিদেন কাঁদি মাসেক-খানেক  
তোমায় চির-আপন জেনেই,—  
হায়রে আমার হতভাগ্য !  
সময় যে নেই,—সময় যে নেই !

বর্ষে বর্ষে বয়স কাটে,  
বসন্ত যায় কথায় কথায়,  
বকুলগুলো দেখতে দেখতে  
ঝরে পড়ে যথায় তথায়,

মাসের মধ্যে বারেক এসে  
 অস্ত্রে পালায় পূর্ণ ইন্দু,  
 শাস্ত্রে শাসায় জীবন শুধু  
 পদ্মপত্রে শিশির-বিন্দু,—

তাদের পানে তাকাব না  
 তোমায় শুধু আপন জেনেই  
 সেটা বড়ই বর্বরতা,—  
 সময় যে নেই,—সময় যে নেই !

এস আমার শ্রাবণ-নিশি,  
 এস আমার শরৎ-লক্ষ্মী,  
 এস আমার বসন্ত-দিন  
 ল'য়ে তোমার পুষ্পপঙ্কী,  
 তুমি এস, তুমিও এস,  
 তুমি এস—এবং তুমি,  
 প্রিয়ে, তোমরা সবাই জান  
 ধরণীর নাম মর্ত্যভূমি !

যে যায় চলে' বিরাগভরে  
 তা'রেই শুধু আপন জেনেই  
 বিলাপ করে' কাটাই, এমন  
 সময় যে নেই—সময় যে নেই !

ইচ্ছে করে বসে' বসে'  
পড়ে লিখি গৃহকোণায়—  
তুমিই আছ জগৎ জুড়ে—  
সেটা কিন্তু মিথ্যে শোনায়ে !  
ইচ্ছে করে কোনো মতেই  
সান্ত্বনা আর মান্বনারে,  
এমন সময় নতুন আঁখি  
তাকায় আমার গৃহদ্বারে,—

চক্ষু মুছে দুয়ার খুলি,  
তা'রেই শুধু আপন জেনেই,—  
কখন তবে বিলাপ করি ?  
সময় যে নেই,—সময় যে নেই

---

## অতিবাদ

আজ বসন্তে বিশ্বখাতায়  
হিসেব নেইক পুষ্পে পাতায়,  
জগৎ যেন কোঁকের মাথায়  
সকল কথাই বাড়িয়ে বলে,  
ভুলিয়ে দিয়ে সত্য মিথ্যে,  
যুলিয়ে দিয়ে নিত্যানিত্যে,  
দুধারে সব উদার চিন্তে  
বিধিবিধান ছাড়িয়ে চলে ।

আমারো দ্বার মুক্ত পেয়ে  
সাধুবুদ্ধি বহির্গতা,  
আজকে আমি কোনো মতেই  
বল্বনাক সত্য কথা !

প্রিয়ার পুণ্যে হলেম রে আজ  
একটা রাতের রাজ্যাধিরাজ,  
ভাণ্ডারে আজ করছে বিরাজ  
সকল প্রকার অজস্রহ !

## ক্ষণিকা

কেন রাখব কথার ওজন ?  
কৃপণতায় কোন্ প্রয়োজন ?  
ছুটুক বাণী যোজন যোজন  
উড়িয়ে দিয়ে যত্ন গত !

চিন্তাছয়ার মুক্ত করে’  
সাধুবুদ্ধি বহির্গতা,  
আজকে আমি কোনো মতেই  
বল্বনাক সত্য কথা !

হে প্রেয়সী স্বর্গদূতী,  
আমার যত কাব্য পুঁথি  
তোমার পায়ে পড়ে স্তুতি  
তোমারি নাম বেড়ায় রটি ;  
থাক হৃদয়-পদ্মটিতে  
এক দেবতা আমার চিতে !—  
চাইনে তোমায় খবর দিতে  
আরো আছেন তিরিশ কোটি

চিন্তাছয়ার মুক্ত করে’  
সাধুবুদ্ধি বহির্গতা,  
আজকে আমি কোনো মতেই  
বল্বনাক সত্য কথা !

ত্রিভুবনে সবার বাড়ি,  
 একলা তুমি সুধার ধারা,  
 উষার ভালে একটি তারা,  
 এ জীবনে একটি আলো !—  
 সন্ধ্যাতারা ছিলেন কে কে  
 সে সব কথা যাব ঢেকে,  
 সময় বুঝে মানুষ দেখে,  
 তুচ্ছ কথা ভোলাই ভোলো !

চিত্তছয়ার মুক্ত রেখে  
 সাধুবুদ্ধি বহির্গতা,  
 আজকে আমি কোনো মতেই  
 বলবনাক সত্য কথা !

সত্য থাকুন ধরিত্রীতে  
 শুদ্ধ রক্ত ঋষির চিতে,  
 জ্যামিতি আর বীজগণিতে,  
 কারো ইথে আপত্তি নেই,  
 কিন্তু আমার প্রিয়র কানে,  
 এবং আমার কবির গানে,  
 পঞ্চশরের পুষ্পবাণে  
 মিথ্যে থাকুন রাত্রিদিনেই !



চিন্তাভ্রমার মুক্ত রেখে  
সাধুবুদ্ধি বহির্গতা,  
আজকে আমি কোনো মতেই  
বল্বনাক সত্য কথা ।

ওগো সত্য বেঁটেখাটো,  
বীণার তন্ত্রী যতই ছাঁটো,  
কণ্ঠ আমার যতই আঁটো,  
বল্বো তবু উচ্চস্বরে—  
আমার প্রিয়ার মুগ্ধ দৃষ্টি  
করচে ভুবন নূতন সৃষ্টি  
মুচ্চকি হাসির স্রধার বৃষ্টি  
চল্চে আজি জগৎ জুড়ে

চিন্তাভ্রমায় মুক্ত রেখে  
সাধুবুদ্ধি বহির্গতা,  
আজকে আমি কোনো মতেই  
বল্বনাক সত্য কথা !

যদি বল আর বছরে  
এই কথাটাই এমনি করে’  
বলেছিলি, কিন্তু ওরে  
শুনেছিলেন আরেকজনে—

জেনো তবে মুঢ়মত্ত,  
আর বসন্তে সেটাই সত্য,  
এবারো সেই প্রাচীন তত্ত্ব  
ফুটল নূতন চোখের কোণে ।

চিত্তদুয়ার মুক্ত রেখে  
সাধুবুদ্ধি বহির্গতা,  
আজকে আমি কোনো মতেই  
বল্‌বনাক সত্য কথা !

আজ বসন্তে বকুল ফুলে  
যে গান বায়ু বেড়ায় বুলে,  
কাল সকালে যাবে ভুলে,  
কোথায় বাতাস, কোথায় সে ফুল !  
হে সুন্দরী তেমনি কবে  
এ সব কথা ভুল্‌ব যবে  
মনে রেখো আমায় তবে,—  
ক্ষমা কোরো আমার সে ভুল !

চিত্তদুয়ার মুক্ত রেখে  
সাধুবুদ্ধি বহির্গতা,  
আজকে আমি কোনো মতেই  
বল্‌বনাক সত্য কথা !

## যথাস্থান

কোন্ হাটে তুই বিকোতে চাস্

ওরে আমার গান,

কোন্‌খানে তোর স্থান ?

পণ্ডিতেরা থাকেন যেথায়

বিদ্বেরত্ন পাড়ায়—

নশ্ত উড়ে আকাশ জুড়ে

কাহার সাধ্য দাঁড়ায়,—

চল্‌চে সেথায় সূক্ষ্ম তর্ক

সদাই দিবারাত্র—

পাত্রাধার কি তৈল, কিস্বা

তৈলাধার কি পাত্র,

পুঁথিপত্র মেলাই আছে

মোহধ্বাস্ত-নাশন

তারি মধ্যে একটি প্রান্তে

পেতে চাস্ কি আসন ?

গান তা' শুনি গুঞ্জরিয়া

গুঞ্জরিয়া কহে—

নহে, নহে, নহে !

কোন্ হাটে তুই বিকোতে চাস্  
 ওরে আমার গান,  
 কোন্ দিকে তোর টান ?  
 পাষাণ-গাঁথা প্রাসাদপরে  
 আছেন ভাগ্যমন্ত্ৰ,  
 মেহাগিনীর মঞ্চ জুড়ি’  
 পঞ্চহাজার গ্রন্থ ;  
 সোনার জলে দাগ পড়ে না,  
 খোলে না কেউ পাতা ;  
 অস্বাদিত মধু যেমন  
 যুথী অনাস্বাতা ।  
 ভূত্য নিত্য ধূলা ঝাড়ে  
 যত্ন পূরা মাত্রা,  
 ওরে আমার ছন্দোময়ী  
 সেথায় করবি যাত্রা ?  
 গান তা’ শুনি কর্ণমূলে  
 মর্ম্মরিয়া কহে—  
 নহে, নহে, নহে ।

কোন্ হাটে তুই বিকোতে চাস্  
 ওরে আমার গান,  
 কোথায় পাবি মান ?

## ক্ষণিকা

নবীন ছাত্র বুকে আছে  
একজামিনের পড়ায়,  
মন্টা কিন্তু কোথা থেকে  
কোন্ দিকে যে গড়ায় !  
অপাঠ্য সব পাঠ্য কেতাব  
সামনে আছে খোলা,  
কর্তৃজনের ভয়ে কাব্য  
কুলুঙ্গিতে তোলা ;—  
সেইখানেতে ছেঁড়া-ছড়া  
এলোমেলোর মেলা,  
তারি মধ্যে ওরে চপল,  
করবি কি তুই খেলা ?  
গান তা' শুনে মৌন মুখে  
রহে দ্বিধার ভরে,—  
যাব-যাব করে !

কোন্ হাটে তুই বিকোতে চাস্  
ওরে আমার গান,  
কোথায় পাবি ত্রাণ ?  
ভাণ্ডারেতে লক্ষ্মী বধু  
যেথায় আছে কাজে,

ঘরে ধায় সে, ছুটি পায় সে  
 যখন মাঝে মাঝে ।  
 বালিশতলে বইটি চাপা  
 টানিয়া লয় তা'রে,—  
 পাতাগুলিন্ ছেঁড়া-খোঁড়া  
 শিশুর অত্যাচারে,—  
 কাজল-আঁকা সিঁদুর মাখা  
 চুলের গন্ধে ভরা  
 শয্যাপ্রান্তে ছিন্ন বেশে  
 চাস্ কি যেতে স্বরা ?  
 বুকের পরে নিশ্বসিয়া  
 স্তব্ধ রহে গান—  
 লোভে কম্পমান !

কোন্ হাটে তুই বিকোতে চাস্  
 ওরে আমার গান,  
 কোথায় পাবি প্রাণ ?

যেথায় স্তূথে তরুণ যুগল  
 পাগল হ'য়ে বেড়ায়  
 আড়াল বুকে' আঁধার খুঁজে'  
 সবার আঁখি এড়ায়,

পাখী তাদের শোনায়ে গীতি,  
নদী শোনায়ে গাথা,  
কত রকম ছন্দ শোনায়ে  
পুষ্প লতা পাতা,  
সেইখানেতে সরল হাসি  
সজল চোখের কাছে  
বিশ্ববাঁশির ধ্বনির মাঝে  
যেতে কি সাধ আছে ?

হঠাৎ উঠে উচ্ছ্বসিয়া  
কহে আমার গান—  
সেইখানে মোর স্থান !

---

## বোঝাপড়া

মনেরে আজ কহ, যে,  
ভালো মন্দ যাহাই আশুক  
সত্যেরে লও সহজে ।

কেউ বা তোমায় ভালবাসে  
কেউ বা বাস্তুতে পারে না যে,  
কেউ বিকিয়ে আছে, কেউ বা  
সিকি পয়সা ধারে না যে ।  
কতকটা সে স্বভাব তাদের,  
কতকটা বা তোমারো ভাই,  
কতকটা এ ভবের গতিক,—  
সবার তরে নহে সবাই ।  
তোমায় কতক ফাঁকি দেবে,  
তুমিও কতক দেবে ফাঁকি,  
তোমার ভোগে কতক পড়বে,  
পরের ভোগে থাকবে বাকি ।



মাস্কাতারি আমল থেকে  
চলে' আস্ছে এম্নি রকম  
তোমারি কি এমন ভাগ্য  
বাঁচিয়ে যাবে সকল জখম ।

মনেরে আজ কহ, যে,  
ভালো মন্দ যাহাই আসুক  
সত্যেরে লও সহজে ।

অনেক ঝঞ্ঝা কাটিয়ে বুঝি  
এলে স্থখের বন্দরেতে,  
জলের তলে পাহাড় ছিল  
লাগল বুকের অন্দরেতে,  
মুহূর্ত্তেকে পাঁজর গুলো  
উঠল কেঁপে আর্ত্তরবে,—  
তাই নিয়ে কি সবার সঙ্গে  
ঝগড়া করে' মর্ন্তে হবে ?  
ভেসে থাকতে পার যদি  
সেইটে সবার চেয়ে শ্রেয়,  
না পার ত বিনাবাক্যে  
টুপ করিয়া ডুবে যেয়ো ।

এটা কিছু অপূর্ব নয়,  
 ঘটনা সামান্য খুবি,—  
 শঙ্কা যেথায় করে না কেউ  
 সেইখানে হয় জাহাজ-ডুবি

মনেরে তাই কহ, যে,  
 ভালো মন্দ যাহাই আসুক  
 সত্যেরে ল'ও সহজে ।

তোমার মাপে হয়নি সবাই,  
 তুমি হওনি সবার মাপে,  
 তুমি মর কারো ঠেলায়,  
 কেউ বা মরে তোমার চাপে ;—  
 তবু ভেবে দেখতে গেলে  
 এমনি কিসের টানাটানি ?  
 তেমন করে' হাত বাড়ালে  
 স্তম্ভ পাওয়া যায় অনেকখানি ।  
 আকাশ তবু স্নানীল থাকে,  
 মধুর ঠেকে ভোরের আলো,  
 মরণ এলে হঠাৎ দেখি  
 মরার চেয়ে বাঁচাই ভালো ।

## ক্ষণিকা

যাহার লাগি চক্ষু বুজে  
বহিয়ে দিলাম অশ্রুমাগর  
তাহারে বাদ দিয়েও দেখি  
বিশ্বভুবন মস্ত ডাগর ।

মনেরে তাই কহ, যে,  
ভালো মন্দ যাহাই আসুক  
সত্যেরে লও সহজে ।

নিজের ছায়া মস্ত করে’  
অস্তাচলে বসে’ বসে’  
আঁধার করে’ তোল যদি  
জীবনখানা নিজের দোষে,  
বিধির সঙ্গে বিবাদ করে’  
নিজের পায়েই কুড়ুল মারো,  
দোহাই তবে এ কার্য্যটা  
যত শীঘ্র পারো সারো ।  
খুব খানিকটে কেঁদে কেটে  
অশ্রু ঢেলে ঘড়া ঘড়া—  
মনের সঙ্গে এক রকমে  
করেনে ভাই বোঝাপড়া ।

তাহার পরে আঁধার ঘরে  
প্রদীপখানি জ্বালিয়ে তোল ।  
ভুলে যা' ভাই কাহার সঙ্গে  
কতটুকু তফাৎ হ'ল ।

মনেরে তাই কহ, যে,  
ভালো মন্দ যাহাই আশুক  
সত্যেরে লও সহজে ।

---

## অচেনা

কেউ যে কারে চিনিলাক  
সেটা মস্ত বাঁচন ।  
তা না হলে নাচিয়ে দিত  
বিষম তুর্কি-নাচন ।  
বুকের মধ্যে মনটা থাকে  
মনের মধ্যে চিন্তা,—  
সেইখানেতেই নিজের ডিমে  
সদাই তিনি দিন্ তা' ।  
বাইরে যা পাই সম্ভজে নেব  
তারি আইন-কানুন্  
অন্তরেতে যা আছে তা'  
অন্তর্যামীই জানুন্ ।

চাইনেরে, মন চাইনে !  
মুখের মধ্যে যেটুকু পাই,  
যে হাসি আর যে কথাটাই,  
যে কলা আর যে ছলনাই  
তাই নেরে, মন, তাই নে !

বাইরে থাকুক মধুর মূর্তি,  
 সুধামুখের হাস্য,  
 তরল চোখে সরল দৃষ্টি  
 করব না তা'র ভাষ্য ।

বাহু যদি তেমন করে'  
 জড়ায় বাহু বন্ধ  
 আমি ছুটি চক্ষু মুদে  
 রৈব হ'য়ে অন্ধ ।

কে'যাবে ভাই মনের মধ্যে  
 মনের কথা ধর্তে ?  
 কীটের খোঁজে কে দেবে হাত  
 কেউটে সাপের গর্তে ?

চাইনেরে, মন চাইনে !  
 মুখের মধ্যে যেটুকু পাই,  
 যে হাসি আর যে কথাটাই,  
 যে কলা আর যে ছলনাই  
 তাই নেরে, মন, তাই নে ।

মন নিয়ে কেউ বাঁচেনাক,  
 মন বলে' যা পায়রে  
 কোনো জন্মে মন সেটা নয়  
 জানে না কেউ হয়রে !

## ক্লগিকা

ওটা কেবল কথার কথা,  
মন কি কেহ চিনিস্ ?  
আছে কারো আপন হাতে  
মন বলে' এক জিনিষ ?  
চলেন তিনি গোপন চালে  
স্বাধীন তাঁহার ইচ্ছে ।  
কেই বা তাঁরে দিচ্ছে, এবং  
কেই বা তাঁরে নিচ্ছে ।

চাইনেরে, মন চাইনে !  
মুখের মধ্যে যেটুকু পাই  
যে হাসি আর যে কথাটাই  
যে কলা আর যে চলনাই  
তাই নেরে, মন, তাই নে !

---

## তথাপি

তুমি যদি আমায় ভালো না বাসো  
রাগ করি যে এমন আমার সাধ্য নাই ;  
এমন কথার দেবনাক আভাসও  
আমারো মন তোমার পায়ে বাধ্য নাই ।  
নাইক আমার কোনো গরব-গরিমা  
যেমন করেই কর আমায় বঞ্চিত,  
তুমি না রও, তোমার সোনার প্রতিমা  
র'বে আমার মনের মধ্যে সঞ্চিত ।

কিন্তু তবু তুমিই থাক সমস্তা যাক্ যুচি' ।  
স্মৃতির চেয়ে আসলটিতেই আমার অভিরুচি ।

দৈবে স্মৃতি হারিয়ে যাওয়া শক্ত নয়  
সেটা কিন্তু বলে' রাখাই সঙ্গত ।  
তাহা ছাড়া যারা তোমার ভক্ত নয়  
নিন্দা তা'রা করতে পারে অন্ততঃ ।



## ক্ষণিকা

তাহা ছাড়া চিরদিন কি কষ্টে যায় ?

আমারো এই অশ্রু হবে মার্জ্জনা ।

ভাগ্যে যদি একটি কেহ নষ্টে যায়

সান্ত্বনার্থে হয় ত পাব চারজন ।

কিন্তু তবু তুমিই থাক সমস্তা যাক্ যুচি' ।

চারের চেয়ে একের পরেই আমার অভিরুচি ।

---

## কবির বয়স

ওরে কবি সন্ধ্যা হ'য়ে এল,  
কেশে তোমার ধরেছে যে পাক ।  
বসে' বসে' উদ্ধাপানে চেয়ে  
শুনতেছ কি পরকালের ডাক ?  
কবি কহে সন্ধ্যা হ'ল বটে,  
শুন্‌চি বসে' লয়ে' শ্রান্ত দেহ  
এ পারে ঐ পল্লী হ'তে যদি  
আজো হঠাৎ ডাকে আমায় কেহ ।  
যদি হোথায় বকুলবনচ্ছায়ে  
মিলন ঘটে তরুণ তরুণীতে,  
দুটি আঁখির পরে দুইটি আঁখি  
মিলিতে চায় ছরস্তু সঙ্গীতে ;—  
কে তাহাদের মনের কথা ল'য়ে  
বীণার তারে তুল্বে প্রতিধ্বনি,  
আমি যদি ভবের কূলে বসে'  
পরকালের ভালোমন্দই গণি ।

২

সন্ধ্যা-তারা উঠে' অস্তে গেল,  
চিতা নিবে' এল নদীর ধারে,

## ক্ষণিকা

কৃষ্ণপক্ষে হলুদবর্ণ চাঁদ  
দেখা দিল বনের একটি পারে ।  
শৃগালসভা ডাকে উর্ধ্বরবে  
পোড়ো বাড়ির শূন্য আঙিনাতে,—  
এমন কালে কোনো গৃহত্যাগী  
হেথায় যদি জাগতে আসে রাতে,  
যোড়হস্তে উদ্ধে তুলি' মাথা  
চেয়ে দেখে সপ্ত ঋষির পানে,  
প্রাণের কূলে আঘাত করে ধীরে  
স্বপ্তিসাগর শব্দবিহীন গানে,—

ত্রিভুবনের গোপন কথাখানি  
কে জাগিয়ে তুলবে তাহার মনে  
আমি যদি আমার মুক্তি নিয়ে  
যুক্তি করি আপন গৃহকোণে ?

৩

কেশে আমার পাক ধরেছে বটে  
তাহার পানে নজর এত কেন ?  
পাড়ায় যত ছেলে এবং বুড়ো  
সবার আমি একবয়সী জেনো ।

ওষ্ঠে কারো সরল সদা হাসি  
কারো হাসি আঁখির কোণে কোণে,  
কারো অশ্রু উছলে পড়ে' যায়,  
কারো অশ্রু শুকায় মনে মনে ;—  
কেউ বা থাকে ঘরের কোণে দৌঁছে,  
জগৎ মাঝে কেউ বা হাঁকায় রথ,  
কেউ বা মরে একলা ঘরের শোকে,  
জনারণ্যে কেউ বা হারায় পথ ।

সবাই মোরে করেন ডাকাডাকি,  
কখন্‌ শুনি পরকালের ডাক ?  
সবার আমি সমান-বয়সী যে  
চূলে আমার যত ধরুক পাক ।

---

## বিদায়

তোমরা নিশি যাপন কর

এখনো রাত রয়েছে ভাই,

আমায় কিন্তু বিদায় দেহ—

ঘুমতে যাই—ঘুমতে যাই !

মাথার দিব্য, উঠো না কেউ

আগ্ বাড়িয়ে দিতে আমায়,

চল্চে যেমন চলুক তেমন

হঠাৎ যেন গান না থামায় ।

আমার যন্ত্রে একটি তন্ত্রী

একটু যেন বিকল বাজে,

মনের মধ্যে শূন্চি যেটা

হাতে সেটা আস্চে না যে ।

একেবারে থামার আগে

সময় রেখে থাম্তে যে চাই ;—

আজ্কে কিছু শ্রান্ত আছি,—

ঘুমতে যাই—ঘুমতে যাই !

অঁধার আলোয় শাদায় কালোয়

দিন্টা ভালোই গেছে কাটি,’

তাহার জন্ম কারো সঙ্গে

নাইক কোনো ঝগড়া ঝাঁটি ।

মাঝে মাঝে ভেবেছিলুম  
 একটু-আধটু এটা-ওটা  
 বদল যদি পারত হ'তে  
 থাকতনাক কোনো খোঁটা,—  
 বদল হ'লে তখন মনটা  
 হ'য়ে পড়ত ব্যতিব্যস্ত,  
 এখন যেমন আছে আমার  
 সেইটে আবার চেয়ে বস্তু।  
 তাই ভেবেছি দিনটা আমার  
 ভালোই গেছে,—কিছু না চাই—  
 আজকে শুধু শ্রান্ত আছি,  
 ঘুমতে যাই—ঘুমতে যাই !

---

## অপটু

যতবার আজ গাঁথনু মালা  
পড়ল খসে' খসে'—  
কি জানি কার্ দোষে !  
তুমি হেথায় চোখের কোণে  
দেখ্চ বসে' বসে' !  
চোখ দুটিরে প্রিয়ে  
শুধাও শপথ নিয়ে  
আঙুল আমার আকুল হ'ল  
কাহার দৃষ্টিদোষে ?

আজ যে বসে' গান শোনার  
কথাই নাহি জোটে,  
কণ্ঠ নাহি ফোটে ।  
মধুর হাসি খেলে তোমার  
চতুর রাঙা ঠোঁটে ।  
কেন এমন ত্রুটি ?  
বলুক আঁখি দুটি,  
কেন আমার রুদ্ধকণ্ঠে  
কথাই নাহি ফোটে ।

রেখে দিলাম মাল্য বীণা,  
সন্ধ্যা হ'য়ে আসে ।  
ছুটি দাও এ দাসে ।  
সকল কথা বন্ধ করে'  
বসি পায়ের পাশে ।  
নীরব ওষ্ঠ দিয়ে  
পারব যে কাজ প্রিয়ে  
এমন কোনো কস্ম দেহ  
অকস্মণ্য দাসে ।

---



## উৎসৃষ্ট

মিথ্যে তুমি গাঁথলে মালা  
নবীন ফুলে,  
ভেবেছ কি কণ্ঠে আমার  
দেবে তুলে ?  
দাও ত ভালোই, কিন্তু জেনো  
হে নিঃশ্বলে,  
আমার মালা দিয়েছি ভাই  
সবার গলে ।  
যে কটা ফুল ছিল জমা  
অর্ঘ্যে মম  
উদ্দেশ্যেতে সবায় দিনু ;—  
নমো নমঃ ।

কেউ বা তাঁরা আছেন কোথা  
কেউ জানে না,  
কারো বা মুখ ঘোম্টা-আড়ে  
আধেক চেনা,—

কেউ বা ছিলেন অতীত কালে  
 অবস্খীতে,  
 এখন তাঁরা আছেন শুধু  
 কবির গীতে ।  
 সবার তনু সাজিয়ে মাণ্যে  
 পরিচ্ছদে  
 কহেন বিধি—তুভ্যমহং  
 সম্প্রদদে ।

হৃদয় নিয়ে আজকি প্রিয়ে  
 হৃদয় দেবে ?  
 হায় ললনা সে প্রার্থনা  
 ব্যর্থ এবে ।  
 কোথায় গেছে সেদিন আজি  
 যেদিন মম  
 তরুণকালে জীবন ছিল  
 মুকুল সম ;  
 সকল শোভা সকল মধু  
 গন্ধ যত  
 বন্ধোমাঝে বন্ধ ছিল  
 বন্দী মত ।

আজ যে তাহা ছাড়িয়ে গেছে  
অনেক দূরে,—  
অনেক দেশে অনেক বেশে  
অনেক সুরে ।  
কুড়িয়ে তা'রে বাঁধতে পারে  
একটি খানে  
এমনতর মোহন মন্ত্র  
কেই বা জানে !  
নিজের মনত দেবার আশা  
চুকেই গেছে,  
পরের মনটি পাবার আশায়  
রৈলু বেঁচে ।

---

## ভীরুতা

গভীর সুরে গভীর কথা  
শুনিয়ে দিতে তোরে  
সাহস নাহি পাই ।  
মনে মনে হাস্‌বি কিনা  
বুঝব কেমন করে' ?  
আপনি হেসে তাই  
শুনিয়ে দিয়ে যাই ;  
ঠাট্টা করে' ওড়াই সখি  
নিজের কথাটাই ।  
হাল্কা তুমি কর পাছে  
হাল্কা করি ভাই  
আপন ব্যথাটাই ।

সত্য কথা সরলভাবে  
শুনিয়ে দিতে তোরে  
সাহস নাহি পাই ।

## ক্ষণিকা

অবিশ্বাসে হাস্‌বি কিনা  
বুঝব কেমন করে' ?  
মিথ্যা ছলে তাই  
শুনিয়ে দিয়ে যাই ;  
উল্টা করে' বলি আমি  
সহজ কথাটাই ।  
ব্যর্থ তুমি কর পাছে  
ব্যর্থ করি ভাই  
আপন ব্যথাটাই ।

সোহাগভরা প্রাণের কথা  
শুনিয়ে দিতে তোরে  
সাহস নাহি পাই ।  
সোহাগ ফিরে' পাব কিনা  
বুঝব কেমন করে' ?  
কঠিন কথা তাই  
শুনিয়ে দিয়ে যাই ;  
গর্ববছলে দীর্ঘ করি  
নিজের কথাটাই ।  
ব্যথা পাছে না পাও তুমি  
লুকিয়ে রাখি তাই  
আপন ব্যথাটাই ।

ইচ্ছা করে নীরব হ'য়ে,  
 রহিব তোর কাছে,  
 সাহস নাহি পাই ।  
 মুখের পরে বুকের কথা  
 উথলে ওঠে পাছে ।  
 অনেক কথা তাই  
 শুনিয়ে দিয়ে যাই ;  
 কথার আড়ে আড়াল থাকে  
 মনের কথাটাই ।  
 তোমায় ব্যথা লাগিয়ে শুধু  
 জাগিয়ে তুলি ভাই  
 আপন ব্যথাটাই ।

ইচ্ছা করি স্তূদূরে যাই  
 না আসি তোর কাছে ;  
 সাহস নাহি পাই ।  
 তোমার কাছে ভীরুতা মোর  
 প্রকাশ হয় রে পাছে ।  
 কেবল এসে তাই  
 দেখা দিয়েই যাই ;

ক্ষণিকা

স্পর্শকালে গোপন করি  
মনের কথাটাই ।  
নিত্য তব নেত্রপাতে  
জ্বালিয়ে রাখি ভাই  
আপন ব্যথাটাই ।

---

## পরামর্শ

সূর্য্য গেল অস্তপারে,—  
লাগল গ্রামের ঘাটে  
আমার জীর্ণ তরী ।  
শেষ বসন্তের সন্ধ্যা হাওয়া  
শশ্বে শূন্য মাঠে  
উঠল হাহা করি' ।  
আর কি হবে নূতন যাত্রা  
নূতন রাণীর দেশে  
নূতন সাজে সেজে ?  
এবার যদি বাতাস উঠে'  
তুফান জাগে শেষে  
ফিরে আস্বি নে যে !

অনেকবার ত হাল ভেঙেছে  
পাল গিয়েছে ছিঁড়ে  
ওরে দুঃসাহসী !  
সিন্ধুপানে গেছি'স্ ভেসে  
অকূল কালো নীরে  
ছিন্ন রশ্মারশি ।



## ক্ষণিকা

এখন কি আর আছে সে বল ?

বুকের তলা তোর

ভরে' উঠছে জলে ।

অশ্রু সঁচে' চল্বি কত

আপন ভারে ভোর

তলিয়ে যাবি তলে ।

এবার তবে ক্ষান্ত হ' রে

ওরে শ্রান্ত তরী !

রাখ্রে আনাগোনা !

বর্ষ-শেষের বাঁশি বাজে

সন্ধ্যা-গগন ভরি',

ঐ যেতেছে শোনা ।

এবার ঘুমো কূলের কোলে

বটের ছায়াতলে

ঘাটের পাশে রহি' ;

ঘাটের ঘায়ে যেটুকু ডেউ

উঠে তটের জলে

তারি আঘাত সহি' ।

ইচ্ছা যদি করিস্ তবে

এপার হ'তে পারে

যাস্রে খেয়া বেয়ে ।

আনবে বহি' গ্রামের বোঝা  
ক্ষুদ্র ভারে ভারে  
পাড়ার ছেলে মেয়ে ।  
ওপারেতে ধানের খোলা  
এই পারেতে হাট,  
মাঝে শীর্ণ নদী,  
সন্ধ্যা সকাল করবি শুধু  
এঘাট ওঘাট,  
ইচ্ছা করিস্ যদি ।

হায়রে মিছে প্রবোধ দেওয়া,  
অবোধ তরী মম  
আবার যাবে ভেসে ।  
কর্ণ ধরে' বসেছে তা'র  
যমদূতের সম  
স্বভাব সর্ববনেশে ।  
ঝড়ের নেশা ঢেউয়ের নেশা  
ছাড়বেনাক আর,  
হায়রে মরণ-লুভী ।  
ঘাটে সে কি রৈবে বাঁধা,  
অদৃষ্টে যাহার  
আছে নৌকা-ডুবি ।

## ক্ষতিপূরণ

তোমার তরে সবাই মোরে  
করচে দোষী  
হে প্রেয়সী !

বল্চে—কবি তোমার ছবি  
অঁকচে গানে,  
প্রণয়গীতি গাচ্ছে নিতি  
তোমার কানে ;  
নেশায় মেতে ছন্দে গেঁথে  
তুচ্ছ কথা  
ঢাক্চে শেষে বাংলা দেশে  
উচ্চ কথা ।

তোমার তরে সবাই মোরে  
করচে দোষী  
হে প্রেয়সী !

সে কলঙ্কে নিন্দা-পঙ্কে  
তিলক টানি’  
এলেম রাগী !

ফেলুক মুছি' হাশ্ব-শুচি  
তোমার লোচন  
বিশ্বস্বদ্ধ যতেক ত্রুদ্ধ  
সমালোচন ।  
অনুরক্ত তব ভক্ত  
নিম্নিতেরে  
কর রক্ষে শীতল বক্ষে  
বাহুর ঘেরে ।

তাই কলঙ্কে নিন্দা-পঙ্কে  
তিলক টানি'  
এলেম রাণী !

৩

আমি নাব্ব মহাকাব্য  
সংরচনে  
ছিল মনে,—

ঠেকল কখন তোমার কঁাকণ  
কিঙ্কিনীতে  
কল্পনাটি গেল ফাটি'  
হাজার গীতে ।

মহাকাব্য সেই অভাব্য  
দুর্ঘটনায়  
পায়ের কাছে ছড়িয়ে আছে  
কণায় কণায় ।

আমি নাব্ব মহাকাব্য  
সংরচনে  
ছিল মনে ।

৪

হায় রে কোথা যুদ্ধ কথা  
হৈল গত  
স্বপ্ন মত ।

পুরাণ-চিত্র বীর-চরিত্র  
অষ্ট সর্গ,  
কৈল খণ্ড তোমার চণ্ড  
নয়ন-খড়গ ।  
রৈল মাত্র দিবারাত্র  
প্রেমের প্রলাপ,  
দিলেম ফেলে ভাবী কেল  
কীর্তি-কলাপ ।

## ঋতিপূরণ

হায় রে কোথা যুদ্ধ কথা  
হৈল গত  
স্বপ্ন মত ।

৫

সে সব ঋতি-পূরণ প্রতি  
দৃষ্টি রাখি,  
হরিণ-আঁখি !

লোকের মনে সিংহাসনে  
নাইক দাবী,  
তোমার মনো-গৃহের কোনো  
দাও ত চাবী ।  
মরার পরে চাইনে ওরে  
অমর হ'তে ।  
অমর হব আঁখির তব  
সুধার স্রোতে ।

খ্যাতির ঋতি-পূরণ প্রতি  
দৃষ্টি রাখি,  
হরিণ-আঁখি !

## সেকাল

আমি যদি জন্ম নিতেম  
কালিদাসের কালে,  
দৈবে হতেম দশম রত্ন  
নবরত্নের মালে,

একটি শ্লোকে স্তুতি গেয়ে  
রাজার কাছে নিতেম চেয়ে  
উজ্জয়িনীর বিজন প্রান্তে  
কানন-ঘেরা বাড়ি ।  
রেবার তটে টাঁপার তলে  
সভা বস্তু সন্ধ্যা হ'লে,  
ক্রীড়া-শৈলে আপন মনে  
দিতেম কণ্ঠ ছাড়ি' ।

জীবনতরী বহে' যেত  
মন্দাক্রান্তা তালে,  
আমি যদি জন্ম নিতেম  
কালিদাসের কালে ।

২

চিস্তা দিতেম জলাঞ্জলি,  
থাক্তনাক স্বরা,  
মুছপদে যেতেম, যেন  
নাইক মৃত্যু জরা ।

ছ'টা ঋতু পূর্ণ করে'  
ঘটত মিলন স্তরে স্তরে,  
ছ'টা সর্গে বার্তা তাহার  
রৈত কাব্যে গাঁথা ।  
বিচ্ছেদও সুদীর্ঘ হ'ত,  
অশ্রুজলের নদীর মত  
মন্দগতি চলত রচি'  
দীর্ঘ করুণ গাথা ।

আষাঢ় মাসে মেঘের মতন  
মন্থরতায় ভরা  
জীবনটাতে থাক্তনাক  
কিছুমাত্র স্বরা ।



অশোককুঞ্জ উঠত ফুটে  
প্রিয়ার পদাঘাতে ;  
বকুল হ'ত ফুল, প্রিয়ার  
মুখের মদিরাতে ।

প্রিয়সখীর নামগুলি সব  
ছন্দ ভরি' করিত রব,  
রেবার কূলে কলহংসের  
কলধবনির মত ।  
কোনো নামটি মন্দালিকা  
কোনো নামটি চিত্রলিখা,  
মঞ্জুলিকা মঞ্জুরিণী  
ঝঙ্কারিত কত ।

আস'ত তা'রা কুঞ্জবনে  
চৈত্র-জ্যোৎস্না রাতে,  
অশোক শাখা উঠ'ত ফুটে  
প্রিয়ার পদাঘাতে ।

কুরুবকের পরত চূড়া  
 কালো কেশের মাঝে,  
 লীলা-কমল রৈত হাতে  
 কি জানি কোন্ কাজে

অলক সাজ্ত  
 শিরীষ পর্ত কণ্ঠমূলে,  
 মেখলাতে ঢুলিয়ে দিত  
 নব-নীপের মালা ।  
 ধারায়ন্ত্রে স্নানের শেষে  
 ধূপের ধূয়া দিত কেশে,  
 লোম্বফুলের শুভ্র রেণু  
 মাখ্ত মুখে বালা

কালাগুরুর গুরুগন্ধ  
 লেগে থাক্ত সাজে,  
 কুরুবকের পরত মালা  
 কালো কেশের মাঝে ।

কুক্কুমেরি পত্রলেখায়  
বক্ষ রৈত ঢাকা,  
আঁচলখানির প্রান্তটিতে  
হংস-মিথুন আঁকা

আষাঢ় মাসে  
চেয়ে রৈত বঁধুর আশে,  
একটি করে' পূজার পুষ্পে  
দিন গণিত বসে' ।  
বক্ষে তুলি' বীণাখানি  
গান গাহিতে ভুলত বাণী,  
রুক্ষ অলক অশ্রুচোখে  
পড়ত খসে' খসে' ।

মিলন-রাতে বাজত পায়ে  
নূপুর দুটি বাঁকা ;  
কুক্কুমেরি পত্রলেখায়  
বক্ষ রৈত ঢাকা ।

৬

প্রিয় নামটি শিথিয়ে দিত  
সাধের সারিকারে,  
নাচিয়ে নিত ময়ূরটিরে  
কঙ্কণ-ঝঙ্কারে ।

কপোতটিরে ল'য়ে বুকে  
সোহাগ কর্ত্ত মুখে মুখে,  
সারসীরে খাইয়ে দিত  
পদ্মকোরক বহি' ।  
অলক নেড়ে ছুলিয়ে বেণী  
কথা কৈত শোরসেনী,  
বলুত সখীর গলা ধরে'—  
হলা পিয় সহি ।

জল সেচিত আলবালে  
তরুণ সহকারে ।  
প্রিয় নামটি শিথিয়ে দিত  
সাধের সারিকারে ।

নবরত্নের সভার মাঝে  
রৈতাম একটি টেরে,  
দূর হৈতে গড় করিতাম  
দিঙনাগাচার্য্যে ।

আশা করি নামটা হ'ত  
গুরি মধ্যে ভদ্রমত,  
বিশ্বসেন কি দেবদত্ত  
কিন্মা বস্তুভূতি ।  
অশ্রু কি মালিনীতে  
বিন্মাধরের স্তুতিগীতে  
দিতেম রচি' ছুটি চারটি  
ছোটখাটো পুঁথি ।

ঘরে যেতেম তাড়াতাড়ি  
শ্লোক-রচনা সেরে  
নবরত্নের সভার মাঝে  
রৈতাম একটি টেরে ।

৮

আমি যদি জন্ম নিতেম  
কালিদাসের কালে  
বন্দী হতেম না জানি কোন্  
মালবিকার জালে ।

কোন্ বসন্ত-মহোৎসবে  
বেণুবীণার কলরবে  
মঞ্জরিত কুঞ্জবনের  
গোপন অন্তরালে  
কোন্ ফাগুনের শুক্ল নিশায়  
যৌবনেরি নবীন নেশায়  
চকিতে কার দেখা পেতেম  
রাজার চিত্রশালে ।

ছল করে' তা'র বাধ্ত আঁচল  
সহকারের ডালে ।  
আমি যদি জন্ম নিতেম  
কালিদাসের কালে ।

হায় রে কবে কেটে গেছে  
কালিদাসের কাল !  
পণ্ডিতেরা বিবাদ করে  
ল'য়ে তারিখ শাল ।

হারিয়ে গেছে সে সব অন্ধ,  
ইতিবৃত্ত আছে স্তব্ধ,  
গেছে যদি, আপদ গেছে,  
মিথ্যা কোলাহল ।  
হায় রে গেল সঙ্গে তারি  
সেদিনের সেই পৌরনারী  
নিপুণিকা চতুরিকা  
মালবিকার দল ।

কোন্ স্বর্গে নিয়ে গেল  
বরমাল্যের থাল !  
হায় রে কবে কেটে গেছে  
কালিদাসের কাল ।

১০

যাদের সঙ্গে হয়নি মিলন  
সে সব বরাজনা  
বিচ্ছেদেরি দুঃখে আন্মায়  
করচে অন্তমনা ।

তবু মনে প্রবোধ আছে—  
তেম্নি বকুল ফোটে গাছে,  
যদিও সে পায় না নারীর  
মুখমদের ছিটা ।  
ফাগুন মাসে অশোক ছায়ে  
অলস প্রাণে শিথিল গায়ে  
দখিণ হ'তে বাতাসটুকু  
তেম্নি লাগে মিঠা ।

অনেক দিকেই যায় যে পাওয়া  
অনেকটা সাস্থনা,  
যদিও রে নাইক কোথাও  
সে সব বরাজনা ।



এখন যাঁরা বর্তমানে,  
আছেন মর্ত্যলোকে,  
মন্দ তা'রা লাগ্ত না কেউ  
কালিদাসের চোখে ।

পরেন বটে জুতা মোজা,  
চলেন বটে সোজা সোজা,  
বলেন বটে কথাবার্তা  
অন্য দেশীর চালে,  
তবু দেখ সেই কটাক্ষ  
আঁখির কোণে দিচ্ছে সাক্ষ্য,  
যেমনটি ঠিক দেখা যেত  
কালিদাসের কালে ।

মরব না ভাই নিপুণিকা  
চতুরিকার শোকে,  
তঁারা সবাই অন্ত্যনামে  
আছেন মর্ত্যলোকে ।

১২

আপাতত এই আনন্দে  
গর্বের বেড়াই নেচে,  
কালিদাস ত নামেই আছেন  
আমি আছি বেঁচে ।

তঁাহার কালের স্বাদগন্ধ  
আমি ত পাই মুহুমন্দ,  
আমার কালের কণামাত্র  
পান্‌নি মহাকবি ।  
বিদুষী এই আছেন যিনি  
আমার কালের বিনোদিনী  
মহাকবির কল্পনাতে  
ছিল না তাঁর ছবি ।

প্রিয়ে তোমার তরুণ আঁখির  
প্রসাদ যেচে যেচে,  
কালিদাসকে হারিয়ে দিয়ে  
গর্বের বেড়াই নেচে ।

## প্রতিজ্ঞা

আমি      হব না তাপস, হব না, হব না,  
                 যেমনি বলুন্ যিনি ।

আমি      হব না তাপস, নিশ্চয় যদি  
                 না মেলে তপস্বিনী ।

আমি      করেছি কঠিন পণ  
যদি      না মিলে বকুল বন,  
যদি      মনের মতন মন  
                 না পাই জিনি,

তবে      হব না তাপস, হব না, যদি না  
                 পাই সে তপস্বিনী ।

আমি      ত্যজিব না ঘর, হব না বাহির  
                 উদাসীন সন্ন্যাসী,  
যদি      ঘরের বাহিরে না হাসে কেহই  
                 ভুবন-ভুলানো হাসি ।

যদি      না উড়ে নীলাঞ্চল  
মধুর      বাতাসে বিচঞ্চল,  
যদি      না বাজে কাঁকণ মল  
                 রিণিক্‌ঝিনি

আমি      হব না তাপস, হব না, যদি না  
                 পাই গো তপস্বিনী ।

আমি    হব না তাপস, তোমার শপথ,  
          যদি সে তপের বলে  
কোনো   নূতন ভুবন না পারি গড়িতে  
          নূতন হৃদয়তলে ।  
যদি       জাগায়ে বীণার তার  
কারো   টুটিয়া মরম-দ্বার,  
কোনো   নূতন আঁখির ঠার  
          না লই চিনি ।  
আমি    হব না তাপস, হব না, হব না,  
          না পেলে তপস্বিনী ।

---

## পথে

গাঁয়ের পথে চলেছিলাম

অকারণে ;

বাতাস বহে বিকালবেলা

বেগুবনে ।

ছায়া তখন আলোর ফাঁকে

লতার মত জড়িয়ে থাকে,

একা একা কোকিল ডাকে

নিজমনে ।

আমি কোথায় চলেছিলাম

অকারণে !

জলের ধারে কুটীরখানি

পাতা-ঢাকা,

দ্বারের পরে নুয়ে পড়ে

নিম্বশাখা ।

ঐ যে শুনি মাঝে মাঝে—

না-জানি কোন্‌ নিত্যকাজে

কোথায় দুটি কঁাকণ বাজে

গৃহকোণে ।

যেতে যেতে এলেম হেথা

অকারণে !

দীঘির জলে ঝলক্ ঝলে  
মাগিক্ হীরা,  
শর্যেক্ষেতে উঠ্চে মেতে  
মৌমাছিরা ।

এ পথ গেছে কত গাঁয়ে,  
কত গাছের ছায়ে ছায়ে,  
কত মাঠের গায়ে গায়ে  
কত বনে ।

আমি শুধু হেথায় এলেম  
অকারণে !

আরেক দিন সে ফাগুন মাসে  
বহু আগে  
চলেছিলেম এই পথে, সেই  
মনে জাগে ।

আমের বোলের গন্ধে অবশ  
বাতাস ছিল উদাস অলস,  
ঘাটের শানে বাজ্চে কলস  
ক্ষণে ক্ষণে ।

সে সব কথা ভাব্চি বসে’  
অকারণে !

## ঋণিকা

দীর্ঘ হ'য়ে পড়চে পথে  
বাঁকা ছায়া,  
গোষ্ঠ ঘরে ফিরচে ধেনু  
শ্রান্তকায়।

গোধূলিতে ক্ষেতের পরে  
ধূসর আলো ধূধু করে,  
বসে' আছে খেয়ার তরে  
পান্থ জনে।

আবার ধীরে চল্‌চি ফিরে  
অকারণে !

---

## জন্মান্তর

আমি        ছেড়েই দিতে রাজি আছি  
              সুসভ্যতার আলোক,  
আমি        চাই না হ'তে নববঙ্গে  
              নবযুগের চালক ;  
আমি        নাই বা গেলেম বিলাত,  
নাই বা        পেলেম রাজার থিলাৎ,  
যদি        পরজন্মে পাই রে হ'তে  
              ব্রজের রাখাল বালক ।  
তবে        নিবিয়ে দেব' নিজের ঘরে  
              সুসভ্যতার আলোক !

২

যারা        নিত্য কেবল ধেনু চরায়  
              বংশীবটের তলে,  
যারা        গুঞ্জা ফুলের মালা গোঁথে  
              পরে পরায় গলে ;  
যারা        বৃন্দাবনের বনে  
সদাই        শ্যামের বাঁশি শোনে,



## কণিকা

যারা            যমুনাতে ঝাঁপিয়ে পড়ে  
                  শীতল কালো জলে ।  
যারা            নিত্য কেবল ধেনু চরায়  
                  বংশীবটের তলে ।

৩

ওরে            বিহান্ হ'ল জাগরে ভাই—  
                  ডাকে পরস্পরে ।  
ওরে            ঐষে দধি-মন্ত্ৰ-ধ্বনি  
                  উঠ'ল ঘরে ঘরে ।  
হের            মাঠের পথে ধেনু  
চলে            উড়িয়ে গো-খুর রেণু,  
হের            আঙিনাতে ব্রজের বধু  
                  ছুফ-দোহন করে ।  
ওরে            বিহান্ হ'ল জাগরে ভাই—  
                  ডাকে পরস্পরে ।

৪

ওরে            শাঙন মেঘের ছায়া পড়ে  
                  কালো তমাল-মূলে,  
ওরে            এপার ওপার আঁধার হ'ল  
                  কালিন্দীরি কূলে ।

ঘাটে গোপাঙ্গনা ডরে  
কাঁপে খেয়া তরীর পরে,  
হের কুঞ্জবনে নাচে ময়ূর  
কলাপখানি তুলে ।  
ওরে শাউন মেঘের ছায়া পড়ে  
কালো তমাল-মূলে ।

৫

মোরা নব-নবীন ফাগুন রাতে  
নীল নদীর তীরে  
কোথা যাব চলি' অশোকবনে  
শিখিপুচ্ছ শিরে ।  
যবে দোলার ফুল-রসি  
দিবে নীপশাখায় কসি'  
যবে দখিণ বায়ে বাঁশির ধ্বনি  
উঠবে আকাশ ঘিরে,  
মোরা রাখাল মিলে করব মেলা  
নীল নদীর তীরে ।

৬

আমি হ'ব না ভাই নববঙ্গে  
নবযুগের চালক,

## ਅਗਿਕਾ

আমি জ্বালাব না আঁধার দেশে  
 সুসভ্যতার আলোক ;  
 যদি ননী-ছানার গাঁয়ে  
 কোথাও অশোকনীপের ছায়ে  
 আমি কোনোজন্মে পারি হ'তে  
 ব্রজের গোপবালক  
 তবে চাই না হ'তে নববঙ্গে  
 নবযুগের চালক ।

## কৰ্মফল

পরজন্ম সত্য হ'লে  
কি ঘটে মোর সেটা জানি ।  
আবার আমায় টানবে ধরে'  
বাংলা দেশের এ রাজধানী ।  
গতপত্ত লিখনু ফেঁদে,  
তা'রাই আমায় আনবে বেঁধে,  
অনেক লেখায় অনেক পাতক,  
সে মহাপাপ করব মোচন ।  
আমায় হয় ত করতে হবে  
আমার লেখা সমালোচন ।

২

ততদিনে দৈবে যদি  
পক্ষপাতী পাঠক থাকে  
কর্ণ হবে রক্তবর্ণ  
এমনি কটু বল্ব তাকে ।  
যে বইখানি পড়বে হাতে  
দণ্ড করব পাতে পাতে,

আমার ভাগ্যে হব আমি  
দ্বিতীয় এক ভঙ্গলোচন ।  
আমায় হয় ত করতে হবে  
আমার লেখা সমালোচন ।

৩

বল্ব, এসব কি পুরাতন !  
আগাগোড়া ঠেক্চে চুরি ।  
মনে হচ্ছে, আমিও এমন  
লিখতে পারি বুড়ি বুড়ি ।  
আরো যে সব লিখব কথা  
ভাবতে মনে বাজ্চে ব্যথা,  
পরজন্মের নিষ্ঠুরতায়  
এ জন্মে হয় অনুশোচন ।  
আমায় হয় ত করতে হবে  
আমার লেখা সমালোচন ।

৪

তোমরা, যাঁদের বাক্য হয় না  
আমার পক্ষে মুখরোচক,  
তোমরা যদি পুনর্জন্মে  
হও পুনর্ববার সমালোচক—

আমি আমায় পাড়ব গালি,  
তোমরা তখন ভাববে খালি  
কলম কসে' বসে' বসে'

প্রতিবাদের প্রতি বচন ।

আমায় হয় ত করতে হবে

আমার লেখা সমালোচন ।

৫

লিখব, ইনি কবি-সভায়

হংস মধ্য বকো যথা ।

তুমি লিখবে—কোন্ পাষণ্ড

বলে এমন মিথ্যা কথা ।

আমি তোমায় বলব—মূঢ়,

তুমি আমায় বলবে—রুঢ়,

তা'র পরে যা লেখালেখি

হবে না সে রুচি-রোচন ।

তুমি লিখবে কড়া জবাব

আমি কড়া সমালোচন

---

## কবি

আমি যে বেশ সুখে আছি  
অন্ততঃ নই দুঃখে ক্লশ,  
সে কথাটা পড়ে লিখতে  
লাগে একটু বিসদৃশ ।  
সেই কারণে গভীর ভাবে  
খুঁজে খুঁজে গভীর চিতে  
বেরিয়ে পড়ে গভীর ব্যথা  
স্মৃতি কিস্বা বিস্মৃতিতে ।  
কিন্তু সেটা এত সুদূর  
এতই সেটা অধিক গভীর  
আছে কি না আছে, তাহার  
প্রমাণ দিতে হয় না কবির  
মুখের হাসি থাকে মুখে,  
দেহের পুষ্টি পোষে দেহ,  
প্রাণের ব্যথা কোথায় থাকে  
জানে না সেই খবর কেহ ।

কাব্য পড়ে' যেমনভাব  
কবি তেমন নয় গো ।

আঁধার করে' রাখেনি মুখ,  
দিবারাত্রি ভাঙচে না বুক,  
গভীর দুঃখ ইত্যাদি সব  
হাস্ত মুখেই বয় গো ।

ভালবাসে ভদ্র সভায়  
ভদ্র পোষাক পরতে অঙ্গে,  
ভালবাসে ফুল মুখে  
কইতে কথা লোকের সঙ্গে ।  
বন্ধু যখন ঠাট্টা করে,  
মরে না সে অর্থ খুঁজে,  
ঠিক যে কোথায় হাস্তে হবে  
একেক সময় দিব্যি বুঝে ।  
সামনে যখন অন্ন থাকে  
থাকে না সে অন্ত মনে ;  
সঙ্গীদলের সাড়া পেলে  
রয় না বসে' ঘরের কোণে ।  
বন্ধুরা কয়, লোকটা রসিক,  
কয় কি তা'রা মিথ্যামিথ্যি ?  
শত্রুরা কয়, লোকটা হান্ধা,  
কিছু কি তা'র নাইক ভিত্তি ?



## শ্রুণিকা

কাব্য দেখে' যেমন ভাব  
কবি তেমন নয় গো ।

চাঁদের পানে চক্ষু তুলে'  
রয় না পড়ে' নদীর কূলে,  
গভীর দুঃখ ইত্যাদি সব  
মনের স্মৃতিই বয় গো ।

স্মৃতি আছে লিখতে গেলে  
লোকে বলে, প্রাণটা ক্ষুদ্র,  
আশাটা এর নয়ক বিরাট,  
পিপাসা এর নয়ক রুদ্র ।  
পাঠকদলে তুচ্ছ করে,  
অনেক কথা বলে কঠোর ;  
বলে, একটু হেসে খেলেই  
ভরে' যায় এর মনের জঠর ।  
কবিরে তাই ছন্দে বন্ধে  
বানাতে হয় দুখের দলিল ।  
মিথ্যা যদি হয় সে, তবু  
ফেলো পাঠক চোখের সলিল ।  
তাহার পরে আশিষ কোরো  
রুদ্ধ কণ্ঠে ক্ষুদ্র বৃকে,

কবি যেন আজন্মকাল

দুখের কাব্য লেখেন স্নেহে ।

কাব্য যেমন, কবি যেন

ভেমন নাহি হয় গো

বুদ্ধি যেন একটু থাকে,

স্নানাহারের নিয়ম রাখে ।

সহজ লোকের মতই যেন

সরল গদ্য কয় গো ।

---

## বাণিজ্যে বসতে লক্ষ্মীঃ

কোন্ বাণিজ্যে নিবাস তোমার  
কহ আমায় ধনী,  
তাহা হ'লে সেই বাণিজ্যের  
করব মহাজনী ।

দুয়ার জুড়ে কাঙাল বেশে  
ছায়ার মত চরণদেশে  
কঠিন তব নূপুর ঘেঁষে  
আর বসে' না রৈব ।  
এটা আমি স্থির বুঝেছি  
ভিক্ষা নৈব নৈব ।

যাবই আমি যাবই, ওগো,  
বাণিজ্যেতে যাবই ।  
তোমায় যদি না পাই, তবু  
আর কারে ত পাবই ।

২

সাজিয়ে নিয়ে জাহাজখানি,  
বসিয়ে হাজার দাঁড়ি,  
কোন্ নগরে যাব, দিয়ে  
কোন্ সাগরে পাড়ি ।

## বাণিজ্যে বসতে লক্ষ্মীঃ

কোন্ তারকা লক্ষ্য করি'  
কূল-কিনারা পরিহরি'  
কোন্ দিকেরে বাইব তরী  
আকুল কালো নীরে !  
মরুব না আর ব্যর্থ আশায়  
বালু মরুর তীরে ।

যাবই আমি যাবই, ওগো,  
বাণিজ্যেতে যাবই ।  
তোমায় যদি না পাই, তবু  
আর কারে ত পাবই ।

৩

সাগর উঠে তরঙ্গিয়া,  
বাতাস বহে বেগে ।  
সূর্য্য যেথায় অস্তে নামে  
ঝিলিক মারে মেঘে ।

দক্ষিণে চাই উত্তরে চাই  
ফেনায় ফেনা, আর কিছু নাই,  
যদি কোথাও কূল নাহি পাই  
তল পাবত তবু ।  
ভিটার কোণে হতাশ মনে  
রৈব না আর কভু ।

যাবই আমি যাবই, ওগো,  
বাণিজ্যেতে যাবই।  
তোমায় যদি না পাই, তবু  
আর কারে ত পাবই।

৪

নীলের কোলে শ্যামল সে দ্বীপ  
প্রবাল দিয়ে ঘেরা,  
শৈলচূড়ায় নীড় বেঁধেছে  
সাগর-বিহঙ্গেরা।

নারিকেলের সাথে সাথে  
ঝোড়ে বাতাস কেবল ডাকে,  
ঘন বনের ফাঁকে ফাঁকে  
বইচে নগ-নদী।  
সোনার রেণু আন্ব ভরি'  
সেথায় নামি যদি।

যাবই আমি যাবই, ওগো,  
বাণিজ্যেতে যাবই।  
তোমায় যদি না পাই তবু  
আর কারে ত পাবই।

৫

অকূল মাঝে ভাসিয়ে তরী

যাচ্ছি অজানায় ।

আমি শুধু একলা নেয়ে

আমার শূন্য নায় ।

নব নব পবনভরে

যাব দ্বীপে দ্বীপান্তরে,

নেব' তরী পূর্ণ করে'

অপূর্ব্ব ধন যত ।

ভিখারী তোর ফিরবে যখন

ফিরবে রাজার মত ।

যাবই আমি যাবই, ওগো

বাণিজ্যেতে যাবই ।

তোমায় যদি না পাই, তবু

আর কারে ত পাবই !

---

## বিদায় রীতি

হায় গো রাণী, বিদায় বাণী  
এম্ন করে' শোনে ?  
ছি ছি ঐ যে হাসিখানি  
কাঁপচে আঁখিকোণে !  
এতই বারে বারে কিরে  
মিথ্যা বিদায় নিয়েছি রে,  
ভাব্চ তুমি মনে মনে  
এ লোকটি নয় যাবার,  
দ্বারের কাছে ঘুরে' ঘুরে'  
ফিরে' আস্বে আবার ।

আমায় যদি শুধাও তবে  
সত্য করে'ই বলি  
আমারো সেই সন্দেহ হয়  
ফিরে' আস্বে চলি' ।  
বসন্তদিন আবার আসে,  
পূর্ণিমা-রাত আবার হাসে,

বকুল ফোটে রিক্ত শাখায়,—  
এরাও ত নয় যাবার ।  
সহস্রবার বিদায় নিয়ে  
এরাও ফেরে আবার ।

একটুখানি মোহ তবু  
মনের মধ্যে রাখো,  
মিথ্যেটারে একেবারেই  
জবাব দিয়োনাকো ।  
ভ্রমক্রমে ক্ষণেকতরে  
এনো গো জল আঁখির পরে,  
আকুল স্বরে যখন কব—  
সময় হ'ল যাবার ।  
তখন না-হয় হেসো, যখন  
ফিরে আস্ব আবার ।

---



## নষ্ট স্বপ্ন

কাল্কে রাতে মেঘের গরজনে,  
রিমিঝিমি বাদল-বরিষণে,  
ভাবতেছিলাম একা একা—  
স্বপ্ন যদি যায়রে দেখা  
আসে যেন তাহার মূর্ত্তি ধরে’  
বাদলা রাতে আধেক ঘুমঘোরে ।  
মাঠে মাঠে বাতাস ফিরে মাতি’ ।  
বুথা স্বপ্নে কাটল সারারাতি ।  
হায়রে, সত্য কঠিন ভারী,  
ইচ্ছামত গড়তে নারি ;  
স্বপ্ন সেও চলে আপন মতে ।  
আমি চলি আমার শূন্য পথে ।  
কাল্কে ছিল এমন ঘন রাত,  
আকুল ধারে এমন বারিপাত,  
মিথ্যা যদি মধুররূপে  
আসত কাছে চুপে চুপে  
তাহা হ’লে কাহার হ’ত ক্ষতি ?  
স্বপ্ন যদি ধরত সে মুরতি ?

## একটি মাত্র

গিরিনদী বালির মধ্যে  
যাচ্ছে বেঁকে বেঁকে,  
একটি ধারের স্বচ্ছ ধারায়  
শীর্ণ রেখা এঁকে ।  
মরু-পাহাড় দেশে  
শুষ্ক বনের শেষে  
ফিরেছিলেম দুই প্রহরে  
দগ্ধ চরণতল,  
বনের মধ্যে পেয়েছিলেম  
একটি আঙুর ফল ।

২

রৌদ্র তখন মাথার পরে,  
পায়ের তলায় মাটি  
জলের তরে কেঁদে মরে  
তৃষায় ফাটি-ফাটি ।  
পাছে ক্ষুধার ভরে  
তুলি মুখের পরে,

আকুল আশে নিইনি তাহার

শীতল পরিমল ।

রেখেছিলেন লুকিয়ে, আমার

একটি আঙুর ফল ।

৩

বেলা যখন পড়ে' এল,

রোদ্র হ'ল রাঙা,

নিশ্বাসিয়া উঠ'ল হুহু

ধূধু বালুর ডাঙা ;—

থাকতে দিনের আলো,

ঘরে ফেরাই ভালো,—

তখন খুলে দেখলু চেয়ে

চক্ষে লয়ে' জল,

মুঠির মাঝে শুকিয়ে আছে

একটি আঙুর ফল ।

---

## সোজাসুজি

হৃদয়পানে হৃদয় টানে,  
নয়নপানে নয়ন ছোটে,  
দুটি প্রাণীর কাহিনীটা  
এইটুকু বই নয়ক মোটে ।  
শুরুসক্কা চৈত্র মাসে,  
হেনার গন্ধ হওয়ায় ভাসে,  
আমার বাঁশি লুটায় ভূমে,  
তোমার কোলে ফুলের পুঁজি,  
তোমার আমার এই যে প্রণয়  
নিতান্তই এ সোজাসুজি ।

২

বসন্তী-রং বসনখানি  
নেশার মত চক্ষে ধরে,  
তোমার গাঁথা যুথীর মালা  
স্ততির মত বক্ষে পড়ে ।  
একটু দেওয়া, একটু রাখা,  
একটু প্রকাশ, একটু ঢাকা,

## কণিকা

একটু হাসি, একটু সরস,  
দু'জনের এই বোঝাবুঝি ।  
তোমার আমার এই যে প্রণয়  
নিতান্তই এ সোজাসুজি

৩

মধুমাসের মিলনমাঝে  
মহান্ কোনো রহস্য নেই,  
অসীম কোনো অবোধ কথা  
যায় না বেধে মনে-মনেই ।  
আমাদের এই স্ত্রের পিছু  
ছায়ার মত নাইক কিছু,  
দৌহার মুখে দৌহে চেয়ে  
নাই হৃদয়ের খোঁজাখুঁজি ।  
মধুমাসে মোদের মিলন  
নিতান্তই এ সোজাসুজি

৪

ভাষার মধ্যে তলিয়ে গিয়ে  
খুঁজিনে ভাই ভাষাতীত,  
আকাশপানে বাহু তুলে  
চাহিনে ভাই আশাতীত ।

যেটুকু দিই, যেটুকু পাই,  
 তাহার বেশি আর কিছু নাই,  
 সুখের বন্ধ চেপে ধরে',  
 করিনে কেউ যোঝাযুঝি ।  
 মধুমাসে মোদের মিলন  
 নিতান্তই এ সোজাসুজি ।

৫

শুনেছিছু প্রেমের পাথার  
 নাইক তাহার কোনো দিশা,  
 শুনেছিছু প্রেমের মধ্যে  
 অসীম ক্ষুধা অসীম তৃষা ;  
 বোণার তন্ত্রী কঠিন টানে  
 ছিঁড়ে পড়ে প্রেমের তানে,  
 শুনেছিছু প্রেমের কুঞ্জে  
 অনেক বাঁকা গলি ঘুঁজি ।  
 আমাদের এই দোঁহার মিলন  
 নিতান্তই এ সোজাসুজি ।

## অসাবধান

আমায় যদি মনটি দেবে,  
দিয়ে, দিয়ে মন ।  
মনের মধ্যে ভাবনা কিন্তু  
রেখো সারাক্ষণ ।

খোলা আমার দুয়ার থানা,  
ভোলা আমার প্রাণ,  
কখন যে কার আনাগোনা,  
নইক সাবধান ।

পথের ধারে বাড়ি আমার,  
থাকি গানের কোঁকে,  
বিদেশী সব পথিক এসে  
যেথা-সেথাই ঢোকে ।

ভাঙে কতক, হারায় কতক  
যা আছে মোর দামী  
এমনি করে' একে একে  
সর্ববিস্তার আমি ।

আমায় যদি মনটি দেবে—দিয়ে, দিয়ে মন ।  
মনের মধ্যে ভাবনা কিন্তু রেখো সারাক্ষণ ।

আমায় যদি মনটি দেবে,  
 নিষেধ তাহে নাই ;  
 কিছুর তরে আমায় কিন্তু  
 কোরো না কেউ দায়ী ।

ভুলে যদি শপথ করে’  
 বলি কিছু কবে,  
 সেটা পালন না করি ত  
 মাপ করিতেই হবে ।  
 ফাগুন মাসে পূর্ণিমাতে  
 যে নিয়মটা চলে,  
 রাগ কোরো না চৈত্র মাসে  
 সেটা ভঙ্গ হ’লে ।  
 কোনো দিন বা পূজার সাজি  
 কুস্তমে হয় ভরা  
 কোনো দিন বা শূন্য থাকে,  
 মিথ্যা সে দোষ ধরা ।

আমায় যদি মনটি দেবে—নিষেধ তাহে নাই ;  
 কিছুর তরে আমায় কিন্তু কোরো না কেউ দায়ী

আমায় যদি মনটি দেবে  
 রাখিয়া যাও তবে ;



## কণিকা

দিয়েছ যে সেটা কিন্তু

ভুলে থাকতে হবে ।

দুটি চক্ষে বাজবে তোমার

নবরাগের বাঁশি,

কণ্ঠে তোমার উচ্ছ্বসিয়া

উঠবে হাসিরাশি ।

প্রশ্ন যদি শুধাও কভু

মুখটি রাখি' বুকে,

মিথ্যা কোনো জবাব পেলো

হেসো সকৌতুকে ।

যে দুয়ারটা বন্ধ থাকে

বন্ধ থাকতে দিয়ো ।

আপ্নি যাহা এসে পড়ে

তাহাই হেসে নিয়ো ।

আমায় যদি মনটি দেবে—রাখিয়া যাও তবে ;

দিয়েছ যে সেটা কিন্তু ভুলে থাকতে হবে ।

---

## স্বপ্নশেষ

অধিক কিছু নেই গো কিছু নেই,  
কিছু নেই ।

যা আছে তা এই গো শুধু এই,  
শুধু এই ।

যা ছিল তা শেষ করেছি  
একটি বসন্তেই ।

আজ যা কিছু বাকি আছে  
সামান্য এই দান

তাই নিয়ে কি রচি' দিব  
একটি ছোট গান ?

একটি ছোট মালা, তোমার  
হাতের হবে বালা,

একটি ছোট ফুল, তোমার  
কানের হবে ডুল ;

একটি তরুতলায় বসে'  
একটি ছোট খেলায়

হারিয়ে দিয়ে যাবে মোরে  
একটি সন্ধ্যাবেলায় ।

অধিক কিছু নেই গো কিছু নেই,  
কিছু নেই ।

যা আছে তা এই গো শুধু এই,  
শুধু এই ।

ঘাটে আমি একলা বসে' রই,  
ওগো আয় !

বর্ষা নদী পার হবি কি ওই ?  
হায় গো হায় !

অকূল মাঝে ভাস্বি কেগো  
ভেলার ভরসায় ?

আমার তরীখান  
সৈবে না তুফান ;  
তবু যদি লীলাভরে  
চরণ কর দান,

শাস্ত তীরে তীরে, তোমায়  
বাইব ধীরে ধীরে ;  
একটি কুমুদ তুলে, তোমার  
পরিয়ে দেব' চূলে ।

ভেসে ভেসে শুন্বে বসে'  
কত কোকিল ডাকে

কূলে কূলে কুঞ্জবনে  
নীপের শাখে শাখে ।

ক্ষুদ্র আমার তরীখানি—সত্য করি' কই,  
হায় গো পথিক হায়,  
তোমায় নিয়ে একলা নায়ে পার হব না ওই  
আকুল যমুনায় ।

---

## কূলে

আমাদের এই নদীর কূলে

নাইক স্নানের ঘাট,

ধূধু করে মাঠ ।

ভাঙা পাড়ির গায়ে শুধু

শালিখ্ লাখে লাখে

খোপের মধ্যে থাকে ।

সকাল বেলা অরুণ আলো

পড়ে জলের পরে,

নৌকা চলে ছু'একখানি

অলস বায়ুভরে ।

আঘাটাতে বসে' রৈলে

বেলা যাচ্ছে বয়ে' ;—

দাও গো মোরে কয়ে'

ভাঙন-ধরা কূলে তোমার

আর কিছু কি চাই ?

সে কহিল, ভাই,

নাই,—নাই,—নাই গো আমার

কিছুতে কাজ নাই ।

আমাদের এ নদীর কূলে  
 ভাঙা পাড়ির তল,  
 ধেনু খায় না জল ।  
 দূর গ্রামের ছু'একটি ছাগ  
 বেড়ায় চরি' চরি'  
 সারাদিবস ধরি' ।  
 জলের পরে বেঁকে-পড়া  
 খেজুর শাখা হ'তে  
 ক্ষণে ক্ষণে মাছরাঙাটি  
 ঝাঁপিয়ে পড়ে শ্রোতে ।  
 ঘাসের পরে অশথতলে  
 যাচ্ছে বেলা বয়ে' ;—  
 দাও আমারে কয়ে'  
 আজকে এমন বিজন প্রাতে  
 আর কারে কি চাই ?  
 সে কহিল, ভাই,  
 নাই,—নাই,—নাই গো আমার  
 কারেও কাজ নাই ।

## যাত্রী

আছে, আছে স্থান !  
একা তুমি, তোমার শুধু  
একটি আঁটি ধান ।  
না হয় হবে ঘেঁষাঘেঁষি,  
এমন কিছু নয় সে বেশি,  
না হয় কিছু তারি হবে  
আমার তরীখান,—  
তাই বলে' কি ফিরবে তুমি ?  
আছে, আছে স্থান !

এস, এস নায়ে !  
ধূলা যদি থাকে কিছু  
থাক্ না ধূলা পায়ে ।  
তনু তোমার তনুলতা,  
চোখের কোণে চঞ্চলতা,  
সজ্জলনীল-জলদ বরণ  
বসনখানি গায়ে ।  
তোমার তরে হবে গো ঠাই  
এস, এস নায়ে !

যাত্রী আছে নানা ।  
 নানা ঘাটে যাবে তা'রা  
 কেউ কারো নয় জানা !  
 তুমিও গো ক্ষণেকতরে  
 বস্বে আমার তরী পরে,  
 যাত্রা যখন ফুরিয়ে যাবে  
 মান্বে না মোর মানা ।  
 এলে যদি তুমিও এস,  
 যাত্রী আছে নানা ।

কোথা তোমার স্থান ?  
 কোন্ গোলাতে রাখতে যাবে  
 একটি আঁটি ধান ?  
 বল্তে যদি না চাও, তবে  
 শুনে আমার কি ফল হবে ;  
 ভাব্বে বসে' খেয়াল যখন  
 করব অবসান—  
 কোন্ পাড়াতে যাবে তুমি,  
 কোথা তোমার স্থান ?



## একগাঁয়ে

আমরা দুজন একটি গাঁয়ে থাকি  
সেই আমাদের একটিমাত্র সুখ ।  
তাদের গাছে গায় যে দোয়েল পাখী  
তাদের গানে আমার নাচে বুক ।  
তাহার দুটি পালন-করা ভেড়া  
চরে' বেড়ায় মোদের বট-মূলে,  
যদি ভাঙে আমার ক্ষেতের বেড়া,  
কোলের পরে নিই তাহারে তুলে ।

আমাদের এই গ্রামের নামটি খঞ্জনা,  
আমাদের এই নদীর নামটি অঞ্জনা,  
আমার নামত জানে গাঁয়ের পাঁচজনে,  
আমাদের সেই তাহার নামটি রঞ্জনা ।

দুইটি পাড়ায় বড়ই কাছাকাছি,  
মাঝে শুধু একটি মাঠের ফাঁক ।  
তাদের বনের অনেক মধুমাছি  
মোদের বনে বাঁধে মধুর চাক ।  
তাদের ঘাটে পূজার জবামালা  
ভেসে আসে মোদের বাঁধাঘাটে,  
তাদের পাড়ার কুসুম ফুলের ডালা  
বেহুতে আসে মোদের পাড়ার হাটে ।

আমাদের এই গ্রামের নামটি খঞ্জনা,  
আমাদের এই নদীর নামটি অঞ্জনা,  
আমার নামত জানে গাঁয়ের পাঁচজনে,  
আমাদের সেই তাহার নামটি রঞ্জনা ।

আমাদের এই গ্রামের গলি পরে  
আমের বোলে ভরে আমের বন ।  
তাদের ক্ষেতে যখন তিসি ধরে,  
মোদের ক্ষেতে তখন ফোটে শণ ।  
তাদের ছাদে যখন ওঠে তারা  
আমার ছাদে দখিণ হাওয়া ছোটে ।  
তাদের বনে ঝরে শ্রাবণ ধারা  
আমার বনে কদম ফুটে ওঠে ।

আমাদের এই গ্রামের নামটি খঞ্জনা,  
আমাদের এই নদীর নামটি অঞ্জনা,  
আমার নামত জানে গাঁয়ের পাঁচজনে,  
আমাদের সেই তাহার নামটি রঞ্জনা ।

## দুই তীরে

আমি ভালবাসি আমার  
নদীর বালুচর,  
শরৎকালে যে নির্জ্জনে  
চখাচখির ঘর ।

যেথায় ফুটে কাশ  
তটের চারি পাশ,  
শীতের দিনে বিদেশী সব  
হাঁসের বসবাস ।

কচ্ছপেরা ধীরে  
রৌদ্র পোহায় তীরে,  
দু'একখানি জেলের ডিঙি  
সন্ধ্যাবেলায় ভিড়ে ।

আমি ভালবাসি আমার  
নদীর বালুচর  
শরৎকালে যে নির্জ্জনে  
চখাচখির ঘর ।

তুমি ভালবাস তোমার  
ঐ ওপারের বন,  
যেথায় গাঁথা ঘনচ্ছায়া  
পাতার আচ্ছাদন।

যেথায় বাঁকা গলি  
নদীতে যায় চলি',  
দুইধারে তা'র বেণুবনের  
শাখায় গলাগলি।

সকাল সন্ধ্যাবেলা  
ঘাটে বধূর মেলা,  
ছেলের দলে ঘাটের জলে  
ভাসে, ভাসায় ভেলা।

তুমি ভালবাস তোমার  
ঐ ওপারের বন,  
যেথায় গাঁথা ঘনচ্ছায়া  
পাতার আচ্ছাদন।

তোমার আমার মাঝখানেতে  
একটি বহে নদী,  
দুই তটেরে একই গান সে  
শোনায় নিরবধি।

আমি শুনি, শুয়ে  
বিজন বালু ভুঁয়ে,  
তুমি শোন, কাঁথের কলস  
ঘাটের পরে থুয়ে।

তুমি তাহার গানে  
বোঝ একটা মনে,  
আমার কূলে আরেক অর্থ  
ঠেকে আমার কানে।

তোমার আমার মাঝখানেতে  
একটি বহে নদী,  
দুই তটেরে একই গান সে  
শোনায় নিরবধি।

---

## অতিথি

ঐ শোন গো অতিথু বুঝি আজ,  
এল আজ ।

ওগো বধু রাখ তোমার কাজ,  
রাখ কাজ ।

শুন্চ না কি তোমার গৃহদ্বারে  
রিনিঠিনি শিকলটি কে নাড়ে,  
এমন ভরা সাঁঝ ।

পায়ে পায়ে বাজিয়োনাক মল,  
ছুটোনাক চরণ চঞ্চল,  
হঠাৎ পাবে লাজ ।

ঐ শোন গো অতিথু এল আজ,  
এল আজ ।

ওগো বধু রাখ তোমার কাজ,  
রাখ কাজ ।

২

নয় গো কভু বাতাস এ নয় নয়,  
কভু নয় ।

ওগো বধু মিছে কিসের ভয়,  
মিছে ভয় ।

৩৩৭

## ক্ষণিকা

আঁধার কিছু নাইক আঁড়িনাতে,  
আজ্কে আকাশ ফাগুন-পূর্ণিমাতে  
আলোয় আলোময় ।  
না-হয় তুমি মাথার ঘোমটা টানি'  
হাতে নিয়ো ঘরের প্রদীপখানি,  
যদি শঙ্কা হয় ।

নয় গো কভু বাতাস এ নয় নয়,  
কভু নয় ।  
ওগো বধু মিছে কিসের ভয়,  
মিছে ভয় ।

৩

না-হয় কথা কোয়ো না তা'র সনে,  
পান্থ সনে ।  
দাঁড়িয়ে তুমি থেকো একটি কোণে,  
দুয়ার-কোণে ।

প্রশ্ন যদি শুধায় কোনো-কিছু  
নীরব থেকো মুখটি করে' নীচু  
নম্র দু-নয়নে ।  
কাঁকণ যেন বাঁধারে না হাতে,  
পথ দেখিয়ে আনবে যবে সাথে  
অতিথি সজ্জনে ।

না-হয় কথা কোয়ো না তা'র সনে,  
পান্থ সনে ।  
দাঁড়িয়ে তুমি থেকো একটি কোণে,  
দুয়ার-কোণে ।

৪

ওগো বধূ হয়নি তোমার কাজ ?  
গৃহ-কাজ ?  
ঐ শোন কে অতিথ্ এল আজ,  
এল আজ ।

সাজাওনি কি পূজারতির ডালা ?  
এখনো কি হয়নি প্রদীপ জ্বালা  
গোষ্ঠগৃহের মাঝ ?  
অতি যত্নে সীমন্তটি চিরে  
সিঁদুর-বিন্দু আঁক নাই কি শিরে ?  
হয়নি সন্ধ্যাসাজ ?

ওগো বধূ হয়নি তোমার কাজ ?  
গৃহ-কাজ ?  
ঐ শোন কে অতিথ্ এল আজ,  
এল আজ ।



## সম্বরণ

আজকে আমার বেড়া-দেওয়া-বাগানে,  
বাতাসটি বয় মনের-কথা-জাগানে ।

আজকে কেবল বউকথাকও ডাকে  
কুম্ভচূড়ার পুষ্প-পাগল সাথে,  
আমি আছি তরুর তলায় পা মেলি',  
সাম্নে অশোক টগর চাঁপা চামেলি ।

আজকে আমার বেড়া-দেওয়া-বাগানে,  
বাতাসটি বয় মনের-কথা-জাগানে ।

এম্নিতর বাতাস-বওয়া সকালে  
নিজেরে মন হাজারো বার ঠকালে ।

আপ্নারে হয় চিত-উদাস গানে  
উড়িয়ে দিলে অজানিতের পানে,  
চিরদিন যা ছিল নিজের দখলে  
দিয়ে দিলে পথের পান্থ সকলে ।

আজকে আমার বেড়া-দেওয়া-বাগানে,  
বাতাসটি বয় মনের-কথা-জাগানে ।

ভেবেছি তাই আজকে কিছুই গাব না ।

গানের সঙ্গে গলিয়ে প্রাণের ভাবনা ।

আপ্না ভুলে ওরে ভাবোন্মাদ,

দিস্নে ভেঙে তোর বেদনা বাঁধ,

মনের সঙ্গে মনের কথা গাঁথা সে ।

গাব না গান আজকে দখিণ বাতাসে ।

আজকে আমার বেড়া-দেওয়া-বাগানে

বাতাসটি বয় মনের-কথা-জাগানে ।

---

## বিরহ

তুমি যখন চলে' গেলে  
তখন দুই পহর ।

সূর্য্য তখন মাঝ গগনে  
রৌদ্র খরতর ।

ঘরের কস্ম সাজ করে'  
ছিলেম তখন একলা ঘরে,  
আপন মনে বসে' ছিলাম  
বাতায়নের পর ।

তুমি যখন চলে' গেলে  
তখন দুই পহর ।

২

চৈত্র মাসের নানা ক্ষেতের  
নানা গন্ধ নিয়ে,  
আসতেছিল তপ্ত হাওয়া  
মুক্ত দুয়ার দিয়ে ।

দুটি বুঝু সারাটা দিন  
ডাকতেছিল শ্রান্তি-বিহীন,

একটি ভ্রমর ফির্তেছিল  
 কেবল গুন্‌গুনিয়ে ।  
 চৈত্র মাসের নানা ক্ষেতের  
 নানা বার্তা নিয়ে ।

৩

তখন পথে লোক ছিল না,  
 ক্লান্ত কাতর গ্রাম ।  
 ঝাউ শাখাতে উঠতেছিল  
 শব্দ অবিশ্রাম ।  
 আমি শুধু একলা প্রাণে  
 অতি সুদূর বাঁশির তানে  
 গেঁথেছিলেম আকাশ ভরে’  
 একটি কাহার নাম ।  
 তখন পথে লোক ছিল না,  
 ক্লান্ত কাতর গ্রাম ।

ঘরে ঘরে দুয়ার দেওয়া,  
 আমি ছিলেম জেগে ।  
 আবাঁধা চুল উড়তেছিল  
 উদাস হাওয়া লেগে ।

তটতরুর ছায়ার তলে  
চেউ ছিল না নদীর জলে,  
তপ্ত আকাশ এলিয়ে ছিল  
শুভ্র অলস মেঘে ।  
ঘরে ঘরে দুয়ার দেওয়া,  
আমি ছিলাম জেগে ।

৫

তুমি যখন চলে' গেলে  
তখন দুই পহর ।  
শুষ্ক পথে দগ্ধ মাঠে  
রৌদ্র খরতর ।  
নিবিড়-ছায়া বটের শাখে  
কপোত দুটি কেবল ডাকে,  
একলা আমি বাতায়নে,  
শূণ্য শয়ন ঘর ।  
তুমি যখন গেলে তখন  
বেলা দুই পহর ।

## ক্ষণেক দেখা

চলেছিলে পাড়ার পথে  
কলস ল'য়ে কাঁখে,  
একটুখানি ফিরে কেন  
দেখলে ঘোমটা ফাঁকে ?  
ঐটুকু যে চাওয়া,  
দিল একটু হাওয়া  
কোথা তোমার ওপার থেকে  
আমার এপার পরে ।  
অতি দূরের দেখাদেখি  
অতি ক্ষণেক তরে ।

## ২

আমি শুধু দেখেছিলেম  
তোমার দুটি আঁখি ।  
ঘোমটা-ফাঁদা আঁধার মাঝে  
ব্রহ্ম দুটি পাখী ।  
তুমি এক নিমিখে  
চেয়ে আমার দিকে

পথের একটি পথিকেরে  
দেখলে কতখানি,  
একটুমাত্র কৌতূহলে  
একটি দৃষ্টি হানি' ?

৩

যেমন ঢাকা ছিলে তুমি  
তেমনি রৈলে ঢাকা ।  
তোমার কাছে যেমন ছিনু  
তেমনি রৈনু ফাঁকা  
তবে কিসের তরে  
থামলে লীলাভরে  
যেতে যেতে পাড়ার পথে  
কলস ল'য়ে কাঁথে ?  
একটুখানি ফিরে কেন  
দেখলে ঘোমটা-ফাঁকে ?

---

## অকালে

ভাঙা হাটে কে ছুটেছিন্

পসরা ল'য়ে ?

সন্ধ্যা হ'ল, ঐ যে বেলা

গেল রে ব'য়ে ।

যে-যার বোঝা মাথার পরে

ফিরে এল আপন ঘরে,

একাদশীর খণ্ড শশী

উঠল পল্লীশিরে ।

পারের গ্রামে যারা থাকে

উচ্চ কণ্ঠে নৌকা ডাকে,

হাহা করে প্রতিধ্বনি

নদীর তীরে তীরে ।

কিসের আশে উৰ্দ্ধশ্বাসে

এমন সময়ে

ভাঙা হাটে তুই ছুটেছিন্

পসরা ল'য়ে ?



## কণিকা

সুপ্তি দিল বনের শিরে  
হস্ত বুলায়ে,  
কা-কা ধ্বনি থেমে গেল  
কাকের কুলায়ে ।

বেড়ার ধারে পুকুর পাড়ে  
ঝিলি ডাকে ঝোপে ঝাড়ে,  
বাতাস ধীরে পড়ে' এল,  
সুতক বাঁশের শাখা ।  
হের ঘরের আঙিনাতে  
শ্রান্ত জনে শয়ন পাতে,  
সন্ধ্যাপ্রদীপ আলোক ঢালে  
বিরাম-সুখ-মাখা ।

সকল চেমটা শান্ত যখন  
এমন সময়ে  
ভাঙা হাতে কে ছুটেছি  
পসরা ল'য়ে ?

---

## আষাঢ়

নীল নবঘনে আষাঢ় গগনে  
তিল ঠাই আর নাহি রে ।  
ওগো আজ তোরা যাস্নে, ঘরের  
বাহিরে !  
বাদলের ধারা ঝরে ঝরঝর,  
আউষের ক্ষেত জলে ভর-ভর,  
কালিমাখা মেঘে ওপারে আঁধার  
ঘনিয়েছে, দেখ্ চাহি রে !  
ওগো আজ তোরা যাস্নে ঘরের  
বাহিরে !

২

ওই ডাকে শোন ধেনু ঘনঘন,  
ধবলীরে আন গোহালে ।  
এখনি আঁধার হবে, বেলাটুকু  
পোহালে ।  
ছুয়ারে দাঁড়ায়ে ওগো দেখ্ দেখি  
মাঠে গেছে যারা তা'রা ফিরিছে কি ?

## কণিকা

রাখাল বালক কি জানি কোথায়  
সারা দিন আজি খোয়ালে ।  
এখনি আঁধার হবে, বেলাটুকু  
পোহালে ।

৩

শোন শোন ওই পারে যাবে বলে’  
কে ডাকিছে বুঝি মাঝারে ?  
খেয়া-পারাপার বন্ধ হয়েছে  
আজি রে ।  
পূবে হাওয়া বয়, কূলে নেই কেউ,  
ছুকূল বাহিয়া উঠে পড়ে ঢেউ,  
দরদরবেগে জলে পড়ি জল  
ছলছল উঠে বাজি রে ।  
খেয়া-পারাপার বন্ধ হয়েছে  
আজি রে ।

৪

ওগো আজ তোরা যাস্নে গো তোরা  
যাস্নে ঘরের বাহিরে ।  
আকাশ আঁধার, বেলা বেশী আর  
নাহি রে ।

ঝরঝরধারে ভিজিবে নিচোল,  
ঘাটে যেতে পথ হয়েছে পিছল,  
ওই বেণুবন ছলে ঘনঘন  
পথপাশে দেখে চাহি রে ।  
ওগো আজ তোরা যাস্নে ঘরের  
বাহিরে ।

---

## দুই বোন

দুটি বোন তা'রা হেসে যায় কেন

যায় যবে জল আন্তে ?

দেখেছে কি তা'রা পথিক কোথায়

দাঁড়িয়ে পথের প্রান্তে ?

ছায়ায় নিবিড় বনে

যে আছে আঁধার কোণে

তা'রে যে কখন কটাক্ষে চায়

কিছু ত পারিনে জানতে ।

দুটি বোন তা'রা হেসে যায় কেন

যায় যবে জল আন্তে ?

দুটি বোন তা'রা করে কানাকানি

কি না জানি জল্পনা ।

গুঞ্জনধ্বনি দূর হ'তে শুনি,

কি গোপন মন্ত্রণা ?

আসে যবে এইখানে

চায় দৌঁছে দৌঁহাপানে,

কাহারো মনের কোনো কথা তা'রা

করেছে কি কল্পনা ?

দুটি বোন তা'রা করে কানাকানি

কি না জানি জল্পনা ।

এইখানে এসে ঘট হ'তে কেন

জল উঠে উচ্ছলি ?

চপল চক্ষে তরল তারকা

কেন উঠে উজ্জলি ?

যেতে যেতে নদীপথে

জেনেছে কি কোনোমতে

কাছে কোথা এক আকুল হৃদয়

দুলে উঠে চঞ্চলি ?

এইখানে এসে ঘট হ'তে জল

কেন উঠে উচ্ছলি ?

দুটি বোন তা'রা হেসে যায় কেন

যায় যবে জল আনতে ?

বটের ছায়ায় কেহ কি তাদের

পড়েছে চোখের প্রান্তে ?

কৌতুকে কেন ধায়

সচকিত দ্রুত পায় ?

কলসে কাঁকণ ঝলকি ঝলকি

ভোলায় রে দিক্‌প্রান্তে ।

দুটি বোন তা'রা হেসে যায় কেন

যায় যবে জল আনতে ?

## নববর্ষ।

হৃদয় আমার নাচেরে আজিকে  
ময়ূরের মত নাচেরে  
হৃদয় নাচেরে ।

শত বরণের ভাব-উচ্ছ্বাস  
কলাপের মত করেছে বিকাশ ;  
আকুল পরাণ আকাশে চাহিয়া  
উল্লাসে করে যাচেরে ।  
হৃদয় আমার নাচেরে আজিকে  
ময়ূরের মত নাচেরে ।

গুরু গুরু মেঘ গুমরি গুমরি  
গরজে গগনে গগনে  
গরজে গগনে ।

ধেয়ে চলে' আসে বাদলের ধারা,  
নবীন ধাতু ছলে ছলে সারা,  
কুলায়ে কাঁপিছে কাতর কপোত,  
দাছুরি ডাকিছে সঘনে ।

গুরু গুরু মেঘ গুমরি গুমরি  
গরজে গগনে গগনে ।

নয়নে আমার সজল মেঘের

নীল অঞ্জলি লেগেছে

নয়নে লেগেছে ।

নব তৃণদলে ঘনবনছায়ে,

হরষ আমার দিয়েছি বিছায়ে,

পুলকিত নীপ-নিকুঞ্জে আজি

বিকশিত প্রাণ জেগেছে ।

নয়নে সজল স্নিগ্ধ মেঘের

নীল অঞ্জলি লেগেছে ।

ওগো প্রাসাদের শিখরে আজিকে

কে দিয়েছে কেশ এলায়ে

কবরী এলায়ে ?

ওগো নবঘন-নীলবাসখানি

বুকের উপরে কে লয়েছে টানি' ?

তড়িৎ-শিখার চকিত আলোকে

ওগো কে ফিরিছে খেলায়ে ?

ওগো প্রাসাদের শিখরে আজিকে

কে দিয়েছে কেশ এলায়ে ?

ওগো নদীকূলে তীর-তৃণতলে

কে বসে' অমল বসনে

শ্যামল বসনে ?



## ক্ষণিকা

সুদূর গগনে কাহারে সে চায় ?  
ঘাট ছেড়ে ঘট কোথা ভেসে যায় ?  
নবমালতীর কচি দলগুলি  
আনমনে কাটে দশনে ।  
ওগো নদীকূলে তীর-তৃণতলে  
কে বসে' শ্যামল বসনে ?

ওগো নির্জ্জনে বকুল শাখায়  
দোলায় কে আজি ছুলিছে  
দোতুল ছুলিছে ?  
ঝরকে ঝরকে ঝরিছে বকুল,  
আঁচল আকাশে হতেছে আকুল,  
উড়িয়া অলক ঢাকিছে পলক  
কবরী খসিয়া খুলিছে ।  
ওগো নির্জ্জনে বকুল শাখায়  
দোলায় কে আজি ছুলিছে ?

বিকচ-কেতকী তটভূমি পরে  
কে বেঁধেছে তা'র তরণী  
তরুণ তরণী ?  
রাশি রাশি তুলি' শৈবালদল  
ভরিয়া লয়েছে লোল অঞ্চল,

বাদল-রাগিণী সজল নয়নে

গাহিছে পরাণ-হরণী ।

বিকচ-কেতকী তটভূমি পরে

বেঁধেছে তরুণ তরণী ।

হৃদয় আমার নাচেছে আজিকে

ময়ূরের মত নাচেছে

হৃদয় নাচেছে ।

ঝরে ঘনধারা নবপল্লবে,

কাঁপিছে কানন ঝিল্লির রবে,

তীর ছাপি' নদী কল-কল্লোলে

এল পল্লীর কাছেরে ।

হৃদয় আমার নাচেছে আজিকে

ময়ূরের মত নাচেছে ।

## দুদিন

এতদিন পরে প্রভাতে এসেছ  
কি জানি কি ভাবি' মনে ।  
ঝড় হ'য়ে গেছে কাল রজনীতে  
রজনীগন্ধার বনে ।  
কাননের পথ ভেসে গেছে জলে,  
বেড়াগুলি ভেঙে পড়েছে ভূতলে,  
নব ফুটন্ত ফুলের দণ্ড  
লুটায় ত্বণের সনে ।  
এতদিন পরে তুমি যে এসেছ  
কি জানি কি ভাবি' মনে ।

২

হের গো আজিও প্রভাত-অরুণ  
মেঘের আড়ালে হারা ।  
রহি রহি আজো ঘনায়ে ঘনায়ে  
ঝরিছে বাদল ধারা ।  
মাতাল বাতাস আজো থাকি' থাকি'  
চেতিয়া চেতিয়া উঠে ডাকি' ডাকি',

জড়িত পাখায় সিন্ধু শাখায়  
 দোয়েল দেয় না সাড়া ।  
 আজিও আঁধার প্রভাতে অরুণ  
 মেঘের আড়ালে হারা ।

৩

এ ভরা বাদলে আর্দ্র আঁচলে  
 একেলা এসেছ আজি,  
 এনেছ বহিয়া রিন্ধু তোমার  
 পূজার ফুলের সাজি ।  
 এত মধুমাস গেছে বারবার,  
 ফুলের অভাব ঘটেনি তোমার  
 বন আলো করি' ফুটেছিল যবে  
 রজনীগন্ধারাজি ।

এ ভরা বাদলে আর্দ্র আঁচলে  
 একেলা এসেছ আজি ।

৪

আজি তরুতলে দাঁড়ায়েছে জল,  
 কোথা বসিবার ঠাই ?  
 কাল যাহা ছিল সে ছায়া সে আলো  
 সে গন্ধগান নাই ।

## কণিকা

তবু ক্ষণকাল রহ স্বরাহীন,  
ছিন্ন কুসুম পঙ্কে মলিন  
ভূতল হইতে যতনে তুলিয়া  
ধুয়ে ধুয়ে দিব তাই ।  
আজি তরুতলে দাঁড়ায়েছে জল,  
কোথা বসিবার ঠাই ?

৫

এতদিন পরে তুমি যে এসেছ  
কি জানি কি ভাবি' মনে ।  
প্রভাত আজিকে অরুণবিহীন  
কুসুম লুটায় বনে ।  
যাহা আছে লও প্রসন্ন করে,  
ও সাজি তোমার ভরে কি না ভরে,  
ঐ যে আবার নামে বারিধার  
ঝরঝর বরষণে ।  
এতদিন পরে তুমি যে এসেছ  
কি জানি কি ভাবি' মনে ।

---

## অবিনয়

হে নিরুপমা,  
চপলতা আজ যদি কিছু ঘটে  
করিয়ো ক্ষমা ।  
এল আষাঢ়ের প্রথম দিবস,  
বনরাজি আজি ব্যাকুল বিবশ,  
বকুল বীথিকা মুকুলে মত্ত  
কানন পরে ;  
নব কদম্ব মদিরগন্ধে  
আকুল করে ।

হে নিরুপমা,  
আঁখি যদি আজ করে অপরাধ,  
করিয়ো ক্ষমা ।  
হের আকাশের দূর কোণে কোণে  
বিজুলি চমকি' ওঠে খণে খণে,  
বাতায়নে তব দ্রুত কৌতুকে  
মারিছে উঁকি ।  
বাতাস করিছে দুরন্তপনা  
ঘরেতে ঢুকি' ।

## ক্ষণিকা

হে নিরুপমা,  
গানে যদি লাগে বিহ্বল তান  
করিয়ো ক্ষমা ।  
ঝরঝর ধারা আজি উতরোল,  
নর্দা কূলে কূলে উঠে কল্লোল,  
বনে বনে গাহে মর্ম্মর স্বরে  
নবীন পাতা ;  
সজল পবন দিশে দিশে তুলে  
বাদল গাথা ।

হে নিরুপমা,  
আজিকে আচারে ক্রটি হ'তে পারে,  
করিয়ো ক্ষমা ।  
দিবালোকহারা সংসারে আজ  
কোনোখানে কারো নাই কোনো কাজ,  
জনহীন পথ ধেনুহীন মাঠ  
যেন সে আঁকা ।  
বর্ষণ-ঘন শীতল আঁধারে  
জগৎ ঢাকা ।

হে নিরুপমা,  
চপলতা আজি যদি ঘটে তবে  
করিয়ো ক্ষমা ।

তোমার ছু'খানি কালো আঁখি পরে  
শ্যাম আষাঢ়ের ছায়াখানি পড়ে,  
ঘনকালো তব কুণ্ডিত কেশে  
যুথীর মালা ।  
তোমারি ললাটে নববরষার  
বরণডালা ।

---



## কৃষ্ণকলি

কৃষ্ণকলি আমি তা'রেই বলি,  
কালো তা'রে বলে গাঁয়ের লোক ।  
মেঘলা দিনে দেখেছিলেম মাঠে  
কালো মেয়ের কালো হরিণ-চোখ ।  
ঘোমটা মাথায় ছিল না তা'র মোটে,  
মুক্তবেণী পিঠের পরে লোটে ।  
কালো ? তা' সে যতই কালো হোক  
দেখেছি তা'র কালো হরিণ-চোখ ।

ঘন মেঘে আঁধার হ'ল দেখে'  
ডাক্তেছিল শ্যামল দুটি গাই,  
শ্যামা মেয়ে ব্যস্ত ব্যাকুল পদে  
কুটীর হ'তে ত্রস্ত এল তাই ।  
আকাশপানে হানি' যুগল ভুরু  
শুনলে বারেক মেঘের গুরু গুরু ।  
কালো ? তা' সে যতই কালো হোক  
দেখেছি তা'র কালো হরিণ-চোখ !

পূবে বাতাস এল হঠাৎ ধেয়ে,  
 ধানের ক্ষেতে খেলিয়ে গেল ঢেউ ।  
 আ'লের ধারে দাঁড়িয়েছিলেম একা,  
 মাঠের মাঝে আর ছিল না কেউ ।  
 আমার পানে দেখলে কিনা চেয়ে  
 আমিই জানি আর জানে সে মেয়ে ।  
 কালো ? তা' সে যতই কালো হোক  
 দেখেছি তা'র কালো হরিণ-চোখ !

এমনি করে' কালো কাজল মেঘ  
 জ্যৈষ্ঠ মাসে আসে ঈশান কোণে  
 এমনি করে' কালো কোমল ছায়া  
 আষাঢ় মাসে নামে তমাল বনে ।  
 এমনি করে' শ্রাবণ রজনীতে  
 হঠাৎ খুসি ঘনিয়ে আসে চিতে ।  
 কালো ? তা' সে যতই কালো হোক  
 দেখেছি তা'র কালো হরিণ-চোখ ।

কৃষ্ণকলি আমি তারেই বলি,  
 আর যা বলে বলুক অন্য লোক ।  
 দেখেছিলেম ময়নাপাড়ার মাঠে  
 কালো মেয়ের কালো হরিণ-চোখ ।

## ঋণিকা

মাথার পরে দেয়নি তুলে বাস,  
লজ্জা পাবার পায়নি অবকাশ ।  
কালো ? তা' সে যতই কালো হোক  
দেখেছি তা'র কালো হরিণ চোখ ।

---

## ভৎসনা

মিথ্যা আমায় কেন সরম দিলে  
চোখের চাওয়া নীরব তিরস্কারে ?  
আমি তোমার পাড়ার প্রান্ত দিয়ে  
চলেছিলাম আপন গৃহদ্বারে ।  
যেথা আমার বাঁধা ঘাটের কাছে  
ছুটি চাঁপায় ছায়া করে' আছে,  
জামের শাখা ফলে আঁধার করা  
স্বচ্ছগভীর পদ্মদাঘির ধারে ।  
তুমি আমায় কেন সরম দিলে  
চোখের চাওয়া নীরব তিরস্কারে ?

২

আজ্ঞ ত আমি মাটির পানে চেয়ে  
দীনবেশে যাইনি তোমার ঘরে ।  
অতিথু হ'য়ে দিইনি দ্বারে সাড়া,  
ভিক্ষাপাত্র নিইনি কাতর-করে ।  
আমি আমার পথে যেতে যেতে  
তোমার ঘরের দ্বারের বাহিরেতে  
ঘনশ্যামল তমাল তরুমূলে  
দাঁড়িয়েছি এই দণ্ড দুয়ের তরে ।

নতশিরে দু'খানি হাত জুড়ি'  
দীনবেশে যাইনি তোমার ঘরে ।

৩

আমি তোমার ফুল্ল পুষ্পবনে  
তুলি নাই ত যুথীর একটি দল ।  
আমি তোমার ফলের শাখা হ'তে  
ক্ষুধাভরে ছিঁড়ি নাই ত ফল !  
আছি শুধু পথের প্রান্তদেশে,  
দাঁড়ায় যেথা সকল পান্থ এসে,  
নিয়েছি এই শুধু গাছের ছায়া  
পেয়েছি এই তরুণ তৃণতল ।  
আমি তোমার ফুল্ল পুষ্পবনে  
তুলি নাই ত যুথীর একটি দল ।

৪

শ্রান্ত বটে আছে চরণ মম,  
পথের পঙ্ক লেগেছে দুই পায় ।  
আষাঢ় মেঘে হঠাৎ এল ধারা  
আকাশ-ভাঙা বিপুল বরষায় ।  
ঝোড়ো হাওয়ার এলোমেলো তালে  
উঠল নৃত্য বাঁশের ডালে ডালে,

ছুটল বেগে ঘন মেঘের শ্রেণী  
 ভয়রণে ছিন্ন কেতুর প্রায় ।  
 শ্রান্ত বটে আছে চরণ মম,  
 পথের পক্ষ লেগেছে দুই পায় ।

৫

কেমন করে' জান্ব মনে আমি  
 কি যে আমায় ভাব্লে মনে মনে ?  
 কাহার লাগি' একলা ছিলে বসে'  
 মুক্তকেশে আপন বাতায়নে ?  
 তড়িৎশিখা ক্ষণিকদীপ্তালোকে  
 হান্‌তেছিল চমক্ তোমার চোখে,  
 জান্ত কেবা দেখ্‌তে পাবে তুমি  
 আছি আমি কোথায় যে কোন কোণে ।  
 কেমন করে' জান্ব মনে আমি  
 আমায় কি যে ভাব্লে মনে মনে ?

৬

বুঝি গো দিন ফুরিয়ে গেল আজি,  
 এখনো মেঘ আছে আকাশ ভরে' ।  
 থেমে এল বাতাস বেণুবনে,  
 মাঠের পরে বৃষ্টি এল ধরে' ।

৩৬৯

তোমার ছায়া দিলেম তবে ছাড়ি',  
লও গো তোমার ভূমি-আসন কাড়ি',  
সন্ধ্যা হ'ল, দুয়ার কর রোধ,  
যাব আমি আপন পথপরে ।  
বুঝি গো দিন ফুরিয়ে গেল আজি,  
এখনো মেঘ আছে আকাশ ভরে' ।

৭

মিথ্যা আমায় কেন সরম দিলে  
চোখের চাওয়া নীরব তিরস্কারে ?  
আছে আমার নতুন-ছাওয়াঘর  
পাড়ার পরে পদ্মদীঘির ধারে ।  
কুটারতলে দিবস হ'লে গত  
জ্বলে প্রদীপ ধ্রুবতারার মত,  
আমি কারো চাইনে কোনো দান  
কাঙাল বেশে কোনো ঘরের দ্বারে ।  
মিথ্যা আমায় কেন সরম দিলে  
চোখের চাওয়া নীরব তিরস্কারে ?

---

## সুখদুঃখ

বসেছে আজ রথের তলায়  
স্নানযাত্রার মেলা ।  
সকাল থেকে বাদল হ'ল  
ফুরিয়ে এল বেলা ।  
আজকে দিনের মেলামেশা,  
যত খুসি, যতই নেশা  
সবার চেয়ে আনন্দময়  
ঐ মেয়েটির হাসি ।  
এক পয়সায় কিনেছে ও  
তালপাতার এক বাঁশি ।  
বাজে বাঁশি, পাতার বাঁশি  
আনন্দস্বরে ।  
হাজার লোকের হর্ষধ্বনি  
সবার উপরে ।

ঠাকুরবাড়ি ঠেলাঠেলি  
লোকের নাহি শেষ ।  
অবিশ্রান্ত বৃষ্টি ধারায়  
ভেসে যায়রে দেশ ।



## ক্ষণিকা

আজকে দিনের দুঃখ যত  
নাইরে দুঃখ উহার মত,  
ঐ যে ছেলে কাতর চোখে  
দোকান পানে চাহি ;  
একটি রাঙা লাঠি কিন্বে  
একটি পয়সা নাহি ।  
চেয়ে আছে নিমেষহারা  
নয়ন অরুণ ।  
হাজার লোকের মেলাটিরে  
করেছে করুণ ।

---

## খেলা

মনে পড়ে সেই আষাঢ়ে  
ছেলেবেলা,  
নালার জলে ভাসিয়েছিলাম  
পাতার ভেলা ।  
বৃষ্টি পড়ে দিবসরাতি,  
ছিল না কেউ খেলার সাথী,  
একলা বসে' পেতেছিলাম  
সাদের খেলা ।  
নালার জলে ভাসিয়েছিলাম  
পাতার ভেলা ।

হঠাৎ হ'ল দ্বিগুণ আঁধার  
ঝড়ের মেঘে,  
হঠাৎ বৃষ্টি নামল কখন  
দ্বিগুণ বেগে ।  
ঘোলা জলের স্রোতের ধারা  
ছুটে এল পাগলপারা,

## কণিকা

পাতার ভেলা ডুবল নালার  
তুফান লেগে ।  
হঠাৎ বৃষ্টি নামল যখন  
দ্বিগুণ বেগে ।

সেদিন আমি ভেবেছিলাম  
মনে মনে,  
হত বিধির যত বিবাদ  
আমার সনে ।  
ঝড় এল যে আচম্বিতে  
পাতার ভেলা ডুবিয়ে দিতে,  
আর কিছু তা'র ছিল না কাজ  
ত্রিভুবনে ।  
হত বিধির যত বিবাদ  
আমার সনে ।

আজ আশাড়ে একলা ঘরে  
কাটল বেলা,  
ভাবতেছিলাম এতদিনের  
নানান্ খেলা ।  
ভাগ্যপরে করিয়া রোষ  
দিতেছিলাম বিধিরে দোষ,

পড়ল মনে নালার জলে  
পাতার ভেলা ।  
ভাবতেছিলেম এতদিনের  
নানান খেলা ।

---

## কুতার্থ

এখনো ভাঙেনি ভাঙেনি মেলা,  
নদীর তীরের মেলা ।  
এ শুধু আষাঢ়-মেঘের আঁধার,  
এখনো রয়েছে বেলা ।  
ভেবেছিছু দিন মিছে গোড়ালেম,  
যাহা ছিল বুঝি সব খোয়ালেম,  
আছে আছে তবু আছে ভাই, কিছু  
রয়েছে বাকি ।  
আমারো ভাগ্যে আজ ঘটে নাই  
কেবলি ফাঁকি ।

২

বেচিবাব যাহা বেচা হ'য়ে গেছে  
কিনিবার যাহা কেনা ;  
আমি ত চুকিয়ে দিয়েছি নিয়েছি  
সকল পাওনা দেনা ।  
দিন না ফুরাতে ফিরিব এখন ;  
প্রহরী চাহিছ পসরার পণ ?

ভয় নাই ওগো আছে আছে, কিছু  
রয়েছে বাকি ।  
আমারো ভাগ্যে ঘটেনি ঘটেনি  
কেবলি ফাঁকি ।

৩

কখন বাতাস মাতিয়া আবার  
মাথায় আকাশ ভাঙে ।  
কখন সহসা নামিবে বাদল  
তুফান উঠিবে গাঙে ।  
তাই ছুটাছুটি চলিয়াছি ধেয়ে ;  
পারানীর কড়ি চাহ তুমি নেয়ে ?  
কিসের ভাবনা, আছে আছে, কিছু  
রয়েছে বাকি ।  
আমারো ভাগ্যে ঘটেনি ঘটেনি  
কেবলি ফাঁকি ।

৪

ধানক্ষেত বেয়ে বাঁকা পথখানি  
গিয়েছে গ্রামের পারে ।  
বৃষ্টি আসিতে দাঁড়িয়েছিলাম  
নিরالا কুটীর-দ্বারে ।

## কণিকা

থাগিল বাদল, চলিলু এবার ;  
হে দোকানী চাও মূলা তোমার ?  
ভয় নাই ভাই আছে আছে, কিছু  
রয়েছে বাকি ।

আমারো ভাগো ঘটেনি ঘটেনি  
কেবলি ফাঁক ।

৫

পথের প্রান্তে বটের তলায়  
বসে' আছ এইখানে,—  
হায় গো ভিখারী চাহিছ কাতরে  
আমারো মুখের পানে !  
ভাবিতেছ মনে বেচাকেনা সেরে  
কত লাভ করে' চলিয়াছে কে রে !  
আছে আছে বটে আছে ভাই, কিছু  
রয়েছে বাকি ।

আমারো ভাগ্যে ঘটেনি ঘটেনি  
সকলি ফাঁকি ।

৬

আঁধার রজনী, বিজন এ পথ,  
জোনাকি চমকে গাছে ।

কে তুমি আমার সঙ্গ ধরেছ  
নীরবে চলেছ পাছে ?  
এ ক'টি কড়ির মিছে ভার বওয়া,  
তোমাদের প্রথা কেড়েকুড়ে লওয়া ;  
হবে না নিরাশ, আছে আছে, কিছু  
রয়েছে বাকি ।  
আমারো ভাগ্যে ঘটেনি ঘটেনি  
কেবলি ফাঁকি ।

৭

নিশি দু'পহর পঁহুছিছু ঘর  
দু'হাত রিল্প করি' ।  
তুমি আছ একা সজল নয়নে  
দাঁড়ায়ে দুয়ার ধরি' ।  
চোখে ঘুম নাই, কথা নাই মুখে,  
ভীত পাখী সম এলে মোর বুক ;  
আছে আছে, বিধি, এখনো অনেক  
রয়েছে বাকি ।  
আমারো ভাগ্যে ঘটেনি ঘটেনি  
সকলি ফাঁকি ।



## স্থায়ী-অস্থায়ী

তুলেছিলেম কুসুম তোমার  
হে সংসার, হে লতা,  
পরতে মালা বিঁধল কাঁটা  
বাজল বুকে ব্যথা ।  
হে সংসার, হে লতা !  
বেলা যখন পড়ে' এল  
আঁধার এল ছেয়ে,  
দেখি তখন চেয়ে  
তোমার গোলাপ গেছে, আছে  
আমার বুকের ব্যথা ।  
হে সংসার, হে লতা !

আরো তোমার অনেক কুসুম  
ফুটবে যথা-তথা,  
অনেক গন্ধ অনেক মধু  
অনেক কোমলতা ।  
সে সংসার, হে লতা !

সে ফুল তোলার সময় ত আর  
নাহি আমার হাতে ।  
আজকে আঁধার রাতে  
আমার গোলাপ গেছে, কেবল  
আছে বুকের ব্যথা ।  
হে সংসার, হে লতা !

---

## উদাসীন

হাল ছেড়ে আজ বসে' আছি আমি,  
ছুটিনে কাহারো পিছুতে,  
মন নাহি মোর কিছুতেই, নাই  
কিছুতে ।

নির্ভয়ে ধাই স্যোগ-কুযোগ বিছুরি',  
খেয়াল-খবর রাখিনে ত কোনো-কিছুরি,  
উপরে চড়িতে যদি নাই পাই সুবিধা  
সুখে পড়ে' থাকি নীচুতেই, থাকি  
নীচুতে ।

হাল ছেড়ে আজ বসে' আছি আমি  
ছুটিনে কাহারো পিছুতে,  
মন নাহি মোর কিছুতেই, নাই  
কিছুতে ।

২

যেথা-সেথা ধাই, যাহা-তাহা পাই  
ছাড়িনেক ভাই ছাড়িনে ।  
তাই বলে' কিছু তাড়াতাড়ি করে'  
কাড়িনে ।

যাহা যেতে চায় ছেড়ে দিই তা'রে তখুনি,  
বকিনে কারেও শুনিতে কাহারো বকুনি,  
কথা যত আছে মনের তলায় তলিয়ে  
ভুলেও কখনো সহসা তাদের  
নাড়িনে ।

যেথা-সেথা ধাই, যাহা-তাহা পাই  
ছাড়িনেক ভাই ছাড়িনে ।  
তাই বলে' কিছু তাড়াতাড়ি করে'  
কাড়িনে ।

৩

মন-দেয়া-নেয়া অনেক করেছি,  
মরেছি হাজার মরণে,  
নূপুরের মত বেজেছি চরণে-  
চরণে ।

আঘাত করিয়া ফিরেছি দুয়ারে দুয়ারে,  
সাধিয়া মরেছি ঠাঁহারে তাঁহারে উঁহারে,  
অশ্রু গাঁথিয়া রচিয়াছি কত মালিকা,  
রাঙিয়াছি তাহা হৃদয়-শোণিত-  
বরণে ।

মন-দেয়া-নেয়া অনেক করেছি,  
মরেছি হাজার মরণে,  
নৃপূরের মত বেজেছি চরণে-  
চরণে ।

৪

এতদিন পরে ছুটি আজ ছুটি  
মন ফেলে তাই ছুটেছি ।  
তাড়াতাড়ি করে' খেলাঘরে এসে  
জুটেছি ।

বুক-ভাঙা বোঝা নেব' নারে আর তুলিয়া,  
ভুলিবার যাহা একেবারে যাব তুলিয়া,  
যাঁর বেড়ি তাঁরে ভাঙা বেড়িগুলি ফিরায়ে  
বহুদিন পরে মাথা তুলে আজ  
উঠেছি ।

এতদিন পরে ছুটি আজ ছুটি  
মন ফেলে' তাই ছুটেছি ।  
তাড়াতাড়ি করে' খেলাঘরে এসে  
জুটেছি ।

৫

কত ফুল নিয়ে আসে বসন্ত  
 আগে পড়িত না নয়নে,—  
 তখন কেবল ব্যস্ত ছিলাম  
 চয়নে ।

মধুকর-সম ছিন্ম সঞ্চয়-প্রয়াসী,  
 কুসুম-কান্তি দেখি নাই, মধু-পিয়াসী,  
 বকুল কেবল দলিত করেছি আলসে,  
 ছিলাম যখন নিলীন বকুল-  
 শয়নে ।

কত ফুল নিয়ে আসে বসন্ত  
 আগে পড়িত না নয়নে,—  
 তখন কেবল ব্যস্ত ছিলাম  
 চয়নে ।

৬

দূরে দূরে আজ ভ্রমিতেছি আমি  
 মন নাহি মোর কিছুতে,  
 তাই ত্রিভুবন ফিরিছে আমারি  
 পিছুতে ।

সবলে কারেও ধরিনে বাসনা-মুঠিতে,  
দিয়েছি সবারে আপন বস্তু ফুটিতে ;  
যখন ছেড়েছি উচ্ছে উঠার দুরাশা  
হাতের নাগালে পেয়েছি সবারে  
নীচুতে ।

দূরে দূরে আজি ভ্রমিতেছি আমি  
মন নাহি মোর কিছুতে  
তাই ত্রিভুবন ফিরিছে আমারি  
পিছুতে ।

---

## যৌবন-বিদায়

ওগো যৌবন-তরী  
এবার বোঝাই সাজ করে', দিলেম বিদায় করি' ।  
কতই খেয়া, কতই খেয়াল,  
কতই না দাঁড়-বাওয়া,  
তোমার পালে লেগেছিল  
কত দখিন হাওয়া ।  
কত ঢেউয়ের টল্‌মলানি,  
কত শ্রোতের টান,  
পূর্ণিমাতে সাগর হ'তে  
কত পাগল বান ।  
এপার হ'তে ওপার ছেয়ে  
ঘন মেঘের সারি,  
শ্রাবণ দিনে ভরা গাঙে  
দু'কূল-হারা পাড়ি ।  
অনেক খেলা অনেক মেলা,  
সকলি শেষ করে'  
চল্লিশেরি ঘাটের থেকে—  
বিদায় দিমু তোরে ।



## ক্ষণিকা

ওগো তরুণ তরী,  
যৌবনেরি শেষ ক'টি গান দিনু বোঝাই করি'।  
সে সব দিনের কান্না হাসি,  
সত্য মিথ্যা ফাঁকি,  
নিঃশেষিয়ে যাস্নরে নিয়ে  
রাখিস্নে আর বাকি।  
নোঙর দিয়ে বাঁধিস্নে আর,  
চাহিস্নে আর পাছে,  
ফিরে ফিরে ঘুরিস্নে আর  
ঘাটের কাছে কাছে।  
এখন হ'তে ভাঁটার স্রোতে  
ছিন্ন পালটি তুলে,  
ভেসে যা' রে স্বপ্ন সমান  
অস্তাচলের কূলে।  
সেথায় সোনা-মেঘের ঘাটে  
নামিয়ে দিয়ো শেষে  
বহু দিনের বোঝা তোমার—  
চির-নিদ্রার দেশে।

ওরে আমার তরী,  
পারে যাবার উঠল হাওয়া ছোট্টরে স্বরা করি'।

যে দিন খেয়া ধরেছিলেম  
 ছায়া বটের ধারে,  
 ভোরের সুরে ডেকেছিলেম  
 কে যাবি আয় পারে।—  
 ভেবেছিলেম ঘাটে ঘাটে  
 করতে আনাগোনা  
 এমন চরণ পড়বে নায়ে  
 নৌকা হ'বে সোনা।  
 এতবারের পারাপারে—  
 এত লোকের ভিড়ে  
 সোনা-করা দু'টি চরণ  
 দেয়নি পরশ কি রে ?  
 যদি চরণ পড়ে' থাকে  
 কোনো একটি বারে—  
 যা'রে সোনার জন্ম নিয়ে—  
 সোনার মৃত্যু পারে।

---

## শেষ হিসাব

সন্ধ্যা হ'য়ে এল, এবার

সময় হ'ল হিসাব নেবার ।

যে দেবতারে গড়েছিলেম,

দ্বারে যাঁদের পড়েছিলেম,

আয়োজনটা করেছিলেম

জীবন দিয়ে চরণ-সেবার,

তাদের মধ্যে আজ সায়াহ্নে

কেবা আছেন এবং কে নেই,

কেই বা বাকি, কেই বা ফাঁকি,

ছুটি নেব' সেইটে জেনেই ।

২

নাই বা জানুলি হায়রে মূর্থ !

কি হবে তোর হিসাব সূক্ষ্ম !

সন্ধ্যা এল, দোকান তোল,

পারের নৌকা তৈরি হ'ল,

যত পার ততই ভোল

বিফল স্মৃতির বিরাট দুঃখ ।

জীবনখানা খুলে তোমার  
শূন্য দেখি শেষের পাতা ;  
কি হবে ভাই হিসেব নিয়ে,  
তোমার নয়ক লাভের খাতা ।

৩

আপ্নি আঁধার ডাক্চে তোরে,  
ঢাক্চে তোমায় দয়া করে' ।  
তুমি তবে কেনই জ্বাল  
মিটমিটে ওই দীপের আলো,  
চক্ষু মুদে থাকাই ভালো  
শ্রান্ত, পথের প্রান্তে পড়ে' !  
জানাজানির সময় গেছে,  
বোঝাপড়া কর্বে বন্ধ ।  
অন্ধকারের স্নিগ্ধ কোলে  
থাক্বে হ'য়ে বধির অন্ধ

৪

যদি তোমায় কেউ না রাখে,  
সবাই যদি ছেড়েই থাকে,—

## কণিকা

জনশূন্য বিশাল ভবে  
একলা এসে দাঁড়াও তবে,  
তোমার বিশ্ব উদার রবে  
হাজার সুরে তোমায় ডাকে ।  
আঁধার রাতে নির্ণিমেষে  
দেখতে দেখতে যাবে দেখা,  
তুমি একা জগৎ মাঝে,  
প্রাণের মাঝে আরেক একা ।

৫

ফুলের দিনে যে মঞ্জুরী,  
ফলের দিনে যাক্ সে ঝরি' ।  
মরিস্নে আর মিথো ভেবে,  
বসন্তেরি অন্তে এবে  
যারা যারা বিদায় নেবে  
একে একে যাক্‌রে সরি' ।  
হোক রে তিল্ল মধুর কণ্ঠ,  
হোক রে রিল্ল কল্ললতা ।  
তোমার থাকুক্‌ পরিপূর্ণ  
একলা থাকার-সার্থকতা ।

## শেষ

থাক্ব না ভাই থাক্ব না কেউ,

থাক্বে না ভাই কিছু ।

সেই আনন্দে যাওরে চলে’

কালের পিছু পিছু ।

অধিক দিন ত বইতে হয় না

শুধু একটি প্রাণ ।

অনন্ত কাল একই কবি

গায় না একই গান ।

মালা বটে শুকিয়ে মরে,—

যে জন মালা পরে

সেও ত নয় অমর, তবে

দুঃখ কিসের তরে ?

থাক্ব না ভাই থাক্ব না কেউ,

থাক্বে না ভাই কিছু ।

সেই আনন্দে যাওরে চলে’

কালের পিছু পিছু ।

সবই হেথায় একটা কোথাও  
কর্ত্তে হয়রে শেষ,  
গান থামিলে তাইত কানে  
থাকে গানের রেশ ।  
কাট্লে বেলা সাধের খেলা  
সমাপ্ত হয় বলে’  
ভাবনাটি তা’র মধুর থাকে  
আকুল অশ্রুজলে ।  
জীবন অস্তে যায় চলি, তাই  
রংটি থাকে লেগে  
প্রিয় জনের মনের কোণে  
শরৎ-সন্ধ্যা-মেঘে ।

থাক্বে না ভাই থাক্বে না কেউ,  
থাক্বে না ভাই কিছু ।  
সেই আনন্দে যাওরে ধেয়ে  
কালের পিছু পিছু ।

ফুল তুলি তাই তাড়াতাড়ি  
পাছে ঝরেই পড়ে ।

সুখ নিয়ে তাই কাড়াকাড়ি’

পাছে সে যায় সরে’ ।

রক্ত নাচে দ্রুতচ্ছন্দে

চক্ষে তড়িৎ ভায়,

চুম্বনেরে কেড়ে নিতে

অধর ধেয়ে যায় ।

সমস্ত প্রাণ জাগেরে তাই

বক্ষ-দোলায় দোলে,

বাসনাতে ঢেউ উঠে যায়

মত্ত আকুল রোলে ।

থাকব না ভাই থাকব না কেউ,

থাকবে না ভাই কিছু ।

সেই আনন্দে চল্বে ছুটে

কালের পিছু পিছু ।

## ৪

কোনো জিনিষ চিন্বে যেরে,

প্রথম থেকে শেষ,

নেব’ যে সব বুঝে পড়ে’—

নাই সে সময় লেশ ।



## ফণিকা

জগৎটা যে জীর্ণ মায়া  
সেটা জানার আগে  
সকল স্বপ্ন কুড়িয়ে নিয়ে  
জীবন-রাত্রি ভাগে ।  
ছুটি আছে শুধু দু'দিন  
ভালবাসবার মত,  
কাজের জন্মে জীবন হ'লে  
দীর্ঘজীবন হ'ত ।

থাকব না ভাই থাকব না কেউ,  
থাকবে না ভাই কিছু ।  
সেই আনন্দে চলুরে ছুটে  
কালের পিছু পিছু ।

৫

আজ তোমাদের যেমন জান্‌চি  
তেমনি জান্‌তে জান্‌তে,  
ফুরায় যেন সকল জানা  
যাই জীবনের প্রাপ্তে ।  
এই যে নেশা লাগল চোখে  
এইটুকু যেই ছোটে,

অমনি যেন সময় আমার  
বাকি না রয় মোটে ।  
জ্ঞানের চক্ষু স্বর্গে গিয়ে  
যায় যদি যাক খুলি,  
মর্ন্তে যেন না ভেঙে যায়  
মিথ্যে মায়াগুলি ।

থাকব না ভাই থাকব না কেউ,  
থাকবে না ভাই কিছু ।  
সেই আনন্দে চল্বে ধেয়ে  
কালের পিছু পিছু ।

---

## বিলম্বিত

অনেক হ'ল দেৱী,  
আজো তবু দীৰ্ঘ পথের  
অন্ত নাহি হেরি ।

তখন ছিল দখিণ হাওয়া  
আধ-ঘুমো আধ-জাগা,  
তখন ছিল শৰ্ষে ক্ষেত্রে  
ফুলের আগুন লাগা ;  
তখন আমি মালা গেঁথে  
পদ্মপাতায় ঢেকে  
পথে বাহির হয়েছিলেম  
রুদ্ধ কুটীর থেকে ।

অনেক হ'ল দেৱী,  
আজো তবু দীৰ্ঘ পথের  
অন্ত নাহি হেরি ।

বসন্তের সে মালা  
আজ কি তেমন গন্ধ দেবে  
নবীন সুধা-ঢালা ?

আজকে বহে পূবে বাতাস,  
মেঘে আকশ জুড়ে,  
ধানের ক্ষেতে ঢেউ উঠেছে  
নব-নবাক্ষুরে ।  
হাওয়ায় হাওয়ায় নাইক রে হায়  
হান্কা সে হিল্লোল,  
নাই বাগানে হাস্তে গানে  
পাগল গণ্ডগোল ।

অনেক হল দেরী,  
আজো তবু দীর্ঘ পথের  
অন্ত নাহি হেরি ।

হ'ল কালের ভুল,  
পূবে হাওয়ায় ধরে' দিলেম  
দখিণ হাওয়ার ফুল ।

এখন এল অন্য সুরে  
অন্য গানের পালা,  
এখন গাঁথ অন্য ফুলে  
অন্য ছাঁদের মালা ।

## কণিকা

বাজ্জে মেঘের গুরু গুরু,  
বাদল ঝরঝর,  
সজলবায়ে কদম্ববন  
কাঁপচে থর থর ।

অনেক হ'ল দেৱী,  
আজো তবু দীর্ঘ পথের  
অন্ত নাহি হেঁরি ।

---

## মেঘমুক্ত

ভোর থেকে আজ বাদল ছুটেছে,

আয় গো আয় !

কাঁচা রোদখানি পড়েছে বনের

ভিজে পাতায় ।

ঝিকিঝিকি করি' কাঁপিতেছে বট,

ওগো ঘাটে আয়, নিয়ে আয় ঘট,

পথের দু'ধারে শাখে শাখে আজি

পাখীরা গায় ।

ভোর থেকে আজ বাদল ছুটেছে,

আয় গো আয় !

২

তোমাদের সেই ছায়া-ঘেরা দীঘি,

না আছে তল ;

কূলে কূলে তা'র ছেপে ছেপে আজি

উঠেছে জল ।

এ ঘাট হইতে ওঘাটে তাহার

কথা-বলাবলি নাহি চলে আর,

৪০১

একাকার হ'ল তীরে আর নীরে

তাল-তলায় ।

আজ ভোর হ'তে নাই গো বাদল,

আয় গো আয় !

৩

ঘাটে পঁইঠায় বসিবি বিরলে

ডুবায়ে গলা ;

হবে পুরাতন প্রাণের কথাটি

নূতন বলা ।

সে কথার সাথে রেখে রেখে মিল

থেকে থেকে ডেকে উঠিবে কোকিল,

কানাকানি করে' ভেসে যাবে মেঘ

আকাশ-গায় ।

আজ ভোর থেকে নাই গো বাদল,

আয় গো আয় !

৪

তপন-আতপে আতপ্ত হ'য়ে

উঠেছে বেলা ;

খঞ্জন দুটি আলম্ব্যভরে

ছেড়েছে খেলা ।

কলস পাকড়ি আঁকড়িয়া বুকে  
ভরা জলে তোরা ভেসে যাবি স্নেহে,  
তিমির-নিবিড় ঘনঘোর ঘূমে  
স্বপনপ্রায় ।

আজ ভোর থেকে নাই গো বাদল,  
আয় গো আয় !

৫

মেঘ ছুটে গেল নাই গো বাদল,  
আয় গো আয় !  
আজিকে সকালে শিথিল কোমল  
বহিছে বায় ।

পতঙ্গ যেন ছবিসম আঁকা  
শৈবাল পরে মেলে আছে পাখা,  
জলের কিনারে বসে' আছে বক  
গাছের ছায় ।

আজ ভোর থেকে নাই গো বাদল,  
আয় গো আয় !

---



## চিরায়মানা

যেমন আছ তেমনি এস

আর কোরো না সাজ !

বেণী না হয় এলিয়ে র'বে,

সিঁথে না হয় বাঁকা হবে,

নাই বা হ'ল পত্রলেখায়

সকল কারুকাজ ।

কাঁচল যদি শিথিল থাকে

নাইক তাহে লাজ ।

যেমন আছ তেমনি এস,

আর কোরো না সাজ !

এস দ্রুত চরণ দুটি

তৃণের পরে ফেলে ।

ভয় কোরো না অলঙ্কারাগ

মোছে যদি মুছিয়া যাক্,

নূপুর যদি খুলে পড়ে

না হয় রেখে এলে ।

খেদ কোরো না, মালা হ'তে  
মুক্তা খসে' গেলে ।  
এস দ্রুত চরণ দুটি  
তুণের পরে ফেলে ।

হের গো ঐ আঁধার হ'ল  
আকাশ ঢাকে মেঘে ।  
ওপার হ'তে দলে দলে  
বকের শ্রেণী উড়ে চলে,  
থেকে থেকে শূন্য মাঠে  
বাতাস ওঠে জেগে ।  
ঐরে গ্রামের গোষ্ঠ মুখে  
ধেনুরা ধায় বেগে ।  
হের গো ঐ আঁধার হ'ল  
আকাশ ঢাকে মেঘে ।

প্রদীপখানি নিবে যাবে,  
মিথ্যা কেন জ্বালো ?  
কে দেখতে পায় চোখের কাছে  
কাজল আছে কি না কাছে ?  
তরল তব সজল দিঠি  
মেঘের চেয়ে কালো ।

## কণিকা

আঁখির পাতা যেমন আছে  
এমনি থাকা ভালো ।  
কাজল দিতে প্রদীপখানি  
মিথ্যা কেন জ্বালো ?

এস হেসে সহজ বেশে  
আর কোরো না সাজ !  
গাঁথা যদি না হয় মালা,  
কৃতি তাহে নাই গো বালা,  
ভূষণ যদি না হয় সারা  
ভূষণে নাই কাজ ।  
মেঘে মগন পূর্ব গগন,  
বেলা নাই রে আজ ।  
এস হেসে সহজ বেশে  
নাই বা হ'ল সাজ ।

---

## আবির্ভাব

বহুদিন হ'ল কোন্ ফাল্গুনে  
    ছিঁখু আমি তব ভরসায় ;  
    এলে তুমি ঘন বরষায় ।  
আজি উত্তাল তুমুল চন্দ্রে,  
আজি নবঘন বিপুল মন্দ্রে  
আমার পরাণে যে গান বাজাবে  
    সে গান তোমার কর সায়  
    আজি জলভরা বরষায় ।

দূরে একদিন দেখেছিঁখু তব  
    কনকাঞ্চল আবরণ,  
    নব-চম্পক আভরণ  
কাছে এলে যবে হেরি অভিনব  
ঘোর ঘননীল গুণ্ঠন তব,  
চল চপলার চকিত চমকে  
    করিছে চরণ বিচরণ ।  
    কোথা চম্পক আভরণ !

সেদিন দেখেছি খণে খণে তুমি  
ছুঁয়ে ছুঁয়ে যেতে বনতল,—  
নুয়ে নুয়ে যেত ফুলদল ।  
শুনেছি নু যেন মৃদু রিনিরিনি  
ঋণ কটি ঘেরি' বাজে কিস্কিনী,  
পেয়েছি নু যেন ছায়াপথে যেতে  
তব নিশ্বাস-পরিমল,  
ছুঁয়ে যেতে যবে বনতল ।

আজি আসিয়াছ ভুবন ভরিয়া  
গগনে ছড়িয়ে এলোচুল ;  
চরণে জড়িয়ে বনফুল ।  
ঢেকেছে আমারে তোমার ছায়ায়,  
সঘন সজল বিশাল মায়ায়,  
আকুল করেছ শ্রাম সমারোহে  
হৃদয় সাগর-উপকূল ;  
চরণে জড়িয়ে বনফুল ।

ফাঙ্কনে আমি ফুলবনে বসে'  
গেঁথেছি নু যত ফুলহার  
সে নহে তোমার উপহার !

যেথা চলিয়াছ সেথা পিছে পিছে  
 স্তবগান তব আপনি ধ্বনিছে,  
 বাজাতে শেখেনি সে গানের সুর  
 এ ছোট বীণার স্ফীণ তার ;  
 এ নহে তোমার উপহার ।

কে জানিত সেই ক্ষণিকা মূর্তি  
 দূরে করি' দিবে বরষণ,  
 মিলাবে চপল দরশন ?  
 কে জানিত মোরে এত দিবে লাজ ?  
 তোমার যোগ্য করি নাই সাজ ।  
 বাসর ঘরের দুয়ারে করালে  
 পূজার অর্ঘ্য বিরচন ;  
 একি রূপে দিলে দরশন !

ক্ষমা কর তবে ক্ষমা কর মোর  
 আয়োজনহীন পরমাদ ;  
 ক্ষমা কর যত অপরাধ ।  
 এই ক্ষণিকের পাতার কুটীরে  
 প্রদীপ আলোকে এস ধীরে ধীরে

এই বেতসের বাঁশিতে পড়ুক  
তব নয়নের পরসাদ ;  
ক্ষমা কর যত অপরাধ ।

আস নাই তুমি নব ফাল্গুনে  
চিনু যবে তব ভরসায় ;  
এস এস ভরা বরষায় ।  
এস গো গগনে আঁচল লুটায়,  
এস গো সকল স্বপন ছুটায়,  
এ পরাণ ভরি যে গান বাজাবে  
সে গান তোমার কর সায় ;  
আজি জলভরা বরষায় ।

---

## কল্যাণী

বিরল তোমার ভবনখানি  
পুষ্পকানন মাঝে,  
হে কল্যাণী নিত্য আছ  
আপন গৃহকাজে ।  
বাইরে তোমার আশ্রমাথে  
স্নিগ্ধরবে কোকিল ডাকে,  
ঘরে শিশুর কলধ্বনি  
আকুল হর্ষভরে ।  
সর্ববশেষের গানটি আমার  
আছে তোমার তরে

২

প্রভাত আসে তোমার দ্বারে,  
পূজার সাজি ভরি' ;  
সন্ধ্যা আসে সন্ধ্যারতির  
বরণ-ডালা ধরি' ।  
সদা তোমার ঘরের মাঝে  
নীরব একটি শঙ্খ বাজে,



## কণিকা

কঁকণ দুটির মঙ্গল গীত  
উঠে মধুর স্বরে ।  
সর্বশেষের গানটি আমার  
আছে তোমার তরে ।

৩

রূপসীরা তোমার পায়ে  
রাখে পূজার থালা,  
বিদূষীরা তোমার গলায়  
পরায় বরমালা ।  
ভালে তোমার আছে লেখা  
পুণ্যধামের রশ্মিরেখা,  
সুধান্মিত্ব হৃদয়খানি  
হাসে চোখের পরে ।  
সর্বশেষের গানটি আমার  
আছে তোমার তরে

৪

তোমার নাহি শীত বসন্ত,  
জরা কি যৌবন ।  
সর্বস্বত্ব সর্বকালে  
তোমার সিংহাসন ।

নিভেনাক প্রদীপ তব,  
পুষ্প তোমার নিত্য নব,  
অচলাশ্রী তোমায় ঘেরি’

চির বিরাজ করে ।

সর্বশেষের গানটি আমার

আছে তোমার তরে ।

৫

নদীর মত এসেছিলে

গিরিশিখর হ’তে,

নদীর মত সাগরপানে

চল অবাধ স্রোতে ।

একটি গৃহে পড়চে লেখা

সেই প্রবাহের গভীর রেখা

দীপ্ত শিরে পুণ্যশীতল

তীর্থ সলিল ঝরে ।

সর্বশেষের গানটি আমার

আছে তোমার তরে ।

৬

তোমার শান্তি পান্থজনে

ডাকে গৃহের পানে,

তোমার প্রীতি ছিন্ন জীবন  
গেঁথে গেঁথে আনে ।  
আমার কাব্যকুঞ্জবনে  
কত অধীর সমীরণে  
কত যে ফুল, কত আকুল  
মুকুল খসে' পড়ে ।  
সর্ববশেষের শ্রেষ্ঠ যে গান  
আছে তোমার তরে ।

---

## অন্তরতম

আমি যে তোমায় জানি, সেত কেউ  
জানে না ।

তুমি মোর পানে চাও, সেত কেউ  
মানে না ।

মোর মুখে পেলে তোমার আভাস  
কত জনে কত করে পরিহাস,  
পাছে সে না পারি সহিতে  
নানা ছলে তাই ডাকি যে তোমায়,  
কেহ কিছু নারে কহিতে ।

তোমার পথ যে তুমি চিনায়েছ  
সে কথা বলিনে কাহারে ।

সবাই ঘুমালে জনহীন রাতে  
একা আসি তব দুয়ারে ।

স্তব্ধ তোমার উদার আলয়,  
বীণাটি বাজাতে মনে করি ভয়,  
চেয়ে থাকি শুধু নীরবে ।

চকিতে তোমার ছায়া দেখি যদি  
ফিরে আসি তবে গরবে ।

## ক্ষণিকা

প্রভাত না হ'তে কখন আবার  
গৃহকোণমাঝে আসিয়া,  
বাতায়নে বসে' বিহ্বল বীণা  
বিজনে বাজাই হাসিয়া ।  
পথ দিয়ে যেবা আসে যেবা যায়  
সহসা থমকি চমকিয়া চায়,  
মনে করে তা'রে ডেকেছি ।  
জানে না ত কেহ কত নাম দিয়ে  
এক নামখানি ঢেকেছি ।

ভোরের গোলাপ সে গানে সহসা  
সাড়া দেয় ফুলকাননে,  
ভোরের তারাটি সে গানে জাগিয়া  
চেয়ে দেখে মোর আননে ।  
সব সংসার কাছে আসে ঘিরে,  
প্রিয়জন স্নুখে ভাসে আঁখিনীরে,  
হাসি জেগে ওঠে ভবনে ।  
যে নামে যে ছলে বীণাটি বাজাই  
সাড়া পাই সারা ভুবনে ।

নিশীথে নিশীথে বিপুল প্রাসাদে  
তোমার মহলে মহলে,

হাজার হাজার সোনার প্রদীপ  
 জ্বলে অচপল অনলে ।  
 মোর দীপে জ্বলে তাহারি আলোক  
 পথ দিয়ে আসি হাসে কত লোক,  
 দূরে যেতে হয় পালায়ে,—  
 তাই ত সে শিখা ভবনশিখরে  
 পারিনে রাখিতে জ্বালায়ে ।

বলিনে ত কারে, সকালে বিকালে  
 তোমার পথের মাঝেতে,  
 বাঁশি বুকে ল'য়ে বিনা কাজে আসি  
 বেড়াই ছদ্ম-সাজেতে ।  
 যাহা মুখে আসে গাই সেই গান,  
 নানা রাগিণীতে দিয়ে নানা তান,  
 এক গান রাখি গোপনে ।  
 নানা মুখপানে আঁখি মেলি চাই,  
 তোমা পানে চাই স্বপনে ।

## সমাপ্তি

পথে যতদিন ছিনু, ততদিন  
অনেকের সনে দেখা ।  
সব শেষ হ'ল যেখানে সেথায়  
তুমি আর আমি একা ।  
নানা বসন্তে নানা বরষায়  
অনেক দিবসে অনেক নিশায়  
দেখেছি অনেক, সহেছি অনেক  
লিখেছি অনেক লেখা ;  
পথে যতদিন ছিনু, ততদিন  
অনেকের সনে দেখা ।

কখন্ যে পথ আপনি ফুরাল,  
সন্ধ্যা হ'ল যে কবে,  
পিছনে চাহিয়া দেখিনু, কখন্  
চলিয়া গিয়াছে সবে ।  
তোমার নীরব নিভৃত ভবনে  
জানি না কখন্ পশিনু কেমনে,  
অবাক্ রহিনু আপন প্রাণের  
নূতন গানের রবে ।  
কখন্ যে পথ আপনি ফুরাল,  
সন্ধ্যা হ'ল যে কবে ।

চিহ্ন কি আছে শ্রাস্ত নয়নে  
অশ্রুজলের রেখা ?  
বিপুল পথের বিবিধ কাহিনী  
আছে কি ললাটে লেখা ?  
রুধিয়া দিয়েছ তব বাতায়ন,  
বিছানো রয়েছে শীতল শয়ন,  
তোমার সন্ধ্যাপ্রদীপ-আলোকে  
তুমি আর আমি একা ।  
নয়নে আমার অশ্রুজলের  
চিহ্ন কি যায় দেখা ?

---





କମିକା



# কণিকা

-----

## যথার্থ আপন

কুস্মাণ্ডের মনে মনে বড় অভিমান  
বাঁশের মাচাটি তাঁর পুষ্পক বিমান ।  
ভুলেও মাটির পানে তাকায় না তাই,  
চন্দ্র সূর্য্য তারকারে করে ভাই ভাই ।  
নভঃচর বলে' তাঁর মনের বিশ্বাস,  
শূন্যপানে চেয়ে তাই ছাড়ে সে নিশ্বাস ।  
ভাবে শুধু মোটা এই বোঁটাখানা মোরে  
বেঁধেছে ধরার সাথে কুটুম্বিতা-ডোরে ।  
বোঁটা যদি কাটা পড়ে তখনি পলকে  
উড়ে যাব আপনার জ্যোতির্ম্ময় লোকে ।  
বোঁটা যবে কাটা গেল, বুঝিল সে খাঁটি,  
সূর্য্য তা'র কেহ নয়, সব তা'র মাটি ।

## শান্তির সীমা

কহিল কাঁসার ঘটি খন্ খন্ স্বর,  
কূপ, তুমি কেন খুড়া হ'লে না সাগর ?  
তাহা হ'লে অসঙ্কোচে মারিতাম ডুব,  
জল খেয়ে লইতাম পেট ভরে' খুব।—  
কূপ কহে, সত্য বটে ক্ষুদ্র আমি কূপ,  
সেই দুঃখে চিরদিন করে' আছি চূপ।  
কিন্তু বাপু তা'র লাগি তুমি কেন ভাব ?  
যতবার ইচ্ছা যায় ততবার নাব' ;—  
তুমি যত নিতে পার সব যদি নাও  
তবু আমি টিঁকে র'ব দিয়ে থুয়ে তাও।

---

## নূতন চাল

একদিন গরজিয়া কহিল মহিষ  
ঘোড়ার মতন মোর থাকিবে সহিস্।  
একেবারে ছাড়িয়াছি মর্হিষ-চলন,  
দুই বেলা চাই মোর দলন-মলন।  
এই ভাবে প্রতিদিন রজনী গোহালে,  
বিপরীত দাপাদাপি করে সে গোহালে।

প্রভু কহে—চাই বটে,—ভালো তাই হোক,  
পশ্চাতে রাখিল তা'র জন দশ লোক ।  
ছুটো দিন না যাইতে কেঁদে কয় মোষ,  
আর কাজ নেই প্রভু, হয়েছে সন্তোষ ।  
সহিসের হাত হ'তে দাও অব্যাহতি,  
দলন-মলনটার বাড়াবাড়ি অতি ।

---

## অকস্মার বিভ্রাট

লাঙ্গল কাঁদিয়ে বলে ছাড়ি দিয়ে গলা,—  
তুই কোথা হ'তে এলি ওরে ভাই ফলা ।  
যেদিন আমার সাথে তোরে দিল জুড়ি'  
সেই দিন হ'তে মোর এত ঘোরাঘুরি ।  
ফলা কহে—ভালো ভাই, আমি যাই খসে',  
দেখি তুমি কি আরামে থাক ঘরে বসে' ।  
ফলাখানা টুটে গেল, হলখানা তাই  
খুঁসি হ'য়ে পড়ে থাকে, কোনো কস্ম নাই ।  
চাষা বলে এ আপদ আর কেন রাখা,  
এরে আজ চালা করে' ধরাইব আখা ।  
হল বলে—ওরে ফলা, আয় ভাই ধেয়ে,  
খাটুনি যে ভালো ছিল জ্বলুনির চেয়ে !

---

## হার-জিৎ

ভীমরুলে মৌমাছিতে হ'ল রেষারেষি,  
দুজনায় মহাতর্ক শক্তি কার বেশি ।  
ভীমরুল কহে, আছে সহস্র প্রমাণ  
তোমার দংশন নহে আমার সমান ।  
মধুকর নিরন্তর ছল ছল আঁখি ;—  
বনদেবী কহে তা'রে কানে কানে ডাকি'—  
কেন বাছা নতশির,—এ কথা নিশ্চিত  
বিষে তুমি হার মান, মধুতে যে জিৎ ।

---

## ভার

টুনটুনি কহিলেন—রে ময়ূর, তোকে  
দেখে' করুণায় মোর জল আসে চোখে  
ময়ূর কহিল, বটে ! কেন, কহ শুনি,  
ওগো মহাশয় পক্ষী, ওগো টুনটুনি !  
টুনটুনি কহে—এ যে দেখিতে বেআড়া  
দেহ তব যত বড় পুচ্ছ তা'রে বাড়া ।

## কীটের বিচার

আমি দেখ লঘুভারে ফিরি দিনরাত,  
তোমার পশ্চাতে পুচ্ছ বিষম উৎপাত ।  
ময়ূর কহিল, শোক করিয়ে না মিছে,  
জেনো ভাই ভার থাকে গৌরবের পিছে

---

## কীটের বিচার

মহাভারতের মধ্যে ঢুকেছেন কীট,  
কেটেকুটে ফুঁড়েছেন এপিঠ-ওপিঠ ।  
পণ্ডিত খুলিয়া দেখি হস্ত হানে শিরে,  
বলে, ওরে কীট তুই একি করিলিরে ?  
তোর দস্তে শাণ দেয়, তোর পেট ভরে  
হেন খাণ্ড কত আছে ধূলির উপরে ।  
কীট বলে, হয়েছে কি, কেন এত রাগ  
ওর মধ্যে ছিল কিবা, শুধু কালো দাগ !  
আমি যেটা নাহি বুঝি সেটা জানি ছার  
আগাগোড়া কেটেকুটে করি ছারখার !

---



## যথাকর্তব্য

ছাত্তা বলে, ধিক্ ধিক্ মাথা মহাশয়,  
এ অন্যায় অবিচার আমারে না সয় ।  
তুমি যাবে হাটে বাটে দিব্য অকাতরে,  
রৌদ্র বৃষ্টি যত কিছু সব আমাপরে ।  
তুমি যদি ছাত্তা হ'তে কি করিতে দাদা ?  
—মাথা কয়, বুদ্ধিতাম মাথার মর্যাদা ।  
বুদ্ধিতাম তা'র গুণে পরিপূর্ণ ধরা,  
মোর একমাত্র গুণ তা'রে রক্ষা করা ।

---

## অসম্পূর্ণ সংবাদ

চকোরী ফুকরি' কাঁদে—ওগো পূর্ণ চাঁদ,  
পঙ্খিতের কথা শুনি গনি পরমাদ ।  
তুমি না কি এক দিন র'বে না ত্রিদিবে,  
মহাপ্রলয়ের কালে যাবে না কি নিবে !  
হায় হায় সুধাকর, হায় নিশাপতি,  
তা হইলে আমাদের কি হইবে গতি ?  
চাঁদ কহে, পঙ্খিতের ঘরে যাও প্রিয়া,  
তোমার কতটা আয়ু এস শুধাইয়া ।

---

## ঈর্ষার সন্দেহ

লেজ নড়ে, ছায়া তারি নড়িছে মুকুরে,  
কোনোমতে সেটা সহ্য করে না কুকুরে ।  
দাস যবে মনিবেরে দোলায় চামর  
কুকুর চটিয়া ভাবে এ কোন্ পামর ।  
গাছ যদি নড়ে' ওঠে, জলে ওঠে ঢেউ  
কুকুর বিষম রাগে করে ঘেউ ঘেউ ।  
সে নিশ্চয় বুঝিয়াছে ত্রিভুবন দোলে  
ঝাঁপ দিয়া উঠিবারে তারি প্রভুকোলে ।  
মনিবের পাতে ঝোল খাবে চুকুচুকু  
বিশ্বে শুধু নড়িবেক তারি লেজটুকু ।

---

## গুণের অধিকার ও দেহের অধিকার

অধিকার বেশি কার বনের উপর  
সেই তর্কে বেলা হ'ল, বাজিল দুপর ।  
বকুল কহিল, শুন বান্ধব সকল,  
গন্ধে আমি সর্ব বন করেছি দখল ।

পলাশ কহিল শূনি' মস্তক নাড়িয়া  
 বর্ণে আমি দিঘিদিব্ রেখেছি কাড়িয়া ।  
 গোলাপ রাঙিয়া উঠি' করিল জ্বাব  
 গন্ধে ও শোভায় বনে আমারি প্রভাব  
 কচু কহে গন্ধ শোভা নিয়ে খাও ধুয়ে  
 হেথা আমি অধিকার গাড়িয়াছি ভুঁয়ে ।  
 মাটির ভিতরে তা'র দখল প্রচুর,  
 প্রত্যক্ষ প্রমাণে জ্বিৎ হইল কচুর ।

---

## নিন্দুরের দুরাশা

মালা গাঁথিবার কালে ফুলের বোঁটায়  
 ছুঁচ নিয়ে মালাকর ছবেলা ফোটায় ।  
 ছুঁচ বলে মনোদুঃখে ওরে জুঁই দিদি,  
 হাজার হাজার ফুল প্রতিদিন বিঁধি,  
 কত গন্ধ কোমলতা যাই ফুঁড়ে ফুঁড়ে  
 কিছু তা'র নাহি পাই এত মাথা খুঁড়ে ।  
 বিধি পায়ে মাগি বর জুড়ি' কর ছুটি  
 ছুঁচ হ'য়ে না ফোটাই, ফুল হ'য়ে ফুটি ।—  
 জুঁই কহে নিশ্বসিয়া—আহা হোক তাই,  
 তোমার পূরুক বাঞ্ছা, আমি রক্ষা পাই ।

---

## বীথি

কুড়ালি কহিল, ভিক্ষা মাগি ওগো শাল,  
হাতল নাহিক, দাও একখানি ডাল ।  
ডাল নিয়ে হাতল প্রস্তুত হ'ল যেই,  
তা'র পরে ভিক্ষুকের চাওয়া-চিন্তা নেই ;—  
একেবারে গোড়া ঘেসে লাগাইল কোপ,  
শাল বেচারার হ'ল আদি অন্ত লোপ ।

---

## গুণজ্ঞ

আমি প্রজাপতি ফিরি রঙিন পাখায়  
কবি ত আমার পানে তবু না তাকায় ।  
বুঝিতে না পারি আমি বলত ভ্রমর,  
কোন্ গুণে কাব্যে তুমি হয়েছ অমর ?  
অলি কহে, আপনি সুন্দর তুমি বটে,  
সুন্দরের গুণ তব মুখে নাহি রটে ।  
আমি ভাই মধু খেয়ে গুণ গেয়ে ঘুরি,  
কবি আর ফুলের হৃদয় করি চুরি ।

---

## চুরি নিবারণ

সুও রাণী কহে, রাজা, দুও রাণীটার  
কত মৎলব আছে বুঝে ওঠা ভার ।  
গোয়ালঘরের কোণে দিলে ওরে বাসা,  
তবু দেখ অভাগীর মেটে নাই আশা ।  
তোমারে ভুলায়ে শুধু মুখের কথায়  
কালো গোরুটিরে তব ছুহে নিতে চায়  
রাজা বলে ঠিক্ ঠিক্, বিষম চাতুরী,  
এখন কি করে' ওর ঠেকাইব চুরী ?  
সুও বলে, একমাত্র রয়েছে ওষুধ,  
গোরুটা আমারে দাও, আমি খাই দুধ

---

## আত্মশত্রুতা

খোঁপা আর এলোচুলে বাধিল বচসা,  
জুটিল পাড়ার লোক দেখিতে তামসা ।  
খোঁপা কয়, এলোচুল, কি তোমার ছিরি !  
এলো কয়, খোঁপা তুমি রাখ বাবুগিরি ।  
খোঁপা কহে, টাক ধরে হই তবে খুসি ।  
—তুমি যেন কাটা পড়—এলো কয় রুষি'

কবি মাঝে পড়ি বলে—মনে ভেবে দেখ্  
 দুজনেই এক তোরা, দুজনেই এক ।  
 খোঁপা গেলে চুল যায়,—চূলে যদি টাক  
 খোঁপা তবে কোথা র'বে তব জয়টাক !

---

## দানরিক্ত

জলহারা মেঘখানি বরষার শেষে  
 পড়ে' আছে গগনের এক কোণ ঘেঁষে ।  
 বর্ষাপূর্ণ সরোবর তারি দশা দেখে'  
 সারাদিন ঝিকিঝিকি হাসে থেকে থেকে ।  
 কহে, ওটা লক্ষ্মীছাড়া, চালচুলাহীন,  
 নিজে'রে নিঃশেষ করি' কোথায় বিলীন ।  
 আমি দেখ চিরকাল থাকি জল-ভরা,  
 সারবান্, সুগম্ভীর, নাই নড়াচড়া ।  
 মেঘ কহে, ওরে বাপু, কোরো না গরব,  
 তোমার পূর্ণতা সে ত আমারি গৌরব ।

---

## স্পষ্টভাষী

বসন্ত এসেছে বনে, ফুল ওঠে ফুটি,  
দিনরাত্রি গাহে পিক' নাহি তা'র ছুটি ।  
কাক বলে, অণু কাজ নাহি পেলো খুঁজি'  
বসন্তের চাটুগান সুরু হ'ল বুঝি ।  
গান বন্ধ করি' পিক উঁকি মারি' কয়—  
তুমি কোথা হ'তে এলে কে গো মহাশয় ।—  
আমি কাক স্পষ্টবাদী—কাক ডাকি' বলে ।  
পিক কয়, তুমি ধন্য, নমি পদতলে ;  
স্পষ্টভাষা তব কণ্ঠে থাক্ বারো মাস,  
মোর থাক্ মিষ্টভাষা আর সত্যভাষ ।

---

## প্রতাপের তাপ

ভিজা কাঠ অশ্রুজলে ভাবে রাত্রিদিবা,  
জ্বলন্ত কাঠের আহা দাঁপ্ত তেজ কিবা ।  
অন্ধকার কোণে পড়ে' মরে ঈর্ষারোগে,  
বলে, আমি হেন জ্যোতি পাব কি সুযোগে  
জ্বলন্ত অঙ্গার বলে, কাঁচা কাঠ ওগো,  
চেফ্টাহীন বাসনায় বুখা তুমি ভোগো ।

আমরা পেয়েছি যাহা মরিয়া পুড়িয়া,  
তোমারি হাতে কি তাহা আসিবে উড়িয়া ?  
ভিজা কাঠ বলে—বাবা, কে নরে আগুনে,  
জ্বলন্ত অঙ্গার বলে—তবে থাক্ যুগে ।

---

## নম্রতা

কহিল কঞ্চির বেড়া,—ওগো পিতামহ  
বাঁশবন, নুয়ে কেন পড় অহরহ ?  
আমরা তোমারি বংশে ছোট ছোট ডাল,  
তবু মাথা উঁচু করে' থাকি চিরকাল ।  
বাঁশ কহে, ভেদ তাই ছোটতে বড়তে,  
নত হই, ছোট নাহি হই কোনো মতে ।

---

## ভিক্ষা ও উপার্জন

বস্তুমতী, কেন তুমি এতই কৃপণা,  
কত খোঁড়াখুঁড়ি করি পাই শস্যকণা ।  
দিতে যদি হয় দে মা প্রসন্ন সহাস,  
কেন এ মাথার ঘাম পায়েতে বহাস্ ?



## কণিকা

বিনা চাষে শস্য দিলে কি তাহাতে ক্ষতি ?  
শুনিয়া ঈষৎ হাসি কন্ বসুমতী—  
আমার গৌরব তাহে সামান্যই বাড়ে,  
তোমার গৌরব তাহে একেবারে ছাড়ে ।

---

## উচ্চের প্রয়োজন

কহিল মনের খেদে মাঠ সমতল  
হাট ভরে' দিই আমি কত শস্য ফল ।  
পর্বত দাঁড়ায়ে রন্ কি জানি কি কাজ,  
পাষাণের সিংহাসনে তিনি মহারাজ ।  
বিধাতার অবিচার কেন উঁচুনিচু  
সে কথা বুঝিতে আমি নাহি পারি কিছু ।  
গিরি কহে—সব হ'লে সমভূমিপারা  
নামিত কি ঝরণার স্তমজলধারা ।

---

## অচেতন মাহাত্ম্য

হে জলদ, এত জল ধরে' আছ বুকে  
তবু লঘু বেগে ধাও বাতাসের মুখে ।  
পোষণ করিছ শত ভীষণ বিজুলি  
তবু স্নিগ্ধ নীল রূপে নেত্র যায় ভুলি' ।

এ অসাধ্য সাধিতেছ অতি অনায়াসে  
কি করিয়া, সে রহস্ত কহি দাও দাসে ।  
গুরুগুরু গরজনে মেঘ কহে বাণী,—  
আশ্চর্য্য কি আছে ইথে আমি নাই জানি ।

---

## শান্তের ক্ষমা

নারদ কহিল আসি’—হে ধরণী দেবী,  
তব নিন্দা করে নর তব অন্ন সেবি’ ।  
বলে মাটি, বলে ধূলি, বলে জড় স্থূল,  
তোমাতে মলিন বলে অকৃতজ্ঞকূল ।  
বন্ধ কর অন্নজল, মুখ হোক চূর্ণ,  
ধূল্যমাটি কি জিনিষ বাছারা বুঝুন !  
ধরণী কহিল হাসি’—বালাই, বালাই,  
ওরা কি আমার তুল্য, শোধ লব তাই ?  
ওদের নিন্দায় মোরে লাগিবে না দাগ,  
ওরা যে মরিবে যদি আমি করি রাগ ।

---

## প্রকারভেদ

বাবলাশাখারে বলে আম্রশাখা, ভাই,  
উনানে পুড়িয়া তুমি কেন হও ছাই ?

## কণিকা

হায় হায় সখি তব ভাগ্য কি কঠোর !—  
বাবলার শাখা বলে—দুঃখ নাহি মোর !  
বাঁচিয়া সফল তুমি, ওগো চূতলতা,  
নিজেরে করিয়া ভস্ম মোর সফলতা !

---

## খেলেনা

ভাবে শিশু, বড় হ'লে শুধু যাবে কেনা  
বাজার উজাড় করি' সমস্ত খেলেনা ।  
বড় হ'লে খেলা যত ঢেলা বলি মানে,  
দুই হাত তুলে চায় ধনজনপানে ।  
আরো বড় হবে না কি যবে অবহেলে  
ধরার খেলার হাট হেসে যাবে ফেলে !

---

## এক-তরফা হিসাব

সাতাশ, হ'লে না কেন একশো-সাতাশ,  
খলিটি ভরিত, হাড়ে লাগিত বাতাস ।  
সাতাশ কহিল, তাহে টাকা হ'ত মেলা,  
কিস্তি কি করিতে বাপু বয়সের বেলা ?

---

## অল্প জানা ও বেশি জানা

ভূষিত গর্দভ গেল সরোবর তীরে,  
ছিছি কালো জল, বলি' চলি' এল ফিরে  
কহে জল—জল কালো জানে সব গাধা,  
যেজন অধিক জানে বলে জল শাদা !

---

## মূল

আগা বলে—আমি বড়, তুমি ছোট লোক !  
গোড়া হেসে বলে, ভাই ভালো তাই হোক ।  
তুমি উচ্ছে আছ বলে' গর্বের আছ ভোর,  
তোমাতে করেছি উচ্চ এই গর্বের মোর ।

---

## হাতে কলমে

বোলতা কহিল, এ যে ক্ষুদ্র মউচাক,  
এরি তরে মধুকর এত করে জাঁক ।—  
মধুকর কহে তা'রে—তুমি এস ভাই,  
আরো ক্ষুদ্র মউ-চাক রচ' দেখে যাই ।

---

## পর-বিচারে গৃহভেদ

আম্র কহে—একদিন, হে মাকাল ভাই,  
আছিঁনু বনের মধ্যে সমান সবাই ;—  
মানুষ লইয়া এল আপনার রুচি,  
মৃলাভেদ স্রু হল, সাম্য গেল ঘুচি' !

---

## গরজের আত্মীয়তা

কহিল ভিক্ষার ঝুলি টাকার থলিরে—  
আমরা কুটুম্ব দৌঁহে ভুলে গেলি কিরে ?  
থলি বলে, কুটুম্বিতা তুমিও ভুলিতে  
আমার যা আছে গেলে তোমার ঝুলিতে !

---

## সাম্যনীতি

কহিল ভিক্ষার ঝুলি, হে টাকার তোড়া,  
তোমাতে আমাতে ভাই ভেদ অতি খোড়া,—  
আদান প্রদান হোক !—তোড়া কহে রাগে  
সে খোড়া প্রভেদটুকু ঘুচে যাক আগে !

---

## কুটুস্থিতা বিচার

কেরোসিন্ শিখা বলে মাটির প্রদীপে—  
ভাই বলে' ডাক যদি দেব' গলা টিপে ।  
হেন কালে গগনেতে উঠিলেন চাঁদা,—  
কেরোসিন্ বলি' উঠে—এস মোর দাদা !

---

## উদার-চরিতানাম্

প্রাচীরের ছিদ্রে এক নামগোত্রহীন  
ফুটিয়াছে ছোট ফুল অতিশয় দীন ।  
ধিক্ ধিক্ করে তা'রে কাননে সবাই—  
সূর্য্য উঠি' বলে তা'রে—ভালো আছ ভাই ?

---

## জ্ঞানের দৃষ্টি ও প্রেমের সন্তোগ

“কালো তুমি”—শুনি' জাম কহে কানে কানে,—  
যে আমারে দেখে সেই কালো বলি' জানে,—  
কিন্তু সেইটুকু জেনে ফের কেন যাছু,  
যে আমারে খায় সেই জানে আমি স্বাছু ।

---

## সমালোচক

কানা-কড়ি পিঠ তুলি' কহে টাকাটিকে,—  
তুমি ষোলাআনা মাত্র, নহ পাঁচশিকে ।  
টাকা কয়, আমি তাই, মূল্য মোর যথা,—  
তোমার যা মূল্য তা'র ঢের বেশি কথা ।

---

## স্বদেশদ্রোষী

কেঁচো কয়— নীচ মাটি, কালো তা'র রূপ  
কবি তা'রে রাগ করে' বলে—চূপ চূপ ।  
তুমি যে মাটির কীট, খাও তারি রস,  
মাটির নিন্দায় বাড়ে তোমারি কি যশ ।

---

## ভক্তি ও অতিভক্তি

ভক্তি আসে রিক্তহস্ত প্রসন্নবদন,  
অতিভক্তি বলে, দেখি কি পাইলে ধন ।  
ভক্তি কয়—মনে পাই, না পারি দেখাতে ;—  
অতিভক্তি কয়, আমি পাই হাতে হাতে ।

---

## প্রবীণ ও নবীন

পাকাচুল মোর চেয়ে এত মান্য পায়,  
কাঁচাচুল সেই দুঃখে করে হায় হায় ।  
পাকাচুল বলে, মান সব ল'ও বাছা,  
আমারে কেবল তুমি করে' দাও কাঁচা ।

---

## আকাজ্জ

আম্র, তোর কি হইতে ইচ্ছা যায় বল !  
সে কহে হইতে ইক্ষু স্তমিষ্ট সরল ।—  
ইক্ষু, তোর কি হইতে মনে আছে সাধ !  
সে কহে হইতে আম্র সুগন্ধ সুস্বাদ ।

---

## কৃতীর প্রমাদ

টিকি মুণ্ডে চড়ি' উঠি' কহে ডগা নাড়ি'—  
হাত পা প্রত্যেক কাজে ভুল করে ভারি ।  
হাত পা কহিল হাসি', হে অভ্রান্ত চুল,  
কাজ করি, আমরা যে তাই করি ভুল ।

---



## অসম্ভব ভালো

যথাসাধ্য-ভালো বলে, ওগো আরো-ভালো,  
কোন্ স্বর্গপুরী তুমি করে' থাক আলো ?  
আরো-ভালো কেঁদে কহে, আমি থাকি হায়  
অকস্মাৎ দাস্তিকের অক্ষম ঈর্ষায় ।

---

## নদীর প্রতি খাল

খাল বলে, মোর লাগি মাথা-কোটাকুটি,  
নদীগুলি আপনি গড়ায়ে আসে ছুটি' ।  
তুমি খাল মহারাজ—কহে পারিষদ—  
তোমাতে যোগাতে জল আছে নদীনদ ।

---

## স্পর্ধা

হাউই কহিল, মোর কি সাহস, ভাই,  
তারকার মুখে আমি দিয়ে আসি ছাই ।  
কবি কহে—তা'র গায়ে লাগেনাক কিছু,  
সে ছাই ফিরিয়া আসে তোরি পিছু পিছু ।

---

## অযোগ্যের উপহাস

নক্ষত্র খসিল দেখি' দীপ মরে হেসে ।  
বলে, এত ধূমধাম, এই হ'ল শেষে !  
রাত্রি বলে, হেসে নাও, বলে' নাও স্থখে,  
যতক্ষণ তেলটুকু নাহি যায় চুকে ।

---

## প্রত্যক্ষ প্রমাণ

বজ্র কহে দূরে আমি থাকি যতক্ষণ  
আমার গর্জ্জনে বলে মেঘের গর্জ্জন,—  
বিদ্যুতের জ্যোতি বালি মোর জ্যোতি রটে,  
মাথায় পড়িলে তবে বলে—বজ্র বটে !

---

## পরের বিচার

নাক বলে, কান কভু ভ্রাণ নাহি করে,  
রয়েছে কুণ্ডল দুটো পরিবার তরে ।  
কান বলে, কারো কথা নাহি শুনে নাক,  
ঘুমোবার বেলা শুধু ছাড়ে হাঁকডাক ।

## গদ্য ও পদ্য

শর কহে আমি লঘু, গুরু তুমি গদা,  
তাই বুক ফুলাইয়া খাড়া আছ সদা ।  
কর তুমি মোর কাজ, তর্ক যাক্ চুকে,—  
মাথাভাঙা ছেড়ে দিয়ে বেঁধ গিয়ে বুকে ।

---

## ভক্তিবাজন

রথযাত্রা, লোকারণা, মহা ধূমধাম,  
ভক্তেরা লুটায় পথে করিছে প্রণাম ।  
পথ ভাবে আমি দেব, রথ ভাবে আমি,  
মূর্ত্তি ভাবে আমি দেব,—হাসে অন্তর্যামী

---

## ক্ষুদ্রের দন্ত

শৈবাল দীঘিরে বলে উচ্চ করি' শির—  
লিখে রেখো, এক ফোঁটা দিলেম শিশির

---

## সন্দেহের কারণ

কত বড় আমি !—কহে নকল হীরাটি ।  
তাই ত সন্দেহ করি নহ ঠিক খাঁটি ।

---

## নিরাপদ নীচতা

তুমি নীচে পাঁকে পড়ি ছড়াইছ পাঁক,  
যেজন উপরে আছে তারি ত বিপাক্ ।

---

## পরিচয়

দয়া বলে, কৈগো তুমি, মুখে নাই কথা ।  
অশ্রুভরা আঁখি বলে—আমি কৃতজ্ঞতা ।

---

## অকৃতজ্ঞ

ধ্বনিটিরে প্রতিধ্বনি সদা ব্যঙ্গ করে,—  
ধ্বনি কাছে ঋণী সে যে পাছে ধরা পড়ে ।

---

## অসাধ্য চেষ্টা

শক্তি যার নাই নিজে বড় হইবারে  
বড়কে করিতে ছোট তাই সে কি পারে !

---

## ভালো মন্দ

জাল কহে, পঙ্ক আমি উঠাব না আর ।  
জেলে কহে মাছ তবে পাওয়া হবে ভার

---

## একই পথ

দ্বার বন্ধ করে' দিয়ে ভ্রমটারে রুখি ।  
সত্য বলে, আমি তবে কোথা দিয়ে ঢুকি

---

## কাকঃ কাকঃ পিকঃ পিকঃ

দেহটা যেমনি করে' ঘোরাও যেখানে  
বাম হাত বামে থাকে ডান হাত ডানে ।

---

## গালির ভঙ্গী

লাঠি গালি দেয়, ছড়ি তুই সরু কাঠি ।  
ছড়ি তা'রে গালি দেয়—তুমি মোটা লাঠি ।

---

## কলঙ্ক ব্যবসায়ী

ধূলা, কর কলঙ্কিত সবার শুভ্রতা  
সেটা কি তোমারি নয় কলঙ্কের কথা ?

---

## প্রভেদ

অনুগ্রহ দুঃখ করে—দিই, নাহি পাই ।  
করুণা কহেন, আমি দিই নাহি চাই ।

---

## নিজের ও সাধারণের

চন্দ্র কহে, বিশ্বে আলো দিয়েছি ছড়ায়ে,  
কলঙ্ক যা আছে, তাহা আছে মোর গায়ে ।

---

## মাঝারির সতর্কতা

উত্তম নিশ্চিত্তে চলে অধমের সাথে ;—  
তিনিই মধ্যম যিনি চলেন তফাতে !

---

## শত্রুতাগৌরব

পেঁচা রাষ্ট্র করি দেয় পেলে কোনো ছুতা,  
জান না আমার সাথে সূর্য্যের শত্রুতা !

---

## উপলক্ষ্য

কাল বলে, আমি সৃষ্টি করি এই ভব।  
ঘড়ি বলে, তা হ'লে আমিও স্রষ্টা তব

---

## নূতন ও সনাতন

রাজা ভাবে নব নব আইনের ছলে  
ন্যায় সৃষ্টি করি আমি।—ন্যায় ধর্ম্ম বলে—  
আমি পুরাতন, মোর জন্ম কেবা ছায়।  
যা তব নূতন সৃষ্টি সে শুধু অন্যায়।

---

## দানের দান

মরু কহে—অধমেরে এত দাও জল,  
ফিরে কিছু দিব হেন কি আছে সম্বল ।  
মেঘ কহে—কিছু নাহি চাই, মরুভূমি,  
আমারে দানের স্তুত দান কর তুমি ।

---

## কুয়াশার আক্ষেপ

কুয়াশা, নিকটে থাকি, তাই হেলা মোরে,  
মেঘ ভায়া দূরে রন্ থাকেন গুমরে ।  
কবি কুয়াশারে কয়, শুধু তাই না কি ?  
মেঘ দেয় বৃষ্টিধারা, তুমি দাও ফাঁকি ।

---

## গ্রহণে ও দানে

কৃতাজ্জলি কর কহে, আমার বিনয়  
হে নিন্দুক, কেবল নেবার বেলা নয় ।  
নিই যবে নিই বটে অঞ্জলি জুড়িয়া,  
দিই যবে সেও দিই অঞ্জলি পূরিয়া ।

---



## অনাবশ্যকের আবশ্যকতা

কি জন্মে রয়েছে সিন্ধু তৃণ শস্যহীন  
অর্ধেক জগৎ জুড়ি নাচ নিশিদিন ।  
সিন্ধু কহে, অকস্মাৎ না রহিত যদি  
ধরণীর স্তন হ'তে কে টানিত নদী ?

---

## তন্নয়ৎ যন্ন দীয়তে

গন্ধ চলে' বায়, হায়, বন্ধ নাহি থাকে,  
ফুল তা'রে মাথা নাড়ি' ফিরে ফিরে ডাকে ।  
বায়ু বলে, যাহা গেল সেই গন্ধ তব,  
যেটুকু না দিবে তা'রে গন্ধ নাহি ক'ব ।

---

## নতি স্বীকার

তপন উদয়ে হবে মহিমার ক্ষয়  
তবু প্রভাতের চাঁদ শান্তমুখে কয়—  
অপেক্ষা করিয়া আছি অস্তসিন্ধুতীরে  
প্রণাম করিয়া যাব উদিত রবিরে ।

---

## পরস্পর

বাণী কহে, তোমাতে যখন দেখি, কাজ,  
আপনার শূন্যতায় বড় পাই লাজ ।  
কাজ শুনি কহে—অয়ি পরিপূর্ণা বাণী,  
নিজেরে তোমার কাছে দীন বলে' জানি

---

## বলের অপেক্ষা বলী

ধাইল প্রচণ্ড ঝড়, বাধাইল রণ,—  
কে শেষে হইল জয়ী ?—মৃদু সমীরণ

---

## কর্তব্য গ্রহণ

কে লইবে মোর কার্য্য ? কহে সন্ধ্যা রবি  
শুনিয়া জগৎ রহে নিরন্তর ছবি ।  
মাটির প্রদীপ ছিল, সে কহিল, স্বামী,  
আমার যেটুকু সাধ্য করিব তা আমি ।

---

## ধুবানি তন্ত্র নশ্তান্তি

রাত্রে যদি সূর্য্যশোকে ঝরে অশ্রুধারা  
সূর্য্য নাহি ফেরে শুধু ব্যর্থ হয় তারা ।

---

## মোহ

নদীর এপার কহে ছাড়িয়া নিশ্বাস,  
ওপারেতে সর্ব্বস্বত্ব আমার বিশ্বাস ।  
নদীর ওপার বসি' দীর্ঘশ্বাস ছাড়ে,  
কহে, যাহা কিছু স্তব্ধ সকলি ওপারে

---

## ফুল ও ফল

ফুল কহে ফুকরিয়া—ফল, ওরে ফল,  
কতদূরে রয়েছিস্ বল্ মোরে বল্ ।  
ফল কহে, মহাশয়, কেন হাঁকাহাঁকি,  
তোমারি অন্তরে আমি নিরন্তর থাকি ।

---

## অস্ফুট ও পরিস্ফুট

ঘটিজল বলে, ওগো মহা পারাবার  
আমি স্বচ্ছ সমুজ্জ্বল, তুমি অন্ধকার ।  
ক্ষুদ্র সত্য বলে মোর পরিস্কার কথা,  
মহাসত্য তোমার মহান্ নীরবতা ।

---

## প্রশ্নের অতীত

হে সমুদ্র, চিরকাল কি তোমার ভাষা ?  
সমুদ্র কহিল, মোর অনন্ত জিজ্ঞাসা ।  
কিসের স্তব্ধতা তব ওগো গিরিবর ?  
হিমাঙ্গি কহিল, মোর চির-নিরন্তর ।

---

## স্বাধীনতা

শর ভাবে ছুটে চলি, আমি ত স্বাধীন,—  
ধনুকটা একটাই বন্ধ চিরদিন ।  
ধনু হেসে বলে, শর, জান না সে কথা  
আমারি অধীন জেনো তব স্বাধীনতা ।

---

## বিফল নিন্দা

তোরে সবে নিন্দা করে গুণহীন ফুল ।  
শুনিয়া নীরবে হাসি' কহিল শিমুল—  
যতক্ষণ নিন্দা করে আমি চুপে চুপে  
ফুটে উঠি' আপনার পরিপূর্ণ রূপে ।

---

## মোহের আশঙ্কা

শিশু পুষ্প আঁখি মেলি হেরিল এ ধরা  
শ্যামল সুন্দর স্নিগ্ধ, গীতগন্ধ ভরা ;  
বিশ্ব জগতেরে ডাকি' কহিল, হে প্রিয়,  
আমি যতকাল থাকি তুমিও থাকিয়ো ।

---

## স্ততি নিন্দা

স্ততি নিন্দা বলে আসি'—গুণ মহাশয়,  
আমরা কে মিত্র তব ? গুণ 'শুনি' কয়—  
দুজনেই মিত্র তোরা শত্রু দুজনেই—  
তাই ভাবি শত্রু মিত্র কারে কাজ নেই ।

---

## পর ও আত্মীয়

ছাই বলে, শিখা মোর ভাই আপনার,  
ধোঁয়া বলে, আমি ত যমজ ভাই তা'র ।  
জোনাকি কহিল, মোর কুটুম্বিতা নাই,  
তোমাদের চেয়ে আমি বেশি তা'র ভাই ।

---

## আদি রহস্য

বাঁশি বলে, মোর কিছু নাহিক গৌরব,  
কেবল ফুয়ের জোরে মোর কলরব ।  
ফুঁ কহিল, আমি ফাঁকি, শুধু হাওয়াখানি,—  
যেজন বাজায় তা'রে কেহ নাহি জানি ।

---

## অদৃশ্য কারণ

রজনী গোপনে বনে ডালপালা ভরে'  
কুঁড়িগুলি ফুটাইয়া নিজে যায় সরে' ।  
ফুল জাগি' বলে, মোরা প্রভাতের ফুল,  
মুখর প্রভাত বলে নাহি তাহে ভুল ।

---

## সত্যের সংযম

স্বপ্ন কহে—আমি মুক্ত ! নিয়মের পিছে  
নাহি চলি !—সত্য কহে—তাই তুমি মিছে ।  
স্বপ্ন কয়, তুমি বদ্ধ অনন্ত শৃঙ্খলে ।  
সত্য কয় তাই মোরে সত্য সবে বলে ।

---

## সৌন্দর্যের সংযম

নর কহে—বাঁর মোরা যাহা ইচ্ছা করি ।  
নারী কহে জিহ্বা কাটি’—শুনে লাজে মরি ।  
পদে পদে বাধা তব—কহে তা’রে নর ।  
কবি কহে—তাই নারী হয়েছে স্তম্ভর ।

---

## মহতের দুঃখ

সূর্য্য দুঃখ করি’ বলে নিন্দা শুনি স্বীয়  
কি করিলে হব আমি সকলের প্রিয় ?  
বিধি কহে, ছাড় তবে এ সৌর সমাজ,  
দু’চারি জনেরে ল’য়ে কর ক্ষুদ্র কাজ ।

---

## অনুরাগ ও বৈরাগ্য

প্রেম কহে, হে বৈরাগ্য, তব ধর্ম মিছে ।  
প্রেম, তুমি মহামোহ—বৈরাগ্য কহিছে—  
আমি কহি ছাড়্ স্বার্থ, মুক্তিপথ ছাখ্ ।  
প্রেম কহে, তাহ'লে ত তুমি আমি এক ।

---

## বিরাম

বিরাম কাজেরই অঙ্গ এক সাথে গাঁথা,  
নয়নের অংশ যেন নয়নের পাতা ।

---

## জীবন

জন্ম মৃত্যু দৌহে মিলে জীবনের খেলা,  
যেমন চলার অঙ্গ পা-তোলা পা-ফেলা ।

---

## অপরিবর্তনীয়

এক যদি আর হয় কি ঘটবে তবে ?  
এখনো যা হ'য়ে থাকে, তখনো তা হবে  
তখন সকল দুঃখ ঘোচে যদি ভাই ?  
এখন যা সুখ আছে দুঃখ হবে তাই ।

---



## অপরিহরণীয়

মৃত্যু কহে, পুত্র নিব, চোর কহে, ধন,  
ভাগ্য কহে, সব নিব যা তোর আপন ।  
নিন্দুক কহিল, লব তব যশোভার,  
কবি কহে, কে লইবে আনন্দ আমার ?

---

## সুখদুঃখ

শ্রাবণের মোটা ফোঁটা বাজিল ঘুঁথীরে,—  
কহিল, মরিনু হায় কার মৃত্যুতীরে ।—  
বৃষ্টি কহে, শুভ আমি নামি মর্ত্যমাঝে,  
কারে সুখরূপে লাগে কারে দুঃখ বাজে ।

---

## চালক

অদৃষ্টেরে শুধালেম—চিরদিন পিছে  
অমোঘ নিষ্ঠুর বলে কে মোরে ঠেলিছে ?  
সে কহিল ফিরে দেখ !—দেখিলাম থামি'  
সন্মুখে ঠেলিছে মোরে পশ্চাতের আমি ।

---

## সত্যের আবিষ্কার

কহিলেন বসুন্ধরা,—দিনের আলোকে  
আমি ছাড়া আর কিছু পড়িত না চোখে  
রাত্রে আমি লুপ্ত যবে, শূন্যে দিল দেখা  
অনন্ত এ জগতের জ্যোতির্ময়ী লেখা ।

---

## সুসময়

শোকের বরষা দিন এসেছে আঁধারি’  
ও ভাই গৃহস্থ চাষী ছেড়ে দাও বাড়ি ।  
ভিজিয়া নরম হ’ল শুষ্ক মরু মন,  
এই বেলা শস্য তোর করে নে বপন ।

---

## ছলনা

সংসার, মোহিনী নারী, কহিল সে মোরে,  
তুমি আমি বাঁধা র’ব নিত্য প্রেমডোরে ।  
যখন ফুরায়ে গেল সব লেনা-দেনা,  
কহিল, ভেবেছ বুঝি উঠিতে হ’বে না ?

---

## সজ্ঞান আত্মবিসৰ্জন

বীর কহে, হে সংসার, হায় রে পৃথিবী,  
ভাবিস্নে মোরে কিছু ভুলাইয়া নিবি ।  
আমি যাহা দিই তাহা দিই জেনেশুনে,  
ফাঁকি দিয়ে যা পেতিস্ তা'র শতগুণে ।

---

## স্পৰ্শসত্য

সংসার কহিল, মোর নাহি কপটতা,  
জন্মমৃত্যু, সুখদুঃখ, সবই স্পৰ্শ কথা ।  
আমি নিত্য কহিতেছি যথাসত্য বাণী,  
তুমি নিত্য লইতেছ মিথ্যা অর্থখানি ।

---

## আরম্ভ ও শেষ

শেষ কহে, একদিন সব শেষ হবে,  
হে আরম্ভ, বুখা তব অহঙ্কার তবে ।  
আরম্ভ কহিল, ভাই, যেথা শেষ হয়  
সেইখানে পুনরায় আরম্ভ উদয় ।

---

## বস্ত্রহরণ

সংসারে জিনেছি বলে দুঃস্বপ্ন মরণ  
জীবন বসন তা'র করিছে হরণ ।  
যত বস্ত্রে টান দেয়, বিধাতার বরে  
বস্ত্র বাড়ি' চলে তত নিত্যকাল ধরে' ।

---

## চির-নবীনতা

দিনান্তের মুখ চুম্বি' রাত্রি ধীরে কর,—  
আমি মৃত্যু তো'র মাতা, নাহি মোরে ভয় !  
নব নব জন্মদানে পুরাতন দিন  
আমি তো'রে করে' দিই প্রত্যহ নবীন ।

---

## মৃত্যু

ওগো মৃত্যু, তুমি যদি হ'তে শূন্যময়  
মুহূর্ত্তে নিখিল তবে হ'য়ে যেত লয় ।  
তুমি পরিপূর্ণ রূপ,—তব বক্ষে কোলে  
জগৎ শিশুর মত নিত্যকাল দোলে ।

---

## শক্তির শক্তি

দিবসে চক্ষুর দস্ত দৃষ্টিশক্তি ল'য়ে—  
রাত্রি যেই হ'ল সেই অশ্রু যায় ব'য়ে ।  
আলোরে কহিল—আজ বুঝিয়াছি ঠেকি  
তোমারি প্রসাদ বলে তোমারেই দেখি ।

---

## ধ্রুব সত্য

আমি বিন্দুমাত্র আলো, মনে হয় তবু  
আমি শুধু আছি আর কিছু নাই কভু  
পলক পড়িলে দেখি আড়ালে আমার  
তুমি আছ হে অনাদি আদি অন্ধকার ।

---

## এক পরিণাম

শেফালি কহিল আমি ঝরলাম, তারা !  
তারা কহে, আমরা ত হ'ল কাজ সারা ;—  
ভরলাম রজনীর বিদায়ের ডালি  
আকাশের তারা আর বনের শেফালি ।

---





